आई.एस.एस.एन.- 0975-3206

अंक -31 (1) ; वर्ष 2025-26

जलचरी

भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान
(समतुल्य विश्वविद्यालय)
पंच मार्ग, ऑफ यारी रोड, वरसोवा, अंधेरी (प.) मुंबई - 400061

आई.एस.एस.एन.- 0975-3206

अंक -31 (1) ; वर्ष 2025-26

जलचरी

भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान

(समतुल्य विश्वविद्यालय)

पंच मार्ग, ऑफ यारी रोड, वरसोवा, अंधेरी (प.) मुंबई - 400061

आई.एस.एस.एन.-0975-3206

जलचरी
अंक – 31(1)
जनवरी-जून, 2025

प्रकाशक
डॉ. एन.पी. साहू
निदेशक/कुलपति

संपादक
श्री ए.के. जगदीशन
संयुक्त निदेशक (राजभाषा)

संपादक मण्डल
डॉ. नरेश एस. नागपुरे, प्रधान वैज्ञानिक
डॉ. एस.पी. शुक्ला, प्रधान वैज्ञानिक
डॉ. प्रेम कुमार, प्रधान वैज्ञानिक
डॉ. सौरव कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक
श्री प्रताप कुमार दास, मुख्य तकनीकी अधिकारी
श्रीमती रेखा नायर, मुख्य तकनीकी अधिकारी

मुख पृष्ठ
डॉ. दासारी भूमैय्या, मुख्य तकनीकी अधिकारी

डी.टी.पी.
श्री अजय बी. कदम

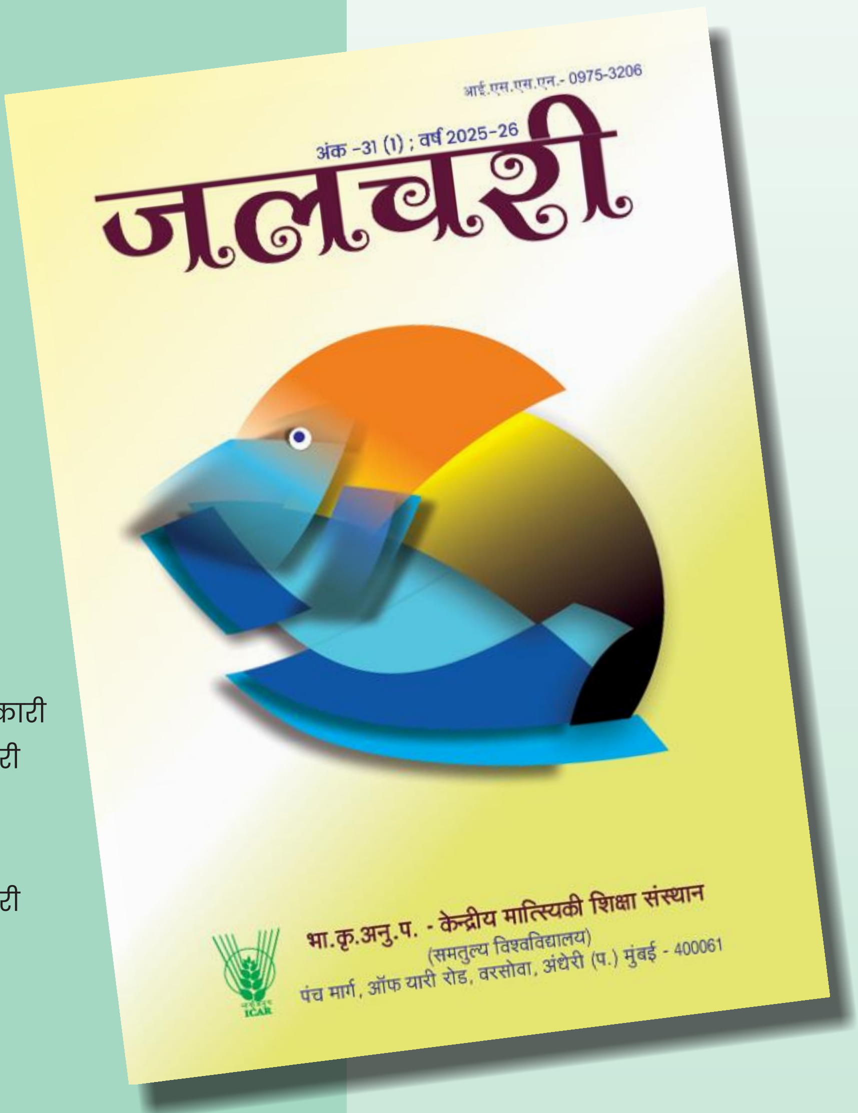

भा.कृ.अनु.प. – केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान
(समतुल्य विश्वविद्यालय)
पंच मार्ग, यारी रोड, वर्सोवा, मुंबई – 400061
दूरभाष : 022-26361446, ई-मेल: director@cife.edu.in
वेबसाइट: www.cife.edu.in

(इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में प्रकट विचार लेखकों के अपने हैं, जिससे संपादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।)

डॉ. एन.पी. साहू

निदेशक

निदेशक की कलम से

भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान देश में मात्स्यिकी विषय में शिक्षा एवं अनुसंधान के क्षेत्र में प्रसिद्ध एक समतुल्य विश्वविद्यालय है। इस संस्थान में मात्स्यिकी विषय में स्नातकोत्तर एवं पीएच.डी. की उपाधि प्रदान की जाती है। संस्थान द्वारा जलकृषि के विभिन्न पहलुओं, जिसमें मत्स्य-उत्पादन, स्वास्थ्य-प्रबंधन, मत्स्य-पोषण, प्रग्रहणोपरांत प्रौद्योगिकी आदि मुख्य विषयों पर शिक्षा एवं अनुसंधान संबंधी गतिविधियों का संचालन किया जाता है। इसके साथ ही मत्स्य किसानों और उद्यमियों के साथ भी संस्थान हमेशा संपर्क में रहता है और उनकी समस्याओं के समाधान को प्राथमिकता देता है। अनुसंधान एवं शिक्षा के क्षेत्रों में संस्थान की कई उपलब्धियाँ रही हैं।

संस्थान शिक्षा एवं अनुसंधान के साथ-साथ भारत सरकार की राजभाषा नीति का भी शत-प्रतिशत अनुपालन के लिए कटिबद्ध है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए संस्थान हमेशा प्रयासरत है। संस्थान द्वारा विकसित विभिन्न तकनीकियों से संबंधित जानकारी छात्रों, मत्स्य किसानों व मछुआरों और उद्यमियों को उनकी अपनी भाषा में प्रदान की जाती है। संस्थान द्वारा अधिकांश प्रशिक्षण कार्यक्रम मुख्यत: स्थानीय एवं हिंदी भाषा के माध्यम से ही आयोजित किए जाते हैं।

संस्थान की राजभाषा पत्रिका 'जलचरी' का नियमित प्रकाशन संस्थान द्वारा राजभाषा नीति के अनुपालन के लिए उठाए जा रहे ठोस कदमों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जलचरी के अद्यतन अंक को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। यह अत्यंत सराहनीय कार्य है कि 'जलचरी' के इस अंक में मात्स्यिकी से संबंधित उन्नत तकनीकी सहित, इसके विभिन्न पहलुओं पर वैज्ञानिकों और छात्रों का ज्ञानवर्धक लेख प्रकाशित किए गए हैं। इस पत्रिका के समय पर प्रकाशन के मैं पत्रिका के संपादक मण्डल के सदस्यों का शुक्रिया अदा करता हूँ और आशा करता हूँ कि भविष्य में भी 'जलचरी' का नियमित प्रकाशन किया जाता रहेगा।

अंत: में 'जलचरी' के इस अंक के प्रति पाठकों की प्रतिक्रिया का हमें इंतज़ार रहेगा।

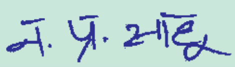

(एन.पी. साहू)

दिनांक : 30.06.2025

डॉ. नरेश एस. नागपुरे

डॉ. एस.पी. शुक्ला

डॉ. प्रेम कुमार

डॉ. सौरव कुमार

श्री ए.के. जगदीशन

श्री प्रताप कुमार दास

श्रीमती रेखा नायर

संपादकीय

भाषा सामाजिक-व्यवहार का एक अभिन्न अंग है। बिना भाषा के, चाहे वह किसी भी रूप में हो, मनुष्यों के विचारों का आदान-प्रदान संभव ही नहीं होता। भाषा की प्रगति समाज की प्रगति का द्योतक है। भाषा प्रगतिशील होती है और सामाजिक सरोकार से यह निरंतर विकास करती रहती है। राजभाषा भाषा का एक ऐसा रूप है, जो सरकार के कार्यकलापों के लिए उपयोग की जाती है। भारत सरकार की राजभाषा हिंदी होने के नाते सभी केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों का दायित्व है कि वे हिंदी में भी कार्य करें।

भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान ने राजभाषा हिंदी के सफल कार्यान्वियन में उत्तरोत्तर प्रगति की है। संस्थान द्वारा राजभाषा संबंधी नियमित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कार्य करने के साथ-साथ राजभाषा के प्रचार-प्रसार के लिए अन्य गतिविधियाँ भी सफलतापूर्वक संचालित की जाती हैं, जिनमें वैज्ञानिक विषयों पर हिंदी में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ, मात्स्यिकी के विभिन्न विषयों पर हिंदी में प्रकाशन निकालना आदि भी शामिल हैं। इनमें संस्थान की राजभाषा पत्रिका 'जलचरी' का नियमित प्रकाशन महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

' जलचरी' पत्रिका का नवीन अंक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यंत खुशी हो रही है। 'जलचरी' के इस अंक में मात्स्यिकी क्षेत्र के उभरती विषयों से संबंधित लेख शामिल किए गए हैं। इसमें मात्स्यिकी के विभिन्न क्षेत्रों पर जलवायु-परिवर्तन के प्रभाव, मछली का स्वास्थ्य-प्रबंधन, बयोचार, अपशिष्ट प्रबंधन तथा मात्स्यिकी तकनीकी जैसे विषयों पर लिखे गए लेखों को शामिल किया गया है। जिन वैज्ञानोंकों और छात्रों ने लेख प्रदान करते हुए 'जलचरी' के प्रकाशन में बहुमूल्य सहयोग किया हैं, संपादक मण्डल उन सब को इस अवसर पर धन्यवाद देते हैं। हमें आशा है कि इस अंक में प्रकाशित लेखों से मात्स्यिकी क्षेत्र से जुड़े शोधार्थियों, उद्यमियों, किसानों, मछुआरों और अन्य सझेदारों के बहुत ही लाभकारी होंगे।

जलचरी के इस अंक के प्रकाशन के लिए समय-समय पर मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए हम संस्थान के निदेशक डॉ. एन.पी. साहू की तहे दिल से शुक्रिया अदा करते हैं। डॉ. दासारी भूमैय्या ने इस पत्रिका के लिए अत्यंत खूबसूरत मुखपृष्ठ से सजाया है और श्री अजय कदम ने सचिवीय सहायता प्रदान की है, उनको भी धन्यवाद। सुधी पाठकों से अनुरोध है कि इस पत्रिका के प्रति अपने विचार से हमें ज़रूर अवगत कराएँ ताकि इसके आगामी अंकों अधिक समृद्ध बनाया जा सकें।

दिनांक : 30.06.2025

संपादक मण्डल

विषय सूची

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
	निदेशक की कलम से	i
	संपादकीय	ii
1.	**जलवायु परिवर्तन का भारतीय मात्स्यिकी पर प्रभाव : क्षेत्रीय भिन्नताएँ और उत्पादकता चुनौतियाँ** *विनोद कुमार यादव, चांदनी प्रकाशभाई दवे, महेश शर्मा, विद्याश्री भारती और अर्पिता शर्मा*	1-3
2.	**मत्स्य पालन प्रौद्योगिकी : विकास एवं अगीकरण** *अंकुश कांबले, अंशु सुरीन, निशांत कुमार, शिवाजी अरगड़े*	4-8
3.	**जल कृषि में स्वास्थ्य प्रबंधन** *डॉ. अरुण शर्मा एवं टी.आई. चानू*	9-10
4.	**जलवायु परिवर्तन और इसका वैश्विक मत्स्य पालन क्षेत्र पर व्यापक प्रभाव** *प्रगति पुष्प*	11-12
5.	**जलवायु परिवर्तन एवं खाद्य सुरक्षा : सामाजिक आर्थिक-जोखिम सूचकांक का महत्व एवं उपयोग** *चांदनी प्रकाशभाई दवे, महेश शर्मा, विनोद कुमार यादव, विद्या श्री भारती और अर्पिता शर्मा*	13-18
6.	**जैविक उपचार – जलकृषि में इसका अनुप्रयोग** *केन्युम लोलेन, सुखम मुनिलकुमार, कपिल सुखधाने, सत्य प्रकाश*	19-23
7.	**अलंकारी मछली के पोषक तत्वों की आवश्यकता और खाद्य मिश्रण** *केदार नाथ मोहंता, सिकेंद्र कुमार, मनीष जयंत, शामना एन., साईप्रसाद भुसारे और समीक्षा मिश्रा*	24-26
8.	**भारत में कार्प मछलियों के आनुवांशिक सुधार के लिए चयनात्मक प्रजनन** *कृति कुमारी, किरण रसाल, अंगोम लेनिन सिंह, मुजाहिदखान ए पठान, हर्षवर्तिनी एम.*	27-29
9.	**ब्लू कार्बन क्रेडिट: जलवायु परिवर्तन के लिए एक प्रकृति-आधारित समाधान** *रंजना चौधरी विनोद कुमार यादव एवं विद्या श्री भारती*	30-31
10.	**शाहपुरा झील, भोपाल, मध्य प्रदेश में सीवेज-फेड-मत्स्य पालन की स्थिति** *नीलम नर्रे, सुमन मन्ना, पूजा रोड़गे, स्वेता प्रधान, हंजाबम मन्दाकिनी देवी*	32-37

11. **पर्यावरणीय स्वास्थ्य और वैश्विक खाद्य सुरक्षा के लिए एक माइक्रोप्लास्टिक उभरता हुआ ख़तरा** 38-39

श्याम दत्ता वाघमारे

12. **आर्द्रभूमि संरक्षण और इसका महत्व** 40-41

भारती साहू, राजेश कुमार, विपुल सिंह बड़गुजर

13. **ट्रॉलिंग द्वारा मछली पकड़ना और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र पर इसका नकारात्मक प्रभाव** 42-43

शीतल कनुभाई भरड़ा, करणकुमार रामटेके, मुकेशकुमार भेंडारकर, राजेश कुमार, मुज़ाम्मल हक, और साहिना अख्तर

14. **पर्यावरणीय डीएनए : जैव विविधता की खोज का नया युग** 44-45

संजीव कुमार सिंह, मुकुंदा गोस्वामी, बी.के. दास, म. यशवंत बाबू, निदर्शन एन.सी.

15. **भारत में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ाने के लिए ब्लू इकोनॉमी (नीली अर्थव्यवस्था) की क्षमता** 46-47

मुजाम्मल हक, आशा लांडगे, करणकुमार रामटेके, केशम गेनिता और भरदा शीतल कनुभाई

16. **कॉमेट परीक्षण : पर्यावरणीय आनुवांशिक विषाक्त रसायन से जलीय जीवो में होने वाले कुप्रभाव की निगरानी हेतु उपयोगी तकनीक** 48-50

जयश्री एस. शेलके, कृतिकुमारी, हर्षवर्धिनी एम, नरेश एस. नागपुरे

17. **महाराष्ट्र का तटीय जल: एक अनूठी विरासत और जैव विविधता का केंद्र** 51-53

कैशम गीनिता, राजेशकुमार, मुज़म्मिल हक़ और करणकुमार रामटेके

18. **किसान क्रेडिट कार्ड: मत्स्यपालन और जलीय कृषि क्षेत्र में वित्तीय सशक्तिकरण** 54-55

अक्षता थवई, शिवाजी अरगडे एवन आर. परमशिवम

19. **6पीपीडी-वाहन टायर के घटक : जलीय कृषि और मत्स्य पालन के लिए बढ़ता ख़तरा** 56

साहिना अख्तरऔर करणकुमार रामटेके

20. **डोलजाल : मछली पकड़ने की परंपरा और चुनौतियाँ** 57-58

राजेश कुमार, करनकुमार रामटेके, अबुथागीर इबुराहीम, दयाल देवदास, भारती साहू, विपुल सिंह बड़गुजर

21. **बिहार में मखाना की खेती: स्वास्थ्य और समृद्धि का अटूट सेतु** 59-60

रवि शंकर कुमार, सबा नबी , तेंजी पेम भूटिया

22. **महाराष्ट्र के उज्जनी जलाशय में भूमि उपयोग गतिकी का कार्बन पृथक्करण एवं मत्स्य प्रावधान सेवाओं पर प्रभाव का आकलन** 61-65

महेश शर्मा, विनोद कुमार यादव, चांदनी प्रकाशभाई दवे, लिटन पॉल,मोहम्मद मेहारूफ़,और विद्या श्री भारती

23. **मत्स्य पालन में वृद्धि एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में न्यूट्रास्यूटिकल्स का उपयोग** 66-68

लीसा प्रियदर्शनी, दिलीप कुमार सिंह, मंदाकिनी देवी हंजाबम, सोनालिका साहू, धालोंगसाई रियांग, सुजाता साहू, सुमन मन्ना एवं तापस कुमार घोषाल

24. **हमारी मछलियाँ आहार क्यों नहीं खा रही हैं? इसके कारण एवं निदान** 69-71
दिलीप कुमार सिंह, सुजाता साहू, सुमन मन्ना, गौरांग बिस्वास, तापस कुमार घोषाल एवं शिवाजी डी. अरगडे

25. **राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म: अंकीय नवाचार के माध्यम से भारत के मत्स्य क्षेत्र का रूपांतरण** 72-74
महेश शर्मा, डॉ. स्वदेश प्रकाश एवं सतेन्द्र सिंह

26. **जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में तापीय तनाव : कारण, परिणाम और नियंत्रण उपाय** 75-77
विद्या श्री भारती, अंकिता नामदेव, शमिका शांताराम सावंत, तावो कारा, विनोद कुमार यादव

27. **अपशिष्ट जल उपचार के लिए संशोधित बायोचार: एक कदम हरित भविष्य की ओर** 78-81
शमिका शांताराम सावंत, विद्या श्री भारती, सत्य प्रकाश शुक्ला, विनोद कुमार यादव, दीपाली भण्डारी

28. **इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट एवं जलवायु परिवर्तन : भारतीय परिप्रेक्ष्य में चुनौतियाँ, प्रभाव एवं सतत समाधान** 82-85
ऋषिकेश कदम, डॉ. सौरव कुमार, के नागेन्द्रसाई, रानी सामलिन

29. **जलीय कृषि में प्रतिजैविक प्रतिरोध: चुनौतियाँ, प्रभाव एवं प्रबंधन** 86-88
सतेन्द्र सिंह, डॉ. मेघा कदम बेडेकर एवं महेश शर्मा

30. **राजभाषा गतिविधियाँ** 89-91

जलवायु परिवर्तन का भारतीय मात्स्यिकी पर प्रभाव : क्षेत्रीय भिन्नताएँ और उत्पादकता चुनौतियाँ

विनोद कुमार यादव, चांदनी प्रकाशभाई दवे, महेश शर्मा, विद्याश्री भारती और अर्पिता शर्मा

परिचय

विश्व स्तर पर जलवायु परिवर्तन आज एक सर्वमान्य और अत्यंत प्रासंगिक विषय बन चुका है। वर्तमान समय में यह वैश्विक समाज के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती के रूप में उभर रहा है, जिसके प्रभाव प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र, मानव समाज और वैश्विक अर्थव्यवस्था तक गहराई से महसूस किए जा रहे हैं। इन प्रभावों का सबसे गंभीर असर उन क्षेत्रों पर पड़ा है जो जल पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रत्यक्ष रूप से निर्भर हैं, जैसे कि जल कृषि और मत्स्य पालन।

प्राकृतिक मत्स्य पालन और जलीय कृषि के माध्यम से होने वाला मत्स्य उत्पादन वैश्विक खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और विकासशील देशों में पोषण और आजीविका का प्रमुख स्रोत प्रदान करता है। हालाँकि, जलवायु परिवर्तन की तेज़ गति इस क्षेत्र की स्थिरता को कमजोर कर रही है और इसके भविष्य के लिए गंभीर खतरे पैदा कर रही है।

पानी के बढ़ते तापमान, जल गुणवत्ता में बदलाव और नए रोगजनकों के उभरने के कारण मत्स्य पालन गंभीर खतरों का सामना कर रही है, जिससे उत्पादन लागत में वृद्धि हो रही है।इन व्यवधानों के संयुक्त प्रभावों ने वैश्विक मत्स्य आपूर्ति श्रृंखला को गंभीर संकट में डाल दिया है। इस स्थिति में, मत्स्य पालन और जलीय कृषि प्रणालियों में सहनशीलता बढ़ाने के लिए अनुकूलन रणनीतियाँ अपनाने की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है।

यह अध्याय जलवायु परिवर्तन के मत्स्य उत्पादन पर पड़ने वाले बहुआयामी प्रभावों का विश्लेषण करेगा। साथ ही, हालिया शोध और अध्ययन के माध्यम से इस जटिल मुद्दे की गहरी समझ प्रदान करेगा। यह मत्स्य प्रबंधन में पारिस्थितिक, आर्थिक और सामाजिक आयामों की आपसी निर्भरता को उजागर करेगा और जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों के समाधान के लिए नवाचारी और सतत उपायों की आवश्यकता पर बल देगा।

जलवायु परिवर्तन का अर्थ

जलवायु परिवर्तन का तात्पर्यता पमान, वर्षा, वायुप्रवाहके स्वरूप और अन्य वायुमंडलीय स्थितियों में दीर्घकालिक बदलावों से है, जो मुख्य रूप से मानव गतिविधियों द्वारा प्रेरित होते हैं । वायुमंडल में ग्रीन हाउस गैसों, जैसे कार्बनडाइऑक्साइड, मीथेन, और नाइट्रस ऑक्साइड, की बढ़ती सांद्रता इन परिवर्तनों का प्रमुख कारण है । ये गैसें ऊष्मा को रोककर तापमान वृद्धि करती हैं । जिससे वैश्विक तापवृद्धि और संबंधित जलवायु परिवर्तनों काअनुभव होता है।

हालांकि पृथ्वी के इतिहास में जलवायु में प्राकृतिक रूप से परिवर्तन होते रहे हैं, लेकिन हाल के परिवर्तनों की तीव्रता और पैमाना अभूतपूर्व है और मुख्य रूप से मानव-जनितकारकों, जैसे वनों की कटाई, औद्योगिक उत्सर्जन और अस्थिर कृषि पद्धतियों, के कारण हो रहे हैं।

मत्स्य पालन पर जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभाव

जलवायु परिवर्तन मत्स्य पालन पर भौतिक, पारिस्थितिक और सामाजिक-आर्थिक मार्गों के माध्यम से गहरा प्रभाव डालता है। ये प्रभाव पर्यावरणीय परिस्थितियों में परिवर्तन, मछली भंडार की गतिशीलता, और जलीय जीवन का समर्थन करने वाले पारिस्थितिक तंत्रों में बदलाव के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होते हैं। नीचे इन प्रभावों का वर्गीकरण भौतिक परिवर्तनों, प्रक्रियाओं और मत्स्य पालन पर उनके प्रभावों के आधार पर दिया गयाहै।

भौतिक पर्यावरण (अप्रत्यक्ष पारिस्थितिक प्रभाव)

➢ **महासागरीय अम्लीकरण और बढ़ता हुआ कार्बनडाइ ऑक्साइड–** महासागरीय अम्लीकरण कैल्सिफाइंग जीवों, जैसे कि मोलस्क, क्रस्टेशियन और मूंगे, को प्रभावित करता है, जिससे कैल्शियम कार्बोनेट पर निर्भर समुद्री प्रजातियों की उत्पादकता घट सकती है । इन मुख्य प्रजातियोंकी कमी से पूरे पारिस्थितिकी तंत्र में नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, जिससे मत्स्य पालन की उपज कम हो जाती है।

➢ **ऊपरी महासागर परतों का गर्म होना –** गर्म पानी के कारण प्रजातियों के वितरण में बदलाव होता है, जहां गर्म पानी की प्रजातियां ठंडे पानी की प्रजातियों को प्रतिस्थापित करती हैं। उष्ण कटिबंधीय जलक्षेत्रों में प्रजातियों की विविधता कम हो रही है, जबकि ध्रुवीय और समशीतोष्ण क्षेत्रों में प्लवक (प्लैंकटन), मछली, और अन्य समुद्री जीवन के प्रवास में वृद्धि देखी जा रही है ।प्लवक प्रस्फुटन और मछली आबादी के बीच समय में असंगति भोजन श्रृंखला को बाधित करती है और जैव विविधता घटातीहै।

➢ **समुद्र स्तर में वृद्धि –** मैंग्रोव और मूंगे की चट्टानों जैसे तटीय आवास, जो मछलियों के प्रजनन और पोषण के स्थल के रूप में कार्यकरते हैं, खतरे में हैं।इन आवासों के क्षरण से तटीय मत्स्यपालन की उत्पादकता और उपज कम हो सकती है।

मत्स्य प्रभाव (अप्रत्यक्ष पारिस्थितिक प्रभाव)

➢ **बढ़ते जल तापमान और परिवर्तित जल धाराएं –** प्रजनन और प्रवास न समय में बदलाव से प्रजनन चक्र और मछलियों की संख्या बाधित होती है। आक्रामक प्रजातियों, बीमारियों और हानिकारक शैवाल प्रस्फुटन की घटनाओं में वृद्धि से समुद्री और मीठे पानी की प्रणालियों में उत्पादकता घटती है।

➢ **मछलियों की भर्ती और किशोर मछलियों की संख्या –** पर्यावरणीय परिवर्तनों के कारण भर्ती प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जिससे मछली आबादी और उपज में दीर्घकालिक गिरावट आती है।

पारिस्थितिक तंत्र (अप्रत्यक्ष पारिस्थितिक प्रभाव)

➢ **घटते जल प्रवाह और बढ़ती सूखा –** झीलों के स्तर और नदियों के प्रवाह में बदलाव से आंतरिक मत्स्य पालन की उत्पादकता घटती है।

जल संकट मछली के प्रजनन को और सीमित करता है और मछली भंडार की पुनः पूर्ति को कम करता है।

➢ **एलनीनो-सा उदर्न ऑस्सीलेशन घटनाएँ –** बदलते अपवेलिंग क्षेत्र और मूंगे की चट्टानों का सफेद होना समुद्री मछलियों के वितरण और मूंगे की चट्टान से संबंधित मत्स्य पालन को प्रभावित करता है, जिससे समग्र उत्पादकता में कमी आती है।

संरचनात्मक नुकसान और मत्स्यपालन संचालन पर प्रभाव (प्रत्यक्ष प्रभाव)

➢ **समुद्र स्तर में वृद्धि और तूफानों की आवृत्ति में वृद्धि –**तटीय संरचनाओं, जैसे बंदरगाहों और घरों, को तूफानों के कारण अधिक नुकसान होने का खतरा है। मछली पालन और जलकृषि संचालन (जैसे समुद्री पिंजरे और तटीय तालाब) को नुकसान होने की संभावना बढ़ती है, जिससे बीमा लागत में वृद्धि होती है और लाभ में कमी आती है।प्रतिकूल मौसम के कारण मछली पकड़ने के दिनों में कमी आती है और मछुआरों के लिए जोखिम बढ़ जाता है, विशेष रूप से उन मछुआरों के लिए जिनके पास सीमित संसाधन होते हैं।

आंतरिक मछली पालन संचालन और आजीविका (अप्रत्यक्ष सामाजिक-आर्थिक प्रभाव)

➢ **वर्षा के स्वरूप में बदलाव –** वर्षा में कमी से एकीकृत कृषि, मछली पालन और जलकृषि प्रणालियों के लिए अवसर घट जाते हैं। ग्रामीण आजीविकाओं में विविधता कम हो जाती है, जिससे गैर-कृषि आयस्रोतों पर निर्भरता बढ़ती है।

➢ **अधिक सूखा और बाढ़ –** उत्पादक संपत्तियाँ, जैसे मछली तालाब और चावल के खेत, अधिक क्षतिग्रस्त हो रही हैं, जिससे ग्रामीण समुदायों को विस्थापित किया जाता है। विस्थापित आबादी का तटीय क्षेत्रों में प्रवाह तटीय मत्स्यपालन पर पहले से मौजूद दबाव को बढ़ा देता है।

भारत में जलवायु परिवर्तन का मत्स्य पालन पर प्रभाव – विभिन्नअध्ययन

1. भारत के उत्तर- पूर्वी तटीय क्षेत्रों में समुद्री मत्स्यपालन उत्पादकता पर जलवायु परिवर्तन और प्रबंधन नीतियों के प्रभाव

यह अध्ययन भारत के उत्तर-पूर्वी तट के दो प्रमुख डेल्टाई क्षेत्रों, बंगाल और महानदी डेल्टा पर केंद्रित है, जहाँ समुद्री मछली उत्पादन और सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों में बदलाव को दीर्घकालिक पर्यावरणीय परिवर्तनों (समुद्र की सतह का तापमान और प्राथमिक उत्पादकता) के तहत 21वीं सदी के अंत तक मॉडल किया गया। अध्ययन के प्रमुख निष्कर्षों में तापमान में वृद्धि का मछली उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ने की संभावना जताई गई है, जिससे 21वीं सदी के अंत तक मात्स्यशिकारमही में लगभग 5% की गिरावट का अनुमान है। कुछ प्रजातियाँ, जैसे बंबई डक, भारतीय मैकेरल, और थ्रेडफिन ब्रीम, स्थायी मात्स्यशिकारमही परिदृश्यों के तहत जैवमास में वृद्धि दिखाती हैं, लेकिन अधिक मात्स्यशिकारमही परिदृश्यों में इन प्रजातियों के पकड़ में कमी हो सकती है। वहीं दूसरी ओर, मैकेरल टूना, भारतीय तेल सरडिन और हिल्सा जैसी प्रजातियाँ संभावित पकड़ में गिरावट का सामना कर सकती हैं, भले ही वे स्थायी मात्स्यशिकारमही के परिदृश्य में हों। सामाजिक-आर्थिक प्रभावों की बात करें तो, 2050 तक उपभोग में 0.67% की वृद्धि का अनुमान है, लेकिन प्रति व्यक्ति जीडीपी में 1.7 बिलियन अमेरिकी डॉलर का नुकसान होने का भी अनुमान है, जिससे गरीब तटीय जनसंख्याओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, जो प्रोटीन के लिए सस्ते मात्स्यशिकारमही पर निर्भर हैं। इसके अलावा, अध्ययन में यह भी पाया गया कि इन डेल्टा क्षेत्रों की शुद्ध प्राथमिक उत्पादकता, पोषक तत्वों की मात्रा के मुकाबले तापमान परिवर्तनों से अधिक प्रभावित होती है। समुद्र की सतह का तापमान वृद्धि भविष्य में मछली उत्पादन पर शुद्ध प्राथमिक उत्पादकता के सकारात्मक प्रभाव को छिपा सकती है, जिससे स्थानीय समुदायों के लिए गंभीर आर्थिक प्रभाव हो सकते हैं।

सारांश में, जलवायु परिवर्तन का समुद्री मत्स्य शिकारमही और जल कृषि प्रणालियों पर गहरा असर पड़ रहा है, जो पारिस्थितिकीय, आर्थिक और सामाजिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण चुनौतियाँ उत्पन्न कर रहा है। बढ़ते तापमान और वर्षा पैटर्न में बदलाव मछली के प्रजनन चक्र, भंडार की संख्या और समग्र उत्पादकता को प्रभावित कर रहे हैं। जलाशयों और नदी प्रणालियों में तापमान वृद्धि और वर्षा में बदलाव से जलवायु परिवर्तन के प्रभाव और जटिल हो रहे हैं। बंगाल और महानदी डेल्टाओं में समुद्र की सतह का तापमान बढ़ने और प्राथमिक उत्पादकता में गिरावट के कारण मछली उत्पादन में कमी आ सकती है, लेकिन कुछ प्रजातियाँ इसके बावजूद लचीलापन दिखा रही हैं। सामाजिक-आर्थिक दृष्टिकोण से, जीडीपी में गिरावट और तटीय जनसंख्याओं के लिए यह चुनौतीपूर्ण स्थिति हो सकती है। इंदिरासागर और गांधीसागर जैसे जलाशय प्रणालियाँ भी तापमान में वृद्धि का अनुभव कर रही हैं, जिसके कारण मौसमी वर्षा में बदलाव हो रहा है और मछली उत्पादन पर प्रभाव पड़ रहा है। उन्नत पूर्वानुमान मॉडल, जैसे ARIMAX, जलवायु परिवर्तन के तहत मछली उत्पादकता का पूर्वानुमान करने में सहायक साबित हो रहे हैं। इसके अलावा, गंगा नदी प्रणाली में भारतीय प्रमुख मछलियों के प्रजनन में गिरावट हो रही है, क्योंकि वर्षा में कमी हो रही है, लेकिन पश्चिम बंगाल में जल कृषि वातावरण में जलवायु परिवर्तन के अनुकूल प्रभाव देखे जा रहे हैं, जैसे कि प्रजनन काल का विस्तार, जो दर्शाता है कि प्रबंधित प्रणालियाँ प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र के नुकसान को कम कर सकती हैं।

1. मध्य प्रदेश के चयनित जलाशयों में जलवायु और पर्यावरणीय कारकों का अस्थायी अध्ययन और मछली उत्पादन पर उनका संभावित प्रभाव: एक विभिन्न पद्धतिगत दृष्टिकोण

इस अध्ययन ने मध्यप्रदेश के चयनित जलाशयों में जलवायु परिवर्तन के मात्रात्मक प्रभाव का मूल्यांकन किया।औसत तापमान और वर्षा के वार्षिक विचलन विश्लेषण से यह पाया गया कि इंदिरा सागर जलाशय में A1B परिदृश्यों के तहत 1991-2015, 2016-2040 और 2041-2065 के बीच वार्षिक तापमान में वृद्धि हुई है, जबकि 1991-2015 और 2016-2040 के बीच वर्षा में कमी आई, लेकिन 2041-2065 के दौरान वर्षा में वृद्धि होने की संभावना है।गांधी सागर जलाशय के मामले में भी इसी प्रकार के परिणाम पाए गए।

मौसमी प्रवृत्ति विश्लेषण को एक सांख्यिकीय गैर-पारामीट्रिक परीक्षण, मैन–केंडल परीक्षण का उपयोग करके किया गया, जिसमें इंदिरा सागर जलाशय में पोस्ट-मॉनसून और शीतकाल के दौरान औसत तापमान में वृद्धि का रुझान देखा गया, जबकि मॉनसून और मॉनसून पूर्व तापमान में कमी का रुझान पाया गया। वर्षा में भी तीनों मोसमों में महत्वपूर्ण कमी का रुझान पायागया, सिवाय मॉनसून के। गांधी सागर जलाशय के मामले में, सभी मोसमों में औसत तापमान में वृद्धि का रुझान पाया गया।

इस अध्ययन में जलाशय मछली उत्पादन का पूर्वानुमान करने के लिए विभिन्न पूर्वानुमान मॉडल्स का उपयोग किया गया, औरऑटो- रेग्रेसिवइंटिग्रेटेड मूविंग एवरेज मॉडल को मछली उत्पादन का पूर्वानुमान करनेके लिए सबसे उपयुक्त मॉडल के रूप में पाया गया। इस अध्ययन में यह भी पाया गया कि औसत अधिकतम तापमान, औसत न्यूनतम तापमान और औसत वायुगति मछली उत्पादन की भविष्यवाणी में सबसे महत्वपूर्ण पैरामीटर थे।

II. भारत में गंगा नदी और इसके मैदानों की अंतर्देशीय मत्स्यपालन पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

- गंगा नदी और इसके मैदानों में तापमान और वर्षा के पैटर्न में विशेष परिवर्तन देखे गए हैं – गंगा नदी के ऊपरी हिस्से में हरिद्वार के पास वार्षिक औसत न्यूनतम जल तापमान 1970-1986 के दौरान 12.9 डिग्री सेल्सियस से बढ़कर 1987-2003 के दौरान 14.5 डिग्री सेल्सियस हो गया है, जो जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को दर्शाता है।गंगानदी के ठंडे क्षेत्रों में भी न्यूनतम जल तापमान में 1.5 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई है।पश्चिम बंगाल के जलीय कृषि फार्मों में जल तापमान में 0.2 डिग्री सेल्सियस से 1.6 डिग्री सेल्सियस तक की वृद्धि देखी गई है, जो स्थानीय जलवायु परिवर्तनों के संकेतक हैं। इसके साथ ही, इलाहाबाद (1974-2003) के वर्षा डेटा के विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि चरम प्रजनन अवधि (मई-अगस्त) के दौरान कुल वर्षा में 5% की कमी आई है, जबकि प्रजनन पश्चात अवधि (सितंबर-दिसंबर) में 7% की वृद्धि हुई है। पश्चिम बंगाल में मानसून महीनों (मई-अगस्त) में वार्षिक कुल वर्षा का अनुपात पहले 68% (1976-1985) था, जो घटकर 62% (1996-2005) हो गया। वहीं, पोस्ट-मॉनसून महीनों में यह अनुपात 23% से बढ़कर 30% हो गया, जो वर्षा पैटर्न में महत्वपूर्ण परिवर्तन को दर्शाता है

- गंगा नदी में भारतीय प्रमुख कार्प के प्रजनन पैटर्न पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव प्रजनन विफलता एक महत्वपूर्ण चुनौती के रूप में सामने आई है, क्योंकि प्रजनन अवधि (मई-अगस्त) के दौरान वर्षा में 5% की कमी के कारण भारतीय प्रमुख कांटेदार मछलियों के प्रजनन में विफलता देखी गई है। यह परिवर्तन प्राकृतिक प्रजनन संकेतोंको बाधित करता है, जो अंडों के निषेचन और युवा मछलियों की वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं।दूसरी ओर, पश्चिम बंगाल के जलीय कृषि फार्मों में प्रजनन अवधि में 45-60 दिनों की वृद्धि देखी गई है। तापमान और वर्षा पैटर्न में बदलाव के कारण, प्रजनन अवधि अब 160-170 दिनों तक लंबी हो गई है, जो पहले 1980-85 के दौरान 110-120 दिनों तक सीमित थी। इसके अतिरिक्त, प्रजनन पश्चात अवधि (सितंबर-दिसंबर) के दौरान वर्षा में 7% की वृद्धि अंडों के पुनर्संयोग को प्रभावित कर रही है, जिससे नदी में अंडों और मछलियों की उपलब्धता में कमी हो सकती है, और इस प्रकार मछलियों की संख्या में गिरावट आ सकती है। यह सभी बदलाव जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को दर्शाते हैं, जो मछली प्रजननऔरजलकृषि प्रणालियों पर गहरे प्रभाव डाल रहे हैं।

- जलवायु परिवर्तन का प्रजनन पर सकारात्मक प्रभाव – पश्चिम बंगाल में जलीय कृषि फार्मों पर जलवायु परिवर्तन के सकारात्मक प्रभाव देखे गए हैं। यहाँ आई. एम. सी. (भारतीय प्रमुख कांटेदार मछलियाँ) की प्रजनन अवधि में 45-60 दिनों की वृद्धि हुई है, जिससे यह अब लगभग 160-170 दिनों तक चलती है।इसके अलावा, तापमान में वृद्धि के कारण प्रजनन अवधि अब पहले से ही मार्च में शुरु हो रही है।तापमान और वर्षा पैटर्न में बदलाव ने जलीय कृषि पर्यावरण को अधिक अनुकूल बना दिया है, जिसके परिणाम स्वरूप अंडों और युवाओं की उपलब्धता में सुधार हुआ है।गंगा नदी प्रणाली के प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र जलवायु परिवर्तन के कारण संघर्ष कर रहे हैं, लेकिन पश्चिम बंगाल में जलीय कृषि फार्म जलवायु अनुकूलन के जरिए इन चुनौतियों का सामना कर रहे हैं।यह बदलाव मछली उत्पादन में वृद्धि और क्षेत्रीय स्थिरता के लिए सकारात्मक संकेत देते हैं।

संदर्भः

1. डॉ, टी., एडगर, डब्ल्यू. एन., ब्राउन, के. और बडजेक, एम. सी., 2009. जलवायु परिवर्तन और मछली पकड़ने का प्रभाव: संभावित प्रभाव, अनुकूलन और शमन।
2. दास, आई., लौरिया, वी., के., कय, एस., काज़कारो, आई., आर्टो, आई., फर्नांडीस, जे.ए. और हाज़रा, एस., 2020. भारत के उत्तर-पूर्वी तट पर समुद्री मछली पालन की उत्पादकता पर जलवायु परिवर्तन और प्रबंधन नीतियों का प्रभाव। साइंस ऑफ़ द टोटल एनवायरनमेंट, 724, पृ. 138082।
3. सैकीया, एम., यादव, वी. के. और पाल, एस., 2021. जलवायु और पर्यावरणीय पैरामीटर पर समय- समय अध्ययन और मध्यप्रदेश के चयनित जलाशय मछली उत्पादन पर उनके संभावित प्रभाव: एक अलग विधि विज्ञानात्मक दृष्टिकोण। क्लाइमेट चेंज एंड एनवायरनमेंटल सस्टेनेबिलिटी, 9(2), पृ. 144-163।

*

मत्स्य पालन प्रौद्योगिकी - विकास एवं अंगीकरण

अंकुश कांबले, अंशु सुरीन, निशांत कुमार, शिवाजी अरगड़े

मत्स्य पालन प्रौद्योगिकी एक व्यवस्थित रूप से संगठित ज्ञान और सामग्री है, जो मछली उत्पादकता के वर्तमान स्तर को बढ़ावा देने या उत्पादन की मौजूदा सीमा को बढ़ाने में मदद करने के लिए उत्पादन समस्याओं पर लागू होती है। मत्स्य पालन प्रौद्योगिकियों का व्यापक महत्व जलीय कृषि में तकनीकी नवाचार जलीय कृषि पध्दतियों में विकास का नेतृत्व कर रहा है, जिससे नुकसान कम हो रहा है और दक्षता बढ़ रही है। जलीय कृषि प्रौद्योगिकी मत्स्य पालन के कई क्षेत्रों को प्रभावित करती है, जैसे बीज उत्पादन, चारा उत्पादन और प्रबंधन, कीट और रोग प्रबंधन, उत्पादन, प्रग्रहण, विपणन, प्रसंस्करण, आदि। भारतीय मेजर कार्प में प्रेरित प्रजनन तकनीक ने जलीय कृषि क्षेत्र के विकास को परंपरागत तरीके से बदल दिया है। गहन जलीय कृषि पद्धतियों से आधुनिक जलीय कृषि उद्योग को सफलता मिली। मछली पकड़ने में यान्त्रिकीकरण ने कम समय और न्यूनतम मानवीय परिश्रम के साथ उत्पादन में वृद्धि की। मछली प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों ने उत्पाद निधानी आयु में सुधार किया, मछली क्षय के नुकसान को कम किया और उत्पादों के मूल्य में वृद्धि की। मछली श्रृंखला में शीत भण्डारण प्रौद्योगिकियों ने बेममौसम में मछली की उपलब्धता, समय पर वितरण, दूरदराज के क्षेत्रों में उपलब्धता में वृद्धि की। इसी तरह डिजिटल और विश्लेषणात्मक उपकरण जलीय कृषि में निरंतर सुधार ला रहे हैं, और यह प्रवृत्ति अभी भी बनी हुई है, जिसके परिणामस्वरूप की फसल की पैदावार में सुधार हो रहा है और मछली पालन समुदाय की आय बढ़ाने में मदद मिल रही है। संक्षेप में, तकनीकी प्रगति ने आमतौर पर मछली पकड़ने की क्रिया को अधिक कुशल और किफायती बना दिया है, उत्पादन की प्रति इकाई आवश्यक शारीरिक श्रम में कमी आई है और संसाधनों तक पहुंच में सुधार हुआ है। मत्स्य पालन प्रौद्योगिकी एक व्यवस्थित रूप से संगठित ज्ञान और सामग्री है, जो मछली उत्पादकता के वर्तमान स्तर को बढ़ावा देने या उत्पादन की मौजूदा सीमा को बढ़ाने में मदद करने के लिए उत्पादन समस्याओं पर लागू होती है। मत्स्य पालन प्रौद्योगिकियों का व्यापक महत्व जलीय कृषि में तकनीकी नवाचार जलीय कृषि पध्दतियों में विकास का नेतृत्व कर रहा है, जिससे नुकसान कम हो रहा है और दक्षता बढ़ रही है। जलीय कृषि प्रौद्योगिकी मत्स्य पालन के कई क्षेत्रों को प्रभावित करती है, जैसे बीज उत्पादन, चारा उत्पादन और प्रबंधन, कीट और रोग प्रबंधन, उत्पादन, प्रग्रहण, विपणन, प्रसंस्करण, आदि। भारतीय मेजर कार्प में प्रेरित प्रजनन तकनीक ने जलीय कृषि क्षेत्र के विकास को परंपरागत तरीके से बदल दिया है। गहन जलीय कृषि पद्धतियों से आधुनिक जलीय कृषि उद्योग को सफलता मिली। मछली पकड़ने में यांत्र्ािकीकरण ने कम समय और न्यूनतम मानवीय परिश्रम के साथ उत्पादन में वृद्धि की। मछली प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों ने उत्पाद निधानी आयु में सुधार किया, मछली क्षय के नुकसान को कम किया और उत्पादों के मूल्य में वृद्धि की। मछली श्रृंखला में शीत भण्डारण प्रौद्योगिकियों ने बेममौसम में मछली की उपलब्धता, समय पर वितरण, दूरदराज के क्षेत्रों में उपलब्धता में वृद्धि की। इसी तरह डिजिटल और विश्लेषणात्मक उपकरण जलीय कृषि में निरंतर सुधार ला रहे हैं, और यह प्रवृत्ति अभी भी बनी हुई है, जिसके परिणामस्वरूप की फसल की पैदावार में सुधार हो रहा है और मछली पालन समुदाय की आय बढ़ाने में मदद मिल रही है। संक्षेप में, तकनीकी प्रगति ने आमतौर पर मछली पकड़ने की क्रिया को अधिक कुशल और किफायती बना दिया है, उत्पादन की प्रति इकाई आवश्यक शारीरिक श्रम में कमी आई है और संसाधनों तक पहुंच में सुधार हुआ है।

मत्स्य पालन में प्रौद्योगिकियों का दायरा: मत्स्य पालन क्षेत्र में उत्पादन से लेकर विपणन और उपभोग तक प्रौद्योगिकियों का व्यापक दायरा है। इसमें निम्नलिखित फायदों की गुंजाइश है;

- मछली उत्पादकता में वृद्धि
- उत्पादन लागत में कटौती
- पानी के उपयोग में कमी (उदा. बायोफ्लॉक)
- आहार की दक्षता बढ़ाएँ (उदा. सूक्ष्म आहार)
- कीट एवं रोगों पर नियंत्रण
- प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र की गिरावट को कम करना
- नदियों और जलाशयों में रसायन मुक्त सीवेज जल उपलब्ध कराना
- उचित मलजल उपचार द्वारा कम प्रदूषक मछली का उत्पादन
- मशीनीकरण द्वारा मछली श्रमिकों की सुरक्षा बढ़ाना
- मछली उत्पादन और विपणन क्षमता में वृद्धि
- कीमतों का अनुकूलन और उत्पादन और विपणन दक्षता में सुधार
- गुणवत्तापूर्ण एवं सुरक्षायुक्त मछली आहार पदार्थ उपलब्ध कराना
- पर्यावरणीय और पारिस्थितिक प्रभाव को कम करना
- संयंत्र के रखरखाव की लागत में कटौती
- मछली पालने वालों को समय पर विश्वसनीय बाजार जानकारी उपलब्ध कराना
- बेहतर उत्पादन और विपणन निर्णय लेना आदि।

मत्स्य पालन क्षेत्र में प्रौद्योगिकी हस्तांतरण का महत्व

प्रौद्योगिकी हस्तांतरण तकनीकी नवाचार प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो व्यापक समाज और बाजार में वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसंधान तथा संबंधित कौशल और प्रक्रियाओं को बढ़ावा देता है। इस प्रकार, विश्वविद्यालयों और अनुसंधान संस्थानों से व्यावसायीकरण में सक्षम लोगों तक नवाचार के प्रसार को प्रौद्योगिकी हस्तांतरण (रवि और जानोडिया, 2022) के रूप में परिभाषित किया गया है। मत्स्य पालन की उत्पादन क्षमता और उत्पादकता में सुधार के लिए प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण की आवश्यकता है। मत्स्य किसानों की निर्णय लेने की क्षमता, उनके उत्पादन, आय और जीवन स्तर में सुधार के लिए मत्स्य पालन में प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की आवश्यकता है। इसके अलावा छोटे पैमाने के मछुआरों, मछली के खुदरा विक्रेताओं, मछली प्रसंस्करणकर्ताओं

मछली विपणन प्रौद्योगिकियाँ: प्रौद्योगिकियाँ उत्पादक और उपभोक्ता कल्याण में सुधार करती हैं और विपणन दक्षता में वृद्धि करती हैं जिन्हें मछली विपणन प्रौद्योगिकी के रूप में दर्ज किया जा सकता है। ये हैं;

- विभिन्न मछली प्रसंस्करण विधियाँ जैसे उच्च दबाव प्रसंस्करण, निम्न दबाव प्रसंस्करण, विकिरण, स्पंदित प्रकाश प्रौद्योगिकी, माइक्रोवेव प्रसंस्करण, आदि।
- विभिन्न पैकेजिंग प्रौद्योगिकियाँ जैसे संशोधित वातावरण पैकेजिंग, सक्रिय और बुद्धिमान पैकेजिंग, आदि।
- खुला और बंद परिवहन
- शीत भंडारण तकनीकें

मत्स्य पालन में नए युग की प्रौद्योगिकियाँ

इसके अलावा कुछ प्रौद्योगिकियों को नए युग की तकनीक माना जा सकता है जिनका उत्पादक और उपभोक्ता कल्याण दोनों पर प्रभाव पड़ता है। मत्स्य पालन में ये नई डेटा प्रोसेसिंग तकनीकें हैं: बड़ा डेटा, ब्लॉक चेन, समुद्र में स्मार्ट वजन, रेडियो-फ्रीक्वेंसी पहचान (आरएफआईडी), निगरानी के लिए स्मार्टफोन, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, ड्रोन, ऑन-बोर्ड कैमरे, संवर्धित वास्तविकता (एआर), वर्चुअल रियलिटी (वीआर), ब्लॉकचेन आदि ने जलीय कृषि उद्योग में अपनी जगह बना ली है। इसके अलावा, पानी के पुनर्चक्रण और कृषि के लिए उर्वरक के रूप में पुनः उपयोग किए जाने वाले कचरे के साथ रीसर्क्युलेटिंग एक्वासंवर्धन प्रणाली (आरएएस) आम होते जा रहे हैं। आरएएस समुद्री आहार पदार्थ के कार्बन पदचिह्न को 50% तक कम कर सकता है, और इन प्रणालियों में मछली को हार्मोन या एंटीबायोटिक दवाओं के उपयोग के बिना नियंत्रित और पता लगाने योग्य वातावरण में उगाया जा सकता है।

- जहाजों के अंकित स्थान, मार्ग और गति को ट्रैक करने के लिए उपग्रह-आधारित पोत निगरानी प्रणाली
- बड़ी संख्या में भौगोलिक रूप से फैली हुई साइटों से जुड़ने वाला स्वतंत्र संचार नेटवर्क प्रदान करने के लिए बहुत छोटा एपर्चर टर्मिनल (वीएसएटी) प्रणाली
- भागौलिक स्थिति -निर्धारण प्रणाली (जीपीएस) जलधाराओं में जलकृषि क्षमता और खतरों वाले स्थलों का पता लगाने और मानचित्र पर इन बिंदुओं का पता लगाने के लिए।
- समुद्र की सतह के तापमान, समुद्र और महासागरों में मछली पकड़ने के संभावित स्रोतों, मौसमी बदलाव, बाढ़ की सीमा आदि के मानचित्रण के लिए सूदूर संवेदन (रिमोट सेंसिंग तकनीक)

हस्तांतरित प्रौद्योगिकियों में शामिल संगठन/रियोजनाएँ

- कार्प पालन पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (एआईसीआरपी) भारत में विभिन्न कृषि-जलवायु क्षेत्रों (आईएएसआरआई ऑन तकनीक) में समग्र मछली पालन प्रौद्योगिकी का प्रदर्शन करने के लिए 1971 में शुरू की गई थी।
- कृषि विज्ञान केंद्र को कार्य अनुभव के माध्यम से कृषि और मत्स्य पालन सहित संबद्ध क्षेत्रों में आवश्यकता-आधारित और कौशल-उन्मुख व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए जमीनी स्तर के संगठन के रूप में 1974 में शुरू किया गया था।
- तकनीकी जानकारी के तेजी से प्रसार के लिए मत्स्य पालन गांवों के एक समूह में सिद्ध प्रौद्योगिकी का प्रसार करने के लिए 1974-75 में ऑपरेशनल रिसर्च प्रोजेक्ट (ओआरपी) शुरू किया गया था।
- लैब-टू-लैंड प्रोजेक्ट (एलएलपी) 1979 में अनुसंधान प्रयोगशाला से मत्स्य किसानों के खेतों तक प्रौद्योगिकी स्थानांतरित करने के उद्देश्य से शुरू किया गया था।
- मछली पालन प्रौद्योगिकी को लोकप्रिय बनाने के लिए मछली किसान विकास एजेंसी (एफएफडीए) की शुरुआत 1974-75 में की गई थी।
- प्रौद्योगिकी और सभी आवश्यक इनपुट प्रदान करके कार्प पालन और कार्प बीज उत्पादन जैसे जलीय कृषि के विभिन्न पहलुओं पर प्रदर्शन आयोजित करने के लिए 1975 में अंतर्राष्ट्रीय विकास
- अनुसंधान केंद्र (आईडीआरसी) - ग्रामीण एक्वासंवर्धन परियोजना शुरू की गई थी।
- खारेपानी में झींगा मछली पालन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से खारे पानी की मछली किसान विकास एजेंसी (बीएफडीए) की स्थापना 1985-1990 में की गई थी।
- जैव-भौतिक और सामाजिक-आर्थिक स्थितियों के आलोक में प्रौद्योगिकी के मूल्यांकन और परिशोधन के लिए 1996 में इंस्टीट्यूट विलेज लिंकेज प्रोग्राम (आईवीएलपी) शुरू किया गया था।

· जय विज्ञान मिशन उड़ीसा, असम और छत्तीसगढ़ के आदिवासी, पिछड़े और पहाड़ी क्षेत्रों में मत्स्य पालन में उत्पादकता बढ़ाकर घरेलू और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए वर्ष 2000 में शुरू किया गया था।

- जय विज्ञान मिशन उड़ीसा, असम और छत्तीसगढ़ के आदिवासी, पिछड़े और पहाड़ी क्षेत्रों में मत्स्य पालन में उत्पादकता बढ़ाकर घरेलू और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए वर्ष 2000 में शुरू किया गया था।
- विश्व बैंक सहायता प्राप्त अंतःस्थलीय मत्स्य पालन परियोजना 1979 में स्थापित की गई थी। इसने आधुनिक मछली-बीज हैचरी के निर्माण के लिए ऋण सहायता प्रदान की। उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, बिहार, मध्य प्रदेश और ओडिशा में विश्व बैंक की सहायता से कुल 63 हैचरियां स्थापित की गईं।
- कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केंद्र (एटीआईसी) परियोजना किसानों और उद्यमियों को उत्पादों, सूचनाओं और सेवाओं की एकल खिड़की प्रणाली डिलीवरी के उद्देश्य से शुरू की गई थी। वर्तमान में 44 एटीआईसी हैं जिनमें से 3 विशेष मत्स्य पालन संस्थान में कार्यरत हैं।
- बांग्लादेश में ट्रिकल-डाउन प्रणाली (टीडीएस) क्षेत्र विस्तार कर्मियों द्वारा बार-बार प्रशिक्षण, प्रदर्शन और करीबी पर्यवेक्षण द्वारा मछली किसानों के मन में जलीय कृषि के बारे में आत्मनिर्भरता और जागरूकता विकसित करने के लिए है।

जलीय कृषि प्रौद्योगिकियों के हस्तांतरण में बाधाएँ

उचित प्रौद्योगिकियों का सृजन तकनीकी उन्नति प्रक्रिया का अंत नहीं है। इसे अंतिम उपयोगकर्ताओं तक पहुंचाया जाना चाहिए और उनके लाभ के लिए इसे अपनाया जाना चाहिए। हालाँकि, मत्स्य पालन में प्रौद्योगिकी अपनाने में कई बाधाएँ हैं। प्रौद्योगिकी अपनाने में महत्वपूर्ण बाधाएँ आर्थिक कारक, नई तकनीक की जटिलता और जोखिम एवं परिवर्तन के प्रति किसानों का दृष्टिकोण हैं (गुएरिन और गुएरिन, 1994)। इनके अलावा सामाजिक, सांस्कृतिक, पर्यावरणीय, राजनीतिक बाधाएँ भी मत्स्य पालन क्षेत्र में प्रौद्योगिकियों को प्रभावी ढंग से अपनाने में बाधा डालती हैं। परिस्थितिजन्य बाधाएँ, जो मछली पालक लोगों को किसी तकनीक को अपनाने से रोकती हैं, नीचे सूचीबद्ध हैं:

- **तकनीकी बाधाएँ:** जलकृषि प्रौद्योगिकियों को अपनाने में प्रमुख बाधा इसकी असंगति है। अधिकांश नई प्रौद्योगिकियाँ मछुआरों की वर्तमान कृषि पद्धतियों और उसके वर्तमान परिवेश के साथ असंगत हैं। नए नवाचार के गुणों के बारे में अनिश्चितता और इसे अपनाने में इसकी जटिलता के साथ-साथ मछुआरों की समस्याओं को समझने में प्रौद्योगिकी की अक्षमता प्रमुख तकनीकी बाधाएं हैं, जो जलीय कृषि में नई प्रौद्योगिकियों को अपनाने में बाधा डालती हैं।
- **आर्थिक बाधाएँ:** नई प्रौद्योगिकी को अपनाने की लागत और उससे लाभय प्रौद्योगिकी अपनाने के लिए आवश्यक मानार्थ इनपुट की उपलब्धता और लागतय प्रौद्योगिकी से उत्पन्न उत्पाद को बाजार और कीमत की उपलब्धताय उत्पाद के प्रति उपभोक्ता की प्राथमिकताय प्रौद्योगिकी की पूंजी आवश्यकताय प्रग्रहण के बाद की सुविधाओं जैसे परिवहन, भंडारण, पैकेजिंग, प्रसंस्करण आदि की अनुउपलब्धता और लागत मत्स्य पालन क्षेत्र में प्रौद्योगिकी अपनाने में प्रमुख आर्थिक बाधाएं हैं।
- **अंतःश्रोत बाधाएँ:** खेती में कुल परिवर्तनीय लागत का लगभग 50-60% आहार का होता है (अय्यप्पन, 2006)। स्थानीय रूप से उपलब्ध कम कीमत वाली आहार सामग्री के उचित संयोजन का उपयोग करके कम लागत वाली तकनीक को विकसित और बढ़ावा देने की आवश्यकता है।
- **विपणन बाधाएँ:** मछली पालन के लिए इसके त्वरित निपटान के लिए बाजार एक प्रथम-आवश्यकता है और परिवहन भी मछली किसानों के लिए एक समस्या है। संगठित बाजार के अभाव में मछली किसान अपनी उपज बिचैलियों को बेच देते हैं। ग्रामीण स्तर पर प्रशीतन/संरक्षण सुविधाओं की कमी के कारण, पकड़ी गई मछली का बड़ा हिस्सा ताजे के रूप में ही बेचा जाता है (अय्यप्पन, 2006)।
- **संस्थागत बाधाएँ:** उपलब्ध नवाचारों के बारे में जागरूकता की कमी, असममित जानकारी, गुणवत्तापूर्ण इनपुट की अनुपलब्धता, प्रौद्योगिकी अपनाने के प्रति मत्स्य पालन विभाग की उदासीनता, इनपुट उपयोग में स्थिर और कठोर नियम और विनियम, अनुसंधान विस्तार प्रणाली के साथ खराब संबंध, अनुचित प्रशिक्षण सुविधाएं आदि, जलीय कृषि में प्रौद्योगिकी अपनाने में कुछ संस्थागत बाधाएं हैं।
- **सामाजिक बाधाएँ:** जलीय कृषि प्रौद्योगिकियों का हस्तांतरण सामाजिक बाधाओं से बहुत प्रभावित और बाधित होता है। कृषि प्रणाली में सामाजिक संरचना जलीय कृषि प्रौद्योगिकियों के हस्तांतरण में बाधा के रूप में कार्य कर सकती है। प्रतिष्ठा की हानि और आलोचना का शिकार व्यक्ति को एक विशेष मछली प्रौद्योगिकी को अस्वीकार करने के लिए प्रेरित करता है। इसके अलावा, प्रौद्योगिकी से संबंधित सामाजिक प्रणाली के मानदंड, प्रणाली के भीतर व्यक्ति की भूमिकाएं और स्थिति, और किसी की प्रणाली का अन्य सामाजिक प्रणाली के साथ संबंध, किसी व्यक्तिगत निर्णयकर्ता को किसी विशेष तकनीक को अपनाने की अनुमति नहीं दे सकते हैं।
- **कार्मिक बाधाएँ:** प्रौद्योगिकी के विवरण के बारे में अपनी अज्ञानता औरध्या वित्तीय अक्षमता के कारण व्यक्ति द्वारा प्रौद्योगिकी को अनुपयुक्त या अप्रासंगिक माना जा सकता है। प्रौद्योगिकी अपनाने में नए ज्ञान और कौशल को अपनाने के लिए व्यक्तिगत तकनीकी योग्यता भी महत्वपूर्ण है। बीमारी और मृत्यु दर से निपटने में विशेषज्ञता का अभाव नए ज्ञान और कौशल को अपनाने के लिए तकनीकी दक्षता पर जोर दिया जा रहा है। अनौपचारिक शिक्षा, समूह चर्चा, सामुदायिक वीडियो, विधि प्रदर्शन सभी बेहतर प्रौद्योगिकी के लिए कौशल को मजबूत करने में मदद करते हैं (अय्यप्पन, 2006)
- **प्राकृतिक बाधाएँ:** गुणवत्तापूर्ण पानी की कमी, बाढ़, चक्रवात, तूफान, सूखा, उच्च तापमान, कम तापमान, उच्च वर्षा कम वर्षा आदि जैसे प्राकृतिक जलवायु कारक, मछली पालन में प्रौद्योगिकी अपनाने को प्रभावित करते हैं।
- **जैविक बाधाएँ:** कीट और बीमारी, परजीवियों का प्रकोप नई तकनीक को प्रभावी ढंग से अपनाने में बाधा डालता है।
- **राजनीतिक बाधाएँ:** प्रौद्योगिकी प्रदर्शन के लिए उपयुक्त मछुआरों के चयन के दौरान स्थानीय नेताओं द्वारा अवांछनीय हस्तक्षेप प्रौद्योगिकी अपनाने में बहुत गंभीर समस्या है।
- **अन्य बाधाएँ:** अन्य बाधाएँ जैसे प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग के लिए आवश्यक कुशल जनशक्ति की कमी, उचित उपकरणों की कमी, नई तकनीक को अपनाने में किरायेदार का हतोत्साहित होना क्योंकि अगले वर्ष जमीन मिलने की कोई गारंटी नहीं है, आदि।

निष्कर्ष

जलीय कृषि में आधुनिक प्रौद्योगिकी अपनाने के लाभों को समाप्त नहीं किया जा सकता है, इससे मछली उत्पादकता में वृद्धि हुई है, प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र पर प्रभाव कम हुआ है, मछली श्रमिकों की सुरक्षा में वृद्धि हुई है, जल संसाधनों का उपयोग कम हुआ है, और कई अन्य चीजों के बीच आहार की दक्षता में वृद्धि हुई है। हालाँकि, इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए, मछुआरों को आधुनिक मछली पालन की अवधारणा और प्रौद्योगिकी के उपयोग को समझने की आवश्यकता है और शोधकर्ताओं को स्थानीय रूप से उपलब्ध इनपुट के उचित संयोजन का उपयोग करके कम लागत वाली तकनीक विकसित करने और बढ़ावा देने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ

1. अय्यप्पन, एस. (2006). मत्स्य पालन और जलकृषि की पुस्तिका। कृषि ज्ञान प्रबंधन निदेशालय, नई दिल्ली
2. गुएरिन, एल.जे. और गुएरिन, टी.एफ., 1994 - कृषि अनुसंधान और पर्यावरण प्रबंधन में नवाचारों को अपनाने में बाधाएं : एक समीक्षा। प्रायोगिक कृषि का ऑस्ट्रेलियाई जर्नल, 34(4):549-571
3. आई ए एस आर आई ऑन तकनीक http:Dei://ecoursesonline-iasri-res-in/mod/page/view-php\id [91200] 12-10-2022)
4. रवि, आर. और जानोदिया, एम.डी. (2022)। भारत में प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और विश्वविद्यालय अनुसंधान के व्यावसायीकरण को प्रभावित करने वाले कारक : एक क्रॉस-अनुभागीय अध्ययन। जर्नल ऑफ द नॉलेज इकोनॉमी, 13(1):787-803।
5. रोड्स, आर. और बूथ, आर. (1982)। फार्मर-बैक-टू-फार्मर रु स्वीकार्य प्रौद्योगिकी उत्पन्न करने के लिए एक मॉडल। सीआईपी, अंतरष्ट्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, सामाजिक विज्ञान विभाग वर्किंग पेपर, संख्या 1982-1
6. स्टूप, डब्ल्यू.ए. (1988)। प्रौद्योगिकी उत्पादन और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण में एनएआरएस संबंध। आईएसएनएआर वर्किंग पेपर, संख्या-11

*

जल कृषि में स्वास्थ्य प्रबंधन

डॉ. अरुण शर्मा, डॉ. टी.आई. चानू

परिचय

मछली स्वास्थ्य प्रबंधन एक ऐसा शब्द है जिसका उपयोग एक्वाकल्चर में मछली रोगों को रोकने के लिए किए जाने वाले प्रबंधन प्रथाओं का वर्णन करने के लिए किया जाता है। जब मछलियाँ बीमार हो जाती हैं, तो उन्हें बचाना कठिन हो सकता है। सफल मछली स्वास्थ्य प्रबंधन रोग की रोकथाम से शुरू होता है न कि उपचार से। मछली की बीमारी मत्स्यकृषकों के लिए आर्थिक हानि का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। पर्यावरणीय समस्याएँ, जैसे कि खराब जल गुणवत्ता या अन्य तनाव, अक्सर बीमारी के प्रकोप में योगदान देती हैं। मछली की बीमारी के प्रकोप के कारण उत्पादन लागत बढ़ जाती है क्योंकि मृत मछलियों में हुए निवेश, उपचार की लागत, और स्वस्थ होने के दौरान वृद्धि में कमी होती है। अक्सर रोग जीवाणु और होस्ट मछली के बीच का एक सरल संबंध नहीं होता है। इन संबंधों को आमतौर पर "तनाव" नामक शब्द के साथ जुड़ा जाता है। प्रबंधन प्रथाएँ जो तनाव को सीमित करती हैं, रोग के प्रकोप को रोकने में सबसे प्रभावी होती है। बीमारी के नुकसान से बचने और मछली स्वास्थ्य प्रबंधन प्रथाओं को अपनाने के लिए, हमें जलकृषि प्रणाली में प्रचलित जलकृषि प्रथाओं के बारे में जानने की आवश्यकता है। यह अध्याय उन स्वास्थ्य प्रबंधन रणनीतियों पर चर्चा करेगा जिन्हें स्थायी जलकृषि विकास के लिए अपनाया जा सकता है।

मछली में बीमारी का विकास

बीमारी की घटना उस नाजुक संतुलन के टूटने के कारण होती है जो होस्ट, रोगजनक और वातावरण के बीच होता है (चित्र. 1) (स्नियेज़को, 1970)। कई मामलों में, यदि होस्ट स्वस्थ है और तनावमुक्त है, तो वह अधिकांश रोगजनकों के हस्तक्षेप का प्रतिरोध कर सकता है। जलीय पर्यावरण अत्यधिक गतिशील है, और मछलियों के शरीर की क्रियाएँ, जो कि तापमान के प्रति संवेदनशील होती हैं, तापमान और अन्य जल गुणवत्ता मापदंडों द्वारा नियंत्रित होती हैं। मछलियों को लगातार बदलते पर्यावरणीय मानकों के अनुसार अनुकूलित होना पड़ता है। अन्यथा, यह कम उत्पादकता, वजन में कमी, फीड परिवर्तन में कमी, इम्युनिटी में कमी, प्राकृतिक रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी, संक्रामक रोगों की बढ़ती संख्या, मृत्यु, और व्यावसायिक मछली किसानों के लिए लाभ में कमी का कारण बनता है।

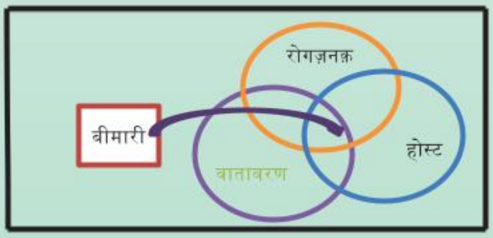

रोग विकास की प्रक्रिया

- रोग किसी जीव के सामान्य संरचनात्मक या कार्यात्मक स्थिति से किसी भी हानिकारक विचलन है, जो सामान्यतः कुछ संकेतों और लक्षणों के साथ जुड़ा होता है और शारीरिक चोट से स्वभाव में भिन्न होता है।
- रासायनिक कीटाणुनाशकों और एंटीबायोटिक्स का अनियंत्रित उपयोग भी एक संभावित पर्यावरणीय खतरा है।
- मछली में, तनाव आमतौर पर स्टॉकिंग घनत्व, पर्यावरणीय गुणवत्ता, हैंडलिंग या परिवहन से संबंधित होता है। इसके अतिरिक्त, खराब खाद्य उपयोग और अपशिष्ट उत्पादन के साथ इंटेंसिव मछली पालन प्रथाएँ पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं।
- पर्यावरणीय मानदंडों में अत्यधिक सीमा से भिन्नताएँ मछली के लिए तनाव लाती हैं, जो सीधे उनके प्रतिरक्षा तंत्र को प्रभावित करती हैं।
- मछलियों में, तनाव प्रतिक्रिया हायपोथैलेमिक-पिट्यूटरी-इंटररिनल (HPI) अक्षरेखा के उत्तेजना के कारण अनुकूल परिवर्तनों द्वारा शुरू होती है और इसके परिणामस्वरूप कॉर्टिकोस्टेरॉइड का उत्पादन होता है। हालांकि ये तनाव हार्मोन जीव को आंतरिक होमियोस्टेसिस फिर से प्राप्त करने में मदद करते हैं, लेकिन ये अपनी इम्यून दमन वाली प्रकृति के कारण रक्षा तंत्र को काफी कम कर देते हैं।

मछलियों में रोग

रोग दो प्रकार के होते हैं, संक्रामक और असंक्रामक रोग। संक्रामक रोग उन रोगाणुओं के कारण होते हैं जो पर्यावरण में मौजूद होते हैं या अन्य मछलियों द्वारा लाए जाते हैं। जबकि असंक्रामक रोग पर्यावरण संबंधी समस्याओं, पोषण की कमी या आनुवंशिक असामान्यताओं के कारण होते हैं; ये संक्रामक नहीं होते और आमतौर पर दवाओं से ठीक नहीं हो सकते हैं।

संक्रामक रोग

संक्रामक रोगों को व्यापक रूप से परजीवी, बैक्टीरियल, वायरल, या फंगी रोगों में वर्गीकृत किया जाता है। महत्वपूर्ण बैक्टीरियल रोगों में कॉलमिनरी रोग, पूंछ का सड़ना और पंख का सड़ना, एरोमोनेस सेप्टिसीमिया, एडवर्ड्सिएला सेप्टिसीमिया, ड्रॉपसी; फंगी रोगों में सैप्रोलैग्नियासिस, ब्रांचियोमाइकोसिस, गिल रॉट, एपीजूटिक अल्सरेटिव सिंड्रोम (EUS); परजीवी रोगों में इचथ्योफ्थीरियासिस ,डक्टाईलोगायरोसिस, गाइरोडैक्टिलोसिस ,अर्गुलोसिस; वायरल रोगों में कार्प एडेमा वायरस रोग, (CEVD), टिलापिया लेक वायरस (TiLV) रोग, आदि शामिल हैं।

गैर-संक्रामक रोग

गैर-संक्रामक रोगों को सामान्यतः पर्यावरणीय, पोषणात्मक या आनुवंशिक श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है; कुछ उदाहरण जैसे स्कोलीओसिस और पिनहेड रोग हैं।

रोकथाम के उपाय

रोकथाम के उपाय ऐसे सुरक्षात्मक या रक्षात्मक उपाय हैं जो किसी बीमारी के होने से रोकने के लिए डिजाइन किए जाते हैं। ये उपाय हैचरी और खेती के संचालन के दौरान रोगाणुओं के संख्या को कम करने और बीमारियों से बचने के लिए लागू किए जाते हैं। एक्वाकल्चर में रोकथाम की रणनीतियों को अपनाने से एंटीमाइक्रोबियल एजेंटों, कीटाणुशोधन करने वाले पदार्थों और एंटी-पैरासिटिक दवाओं पर हमारी निर्भरता कम हो सकती है, जो मछली और पर्यावरण पर दीर्घकालिक हानिकारक प्रभाव डालने के लिए जानी जाती हैं। मछली पालन में रोग के रोकथाम के लिए निम्नलिखित प्रोफिलैकटिक उपायों को अपनाया जाता है (चित्र. 2):

1. सर्वोत्तम जल गुणवत्ता
2. स्वच्छता प्रथाएँ
3. संगरोध उपाय
5. प्रीबायोटिक्स और प्रोबायोटिक्स
6. वैक्सीन
7. इम्यूनोस्टिमुलेंट्स
8. जैव उपचार

कीमोथेरेपी

कीमोथेरेपी संक्रामक रोगों के इलाज के लिए औषधियों, रासायनिक पदार्थों या कीमोथेरेप्युटिक्स का उपयोग करना शामिल है। एक्वाकल्चर सिस्टम में रासायनिक पदार्थों को लगाने से पहले निम्नलिखित बिंदुओं पर विचार किया जाना चाहिए:

- मछली की रासायनिक पदार्थों के प्रति सहिष्णुता।
- मछलियों की सहिष्णुता उम्र, आकार, प्रजाति और स्वास्थ्य स्थिति के साथ भिन्न होती है।
- छोटी या युवा मछलियाँ बड़ी या पुरानी मछलियों की तुलना में अधिक संवेदनशील होती हैं।
- कुछ प्रजातियाँ रासायनिक पदार्थों को सहन करने में अन्य की तुलना में बेहतर होती हैं।
- बीमारी से कमजोर हुई मछलियाँ तनाव और पर्यावरणीय परिवर्तन के प्रति कम सहिष्णु होती हैं।
- रासायनिक की कार्यकुशलता।
- जिस रसायन का इस्तेमाल करना है, उसकी चयन विषाक्तता के अंतर पर आधारित होती है, अर्थात्, रसायन को लक्षित सूक्ष्म जीव के लिए घातक होना चाहिए लेकिन मछली के लिए हानिरहित होना चाहिए।
- रसायन के गुणों को जानना आवश्यक है, जैसे कि सक्रिय घटक, घुलनशीलता और लागू करने की विधि।
- रसायन का पर्यावरण को नुकसान नहीं पहुँचना चाहिए।
- खाद्य मछलियों के उपचार के लिए रसायनों के उपयोग पर प्रतिबंध।
- ऐसे रसायनों का उपयोग करें जो जल्दी टूटते हैं और मछली के ऊतकों से जल्दी समाप्त हो जाते हैं, ताकि ऊतक अवशेष समस्याओं से बचा जा सके।
- प्रदूषित मांस पकाने के दौरान रसायन को विषैला या कैंसरकारी उत्पाद नहीं बनाना चाहिए।
- एंटीबायोटिक का अविचारित उपयोग दवा-प्रतिरोधी स्ट्रेन के विकास का कारण बन सकता है।

निष्कर्ष

कीमोथेरेपी एक अंतिम निर्णय है जिसे बीमारी की स्थिति से उबरने के लिए लेना पड़ता है। यदि कीमोथेरेपी करनी है, तो सबसे पहले विशेषज्ञों से परामर्श करें, वास्तविक कारण की पहचान करें, इस्तेमाल होने वाली रसायन की पहचान करें, उसकी खुराक और कैसे, कब और कितनी अवधि के लिए लागू करना है, यह समझें।

चित्र 2: मत्स्य पालन में रोग रोकथाम के उपाय

*

जलवायु परिवर्तन और इसका वैश्विक मत्स्य पालन क्षेत्र पर व्यापक प्रभाव

प्रगति पुष्प

जलवायु परिवर्तन, जो हमारे समय की सबसे बड़ी पर्यावरणीय चुनौतियों में से एक है, पूरी दुनिया में पारिस्थितिकी तंत्र और अर्थव्यवस्थाओं पर गहरा प्रभाव डाल रहा है, जिसमें मत्स्य पालन उद्योग भी शामिल है जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को महसूस करने वाले कई क्षेत्रों में से एक है। मत्स्य पालन क्षेत्र वैश्विक खाद्य सुरक्षा और आर्थिक स्थिरता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, और यह लगभग 3.3 अरब लोगों को उनके औसत प्रति व्यक्ति पशु प्रोटीन की खपत का 20% प्रदान करता है। इस उद्योग में दुनिया भर के लाखों लोग काम करते हैं, जिनमें छोटे पैमाने पर मछुआरे से लेकर बड़े व्यावसायिक मछली पकड़ने वाले जहाज शामिल हैं, जो आर्थिक विकास और खाद्य सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। जलवायु परिवर्तन की बढ़ती गति के साथ, इस क्षेत्र की स्थिरता को बनाए रखने वाला नाजुक संतुलन खतरे में है। जलवायु परिवर्तन के मत्स्य पालन पर सबसे प्रत्यक्ष प्रभावों में से एक जल तापमान में परिवर्तन है। दुनिया के महासागरों ने ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन से उत्पन्न अतिरिक्त गर्मी का 90% से अधिक अवशोषित किया है, जिसके परिणामस्वरूप महत्वपूर्ण वार्मिंग हुई है। यह वार्मिंग सभी समुद्री वातावरणों में समान नहीं है, कुछ क्षेत्रों में अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं।

मछली और अन्य समुद्री प्रजातियों के लिए, जल तापमान एक महत्वपूर्ण कारक है जो उनके शारीरिक और प्रजनन प्रक्रियाओं को प्रभावित करता है, और इसके परिवर्तन के कारण कई मछली प्रजातियां अपने आवास को स्थानांतरित कर रही हैं, जिससे उनकी स्थिरता खतरे में पड़ रही है। उदाहरण के लिए, "नेचर" पत्रिका में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि उत्तरी सागर में कुछ मछली आबादी पिछले 40 वर्षों में लगभग 1,000 किलोमीटर तक उत्तर की ओर स्थानांतरित हो गई हैं। ऐसे परिवर्तन उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में स्थानीय मत्स्य पालन के पतन का कारण बन सकते हैं, जबकि ध्रुवीय क्षेत्रों में नए मछली पकड़ने के अवसर पैदा कर सकते हैं।

महासागर अम्लीकरण, जो जलवायु परिवर्तन का एक प्रत्यक्ष परिणाम है, समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र और मत्स्य पालन के लिए एक और महत्वपूर्ण खतरा प्रस्तुत करता है। जैसे ही महासागर वायुमंडल से अधिक कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं, समुद्री जल अधिक अम्लीय हो जाता है। महासागर के रसायन विज्ञान में यह परिवर्तन कैल्सीफाइंग जीवों जैसे कि प्रवाल, मोलस्क और कुछ प्लवक प्रजातियों पर विनाशकारी प्रभाव डाल सकता है, जो कई समुद्री खाद्य जालों का आधार बनाते हैं। इन जीवों की कमी भोजन श्रृंखला में एक प्रभाव श्रृंखला को ट्रिगर कर सकती है, जिससे व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण मछली प्रजातियों की आबादी पर प्रभाव पड़ता है।

जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप समुद्र के स्तर में वृद्धि, तटीय आवासों को खतरा पहुंचाता है जो कई मछली प्रजातियों के लिए महत्वपूर्ण प्रजनन और भोजन स्थल के रूप में कार्य करते हैं। मैंग्रोव, नमक के दलदल और समुद्री घास के बिस्तर डूबने के खतरे में हैं, जिससे मछली की आबादी और विविधता में कमी आ सकती है। इसके अलावा, बढ़ते समुद्र के स्तर बंदरगाहों और प्रसंस्करण सुविधाओं सहित तटीय बुनियादी ढांचे को जलमग्न कर सकते हैं, जिससे मछली पकड़ने के संचालन और आपूर्ति श्रृंखला बाधित हो सकती है।

जलवायु परिवर्तन महासागरीय धाराओं को भी बदल रहा है, जो पोषक तत्वों, लार्वा और प्लवक के वितरण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन धाराओं में परिवर्तन मछली पकड़ने के कुछ मैदानों की उत्पादकता और मछलियों के प्रवास पैटर्न को प्रभावित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, एल नीनो दक्षिणी दोलन (ईएनएसओ) में उतार-चढ़ाव को जलवायु परिवर्तन से जोड़ा गया है, जिसका प्रशांत महासागर में मत्स्य पालन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है।

जलवायु परिवर्तन के कारण चरम मौसम की घटनाएं अधिक बार और तीव्रता से हो रही हैं, जो मछली पकड़ने वाले समुदायों और बुनियादी ढांचे के लिए तत्काल जोखिम पैदा करती हैं, और मछली पकड़ने के उद्योग की स्थिरता को खतरे में डालती हैं। तूफान और चक्रवात, मछली पकड़ने के जहाजों, गियर और तटीय सुविधाओं को नुकसान पहुंचा सकते हैं या नष्ट कर सकते हैं। ये घटनाएं न केवल मछुआरों की सुरक्षा को खतरे में डालती हैं, बल्कि महत्वपूर्ण आर्थिक नुकसान और खाद्य आपूर्ति में व्यवधान का कारण भी बन सकती हैं।

जलवायु परिवर्तन के मत्स्य पालन पर सामाजिक-आर्थिक प्रभाव व्यापक और जटिल हैं। कई विकासशील देशों में, छोटे पैमाने पर मत्स्य पालन जीविका और खाद्य सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। मछली के स्टॉक में गिरावट या बदलाव के कारण, ये समुदाय आर्थिक और सामाजिक रूप से अधिक कमजोर हो जाते हैं। विश्व बैंक का अनुमान है कि जलवायु परिवर्तन 2030 तक तटीय क्षेत्रों में 12 मिलियन लोगों को गरीबी में धकेल सकता है, जिसमें मछली पर निर्भर समुदाय विशेष रूप से जोखिम में हैं।

जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का सामना करने के लिए मत्स्य पालन क्षेत्र के लिए अनुकूलन रणनीतियाँ विकसित करना एक महत्वपूर्ण कदम है। इन रणनीतियों में शामिल हैं:

1. मत्स्य पालन प्रबंधन में सुधार: जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को ध्यान में रखते हुए पारिस्थितिकी तंत्र-आधारित दृष्टिकोण और अनुकूली प्रबंधन प्रथाओं को लागू करना।

2. जीविका में विविधता लाना: मछली पकड़ने वाले समुदायों को कमजोर मछली स्टॉक पर निर्भरता को कम करने के लिए वैकल्पिक आय स्रोतों को विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करना।

3. निगरानी और प्रारंभिक चेतावनी प्रणालियों में सुधार: जलवायु संबंधी परिवर्तनों की भविष्यवाणी करने और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र में प्रतिक्रिया करने की क्षमता में सुधार करना।

4. सतत जलीय कृषि में निवेश: जंगली मछली की आपूर्ति को पूरक करने के लिए जलवायु-लचीला जलीय कृषि प्रथाओं को विकसित करना।

5. अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को मजबूत करना: मछली स्टॉक के सीमा पार स्वरूप को संबोधित करना और संसाधनों में बदलाव के लिए समान पहुंच सुनिश्चित करना।

दुनिया भर के कई क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के मत्स्य पालन पर प्रभावों के स्पष्ट उदाहरण प्रदान करते हैं। आर्कटिक में, गर्म पानी ने अटलांटिक मैकेरल के उत्तर की ओर विस्तार को बढ़ावा दिया है, जिससे मछली पकड़ने वाले देशों के बीच तनाव पैदा हो गया है क्योंकि वे इस मूल्यवान संसाधन तक पहुंच के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। इसके विपरीत, फिलीपींस जैसे उष्णकटिबंधीय क्षेत्र छोटी पेलाजिक मछलियों की पकड़ में कमी का अनुभव कर रहे हैं, जिससे स्थानीय खाद्य सुरक्षा और जीविका खतरे में पड़ रही है।

भविष्य की ओर देखते हुए, अनुमानों से पता चलता है कि जलवायु परिवर्तन वैश्विक मत्स्य पालन परिदृश्य को फिर से आकार देना जारी रखेगा।"साइंस" पत्रिका में प्रकाशित एक अध्ययन में अनुमान लगाया गया है कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में महत्वपूर्ण कमी के बिना, कुछ उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में मछली पकड़ने की क्षमता 2050 तक 40% तक कम हो सकती है, जिससे वैश्विक खाद्य सुरक्षा पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ सकता है। इस बीच, उच्च अक्षांश वाले क्षेत्रों में संभावित पकड़ में वृद्धि देखी जा सकती है, हालांकि समग्र वैश्विक रुझान नकारात्मक होने की उम्मीद है।

जलवायु परिवर्तन के कारण मत्स्य पालन क्षेत्र को जो चुनौतियाँ का सामना करना पड़ रहा है, वे बहुत बड़ी हैं, लेकिन उन्हें दूर किया जा सकता है अगर हम जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए काम करें। इन मुद्दों का समाधान करने के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान, नीतिगत कार्रवाई और समुदाय के साथ जुड़ाव को मिलाकर एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। टिकाऊ मछली पकड़ने की प्रथाओं को ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के साथ जोड़कर, मत्स्य पालन की दीर्घकालिक व्यवहार्यता को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन के मत्स्य पालन क्षेत्र पर प्रभाव गहरे और व्यापक हैं, जो मछली आबादी के जीव विज्ञान से लेकर तटीय समुदायों की अर्थव्यवस्थाओं तक हर पहलू को छूते हैं। जैसे ही हम इस बदलते समुद्री परिदृश्य को नेविगेट करते हैं, यह महत्वपूर्ण है कि हम टिकाऊ प्रथाओं को अपनाएं, नवाचार को बढ़ावा दें और वैश्विक सहयोग को बढ़ावा दें। केवल सामूहिक प्रयास के माध्यम से ही हमें उम्मीद है कि हम इस महत्वपूर्ण संसाधन की रक्षा कर सकते हैं जिस पर अरबों लोग भोजन, जीविका और सांस्कृतिक पहचान के लिए निर्भर हैं। हमारे महासागरों और उन समुदायों के भविष्य जिनका वे समर्थन करते हैं, संतुलन में है, जो जलवायु परिवर्तन पर कार्रवाई को न केवल पर्यावरणीय अनिवार्यता बनाता है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक आवश्यकता भी बनाता है।

*

जलवायु परिवर्तन एवं खाद्य सुरक्षा :
सामाजिक – आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक का महत्व एवं उपयोग

चांदनी प्रकाशभाई दवे, महेश शर्मा, विनोद कुमार यादव, विद्या श्री भारती और अर्पिता शर्मा

परिचय

जलीय कृषि वैश्विक खाद्य सुरक्षा में अहम भूमिका निभाती है, विशेष रूप से विकासशील देशों में, जहां यह दुनिया के आधे से अधिक समुद्री भोजन और उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन का भरोसेमंद स्रोत प्रदान करती है। यह पारंपरिक पशुपालन की तुलना में अधिक संसाधन-कुशल है, क्योंकि समुद्री शैवाल और शंख जैसी प्रजातियों को चारे की आवश्यकता नहीं होती, जिससे पर्यावरण पर प्रभाव कम होता है। "ब्लू इकॉनमी" का हिस्सा होने के नाते, जलीय कृषि लाखों लोगों की आजीविका को आधार प्रदान करती है और वैश्विक खाद्य उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देती है, विशेषकर एशिया में, जहां दुनिया की 90% जलीय कृषि का उत्पादन होता है।

हालांकि, जलवायु परिवर्तन जलीय कृषि के लिए अनेकों चुनौतियां प्रस्तुत करता है। में वृद्धि जल तापमान एवं बदलते वर्षा स्वरूप, जलीय पारिस्थितिक तंत्र को बाधित करते हैं, जिससे मछलियों के वितरण और प्रजनन पर असर पड़ता है, विशेष रूप से ठंडे पानी की प्रजातियां खतरे में हैं, और प्रदूषण और अत्यधिक मछली पकड़ने जैसी समस्याएं इन प्रभावों को और अधिक बढ़ा देती हैं। पर्यावरणीय परिवर्तन न केवल जलीय कृषि की उत्पादकता को बल्कि उन समुदायों को भी खतरे में डालते हैं जो इस पर निर्भर हैं।

मछुआरे और जलीय कृषि से जुड़े समुदाय अस्थिर आय, सीमित संसाधन, और अपर्याप्त बुनियादी ढांचे जैसी सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। इन चुनौतियों को निम्न शिक्षा स्तर और लैंगिक असमानता जैसी सामाजिक विषमताएं और अधिक जटिल बना देती हैं। भारत में, जहां लगभग 70 करोड़ लोग जलवायु-संवेदनशील क्षेत्रों पर निर्भर हैं, अंतर्देशीय मत्स्य पालन विशेष रूप से प्रभावित हो रहा है। जलीय कृषि और इससे जुड़ी आजीविकाओं की सुरक्षा के लिए, समाधान के रूप में तकनीकी नवाचार, जैसे पुनः परिसंचरण जलीय कृषि प्रणाली और एकीकृत बहु-पोषी जलीय कृषि को अपनाना आवश्यक है। साथ ही, ऐसे लक्षित उपायों की भी आवश्यकता है, जो समुदायों को जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूल बनने और उनकी सुदृढ़ता को बढ़ाने में सहायता प्रदान कर सकें।

सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता का आकलन कैसे करें?

सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता का आकलन राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रबंधन अकादमी और केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान द्वारा विकसित सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक का उपयोग करके किया जा सकता है। सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक ढांचा एक व्यवस्थित दृष्टिकोण है, जिसे विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय प्रभावों के संदर्भ में समुदायों की सामाजिक-आर्थिक तनावों के प्रति सुभेद्यता का आकलन करने के लिए तैयार किया गया है। सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक ढांचा विभिन्न संकेतकों को एकीकृत करता है, जो सुभेद्यता के सामाजिक और आर्थिक आयामों को दर्शाते हैं, और यह किसी समुदाय की प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने और अनुकूलन करने की क्षमता का समग्र मूल्यांकन प्रदान करता है। सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक ढांचे के मुख्य घटक इस प्रकार हैं:

i. वैचारिक आधार:

सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक इस समझ पर आधारित है कि सुभेद्यता का निर्धारण खतरों के संपर्क, उन खतरों के प्रति संवेदनशीलता और अनुकूलन क्षमता के आधार पर होता है। यह इन पहलुओं को मापने का प्रयास करता है ताकि लक्षित हस्तक्षेपों को सुविधाजनक बनाया जा सके।

ii. संकेतकों का चयन:

इस ढांचे में विभिन्न आयामों में वर्गीकृत कई संकेतक शामिल हैं:

a. **संवेदनशीलता संकेतक:** ये दर्शाते हैं कि पर्यावरणीय परिवर्तनों से एक समुदाय किस हद तक प्रभावित होता है। इनमें जलवायु-संवेदनशील क्षेत्रों पर आर्थिक निर्भरता, स्वास्थ्य स्थिति और जनसांख्यिकीय कारक शामिल हो सकते हैं।

b. **अनुकूलन क्षमता संकेतक:** ये समुदाय की बदलावों को अपनाने और झटकों से उबरने की क्षमता को मापते हैं। इसमें संसाधनों तक पहुंच, शिक्षा का स्तर, सामाजिक नेटवर्क और संस्थागत समर्थन जैसे संकेतक शामिल हो सकते हैं।

iii. आंकड़ों का और सामान्यीकरण:

चयनित संकेतकों के लिए आंकड़े विभिन्न स्रोतों जैसे सर्वेक्षणों, सरकारी रिपोर्टों और रिमोट सेंसिंग से एकत्र किया जाता है। इसके बाद डेटा को सामान्यीकृत किया जाता है ताकि विभिन्न संकेतकों और समुदायों के बीच तुलना सुनिश्चित की जा सके।

iv. सूचकांक की गणना:

सामाजिक- आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक की गणना सामान्यीकृत संवेदनशीलता और अनुकूलन क्षमता संकेतकों को मिलाकर की जाती है। यह विभिन्न सांख्यिकीय विधियों, जैसे औसत या भारित स्कोरिंग, का उपयोग करके प्रत्येक समुदाय के लिए समग्र सुभेद्यता स्कोर निकालने में मदद करता है।

v. सुभेद्यता स्तरों का वर्गीकरण:

प्राप्त सामाजिक- आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक स्कोर को विभिन्न सुभेद्यता स्तरों (जैसे, बहुत कम, कम, मध्यम, उच्च, बहुत उच्च) में वर्गीकृत किया जाता है। यह वर्गीकरण सबसे अधिक जोखिम में और हस्तक्षेप की आवश्यकता वाले समुदायों की पहचान करने में मदद करता है।

vi. स्थानिक विश्लेषण:

इस ढांचे में अक्सर भौगोलिक सूचना प्रणाली का उपयोग शामिल होता है, जिससे विभिन्न क्षेत्रों में सुभेद्यता का दृश्यांकन किया जा सके। यह स्थानिक विश्लेषण सुभेद्यता के भौगोलिक हॉटस्पॉट की पहचान करने में सहायक होता है।

vii. हितधारकों की भागीदारी:

मूल्यांकन प्रक्रिया में स्थानीय समुदायों और हितधारकों की भागीदारी महत्वपूर्ण है। उनकी राय संकेतकों की प्रासंगिकता और निष्कर्षों की सटीकता को बढ़ा सकती है।

viii. नीति और योजना में अनुप्रयोग:

सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक ढांचा समुदायों की सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता में अंतर्दृष्टि प्रदान कर नीति और योजना को सूचित करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। यह हस्तक्षेपों को प्राथमिकता देने, संसाधनों को आवंटित करने और सुदृढ़ता बढ़ाने के लिए रणनीतियाँ विकसित करने में मदद करता है।

ix. निगरानी और मूल्यांकन:

यह ढांचा समय के साथ सुभेद्यता की निरंतर निगरानी और मूल्यांकन की अनुमति देता है, जिससे परिस्थितियों में बदलाव होने पर रणनीतियों और नीतियों को समायोजित किया जा सके।

सामाजिक- आर्थिक कमजोरियों के प्रेरक के रूप में जलवायु परिवर्तन

जलवायु परिवर्तन सामाजिक-आर्थिक असमानताओं को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाता है, विशेषकर उन समुदायों में जो जलवायु-संवेदनशील क्षेत्रों जैसे मत्स्य पालन, कृषि और पर्यटन पर निर्भर हैं। इसके प्रभाव मौजूदा असमानताओं को बढ़ाने के साथ-साथ हाशिए पर रहने वाले समूहों पर असंगत रूप से असर डालते हैं और कमजोर आबादी के लिए नई चुनौतियां पैदा करते हैं।

❖ हाशिए पर रहने वाले समूहों पर असंगत प्रभाव

कम आय वाले समूहों, महिलाओं और आदिवासी समुदायों के पास जलवायु से संबंधित दबावों का सामना करने के लिए सीमित संसाधन और अनुकूलन क्षमता होती है। जैसे- जैसे जलवायु परिवर्तन बाढ़ और सूखे जैसी घटनाओं की आवृत्ति और तीव्रता को बढ़ाता है, ये आबादियां अपनी आजीविका, स्वास्थ्य और समग्र कल्याण के लिए अधिक जोखिम का सामना करती हैं, जिससे अधिक समृद्ध समुदायों के मुकाबले सामाजिक-आर्थिक अंतर बढ़ता है।

❖ संवेदनशीलता और आर्थिक कमजोरी में वृद्धि

जलवायु परिवर्तन पारिस्थितिक तंत्र को बाधित करता है और संसाधन-आधारित क्षेत्रों को सीधे प्रभावित करता है। मत्स्य पालन समुदायों के लिए, बदले हुए जलीय पारिस्थितिक तंत्र और अनियमित वर्षा के पैटर्न मछली उत्पादन को कम कर देते हैं, जिससे आय में अस्थिरता उत्पन्न होती है। यह बढ़ी हुई संवेदनशीलता उन समुदायों की आर्थिक कमजोरी को और बढ़ा देती है जो पहले से ही अस्थिर आय और सीमित विविधीकरण के अवसरों का सामना कर रहे हैं। इन क्षेत्रों पर निर्भरता उन्हें गरीबी चक्र, रोजगार की असुरक्षा और बाजार में उतार-चढ़ाव के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील बनाती है।

❖ संसाधनों और बुनियादी ढांचे तक सीमित पहुंच

जलवायु परिवर्तन के कारण जल और उपजाऊ भूमि जैसे महत्वपूर्ण संसाधनों की उपलब्धता और गुणवत्ता पर बढ़ता खतरा मंडरा रहा है। जिन समुदायों की इन संसाधनों तक सीमित पहुंच है, वे घटते आपूर्ति को लेकर प्रतिस्पर्धा और संघर्ष का सामना करते हैं। अपर्याप्त बुनियादी ढांचा—जैसे मजबूत आवास, परिवहन और आपातकालीन सेवाएं—उनकी जलवायु घटनाओं से निपटने या उबरने की क्षमता को और कमजोर करता है, जिससे सुभेद्यता के चक्र लगातार बने रहते हैं।

❖ स्वास्थ्य और अंतर-पीढ़ीगत प्रभाव

जलवायु-प्रेरित स्वास्थ्य समस्याएं, जैसे गर्मी से संबंधित बीमारियां, श्वसन विकार और मच्छर-जनित रोग, कमजोर आबादी को असंगत रूप से प्रभावित करती हैं, जिनकी स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुंच होती है। इन स्वास्थ्य चुनौतियों के दीर्घकालिक प्रभाव, शिक्षा में रुकावटों के साथ मिलकर, जलवायु घटनाओं के कारण भविष्य की पीढ़ियों के आर्थिक अवसरों को बाधित करते हैं, जिससे अंतर-पीढ़ीगत गरीबी का चक्र जारी रहता है।

❖ अनुकूलन क्षमता में सामाजिक-आर्थिक असमानताएं

मत्स्य पालन गांव अक्सर गैर-मत्स्य पालन समुदायों की तुलना में अधिक सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता प्रदर्शित करते हैं। जलवायु-संवेदनशील संसाधनों पर निर्भरता, छोटे और सीमांत किसानों जैसे हाशिए पर रहने वाले समूहों की उपस्थिति, इन असमानताओं को और बढ़ा देती है। सीमित वित्तीय समर्थन, अपर्याप्त बुनियादी ढांचा, और कल्याण योजनाओं तक सीमित पहुंच उनकी जलवायु प्रभावों के प्रति प्रभावी रूप से अनुकूलन करने की क्षमता को कम कर देती है।

❖ अनुकूलन रणनीतियों की आवश्यकता

इन कमजोरियों का समाधान करने के लिए समुदायों की सुदृढ़ता बढ़ाने हेतु लक्षित हस्तक्षेपों की आवश्यकता है। एकीकृत बहु-पोषी जलीय कृषि और पुनः परिसंचरण जलीय कृषि प्रणाली जैसी सतत जलीय कृषि प्रथाओं को बढ़ावा देना जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के साथ- साथ आय स्थिरता और आजीविका विविधीकरण प्रदान कर सकता है। इसके अतिरिक्त, ऋण, कल्याण योजनाओं और क्षमता निर्माण कार्यक्रमों तक पहुंच में सुधार करना कमजोर समूहों को बदलते हुए जलवायु के अनुकूल बनने और उसमें फलने-फूलने में सशक्त बना सकता है।

4. सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता पर जलवायु परिवर्तन से जुड़े अध्ययन

4.1 महाराष्ट्र और तमिलनाडु के चयनित जलाशयों में सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता का आकलन

भारत के विभिन्न जलाशयों में सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के अध्ययन से यह पता चलता है कि अंतर्देशीय मत्स्य पालन पर निर्भर समुदायों को महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

1. जलाशयों में सुभेद्यता का आकलन:

➢ डिंभे जलाशय:

डिंभे जलाशय के मछली पकड़ने वाले गांवों के लिए सामाजिक- आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक (सामाजिक- आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक) निम्न से मध्यम स्तर के बीच पाया गया। कुछ गांव, जैसे महालुंगे तारफ अंबेगांव, उच्च सुसुभेद्यता के अंतर्गत थे, जहां अनुकूलन क्षमता कम और जलवायु प्रभावों के प्रति संवेदनशीलता अधिक थी। इस क्षेत्र में औसत वार्षिक वर्षा 616.6 मिमी है, जो लगभग 276 मछुआरों की आजीविका को प्रभावित करती है।

➢ भवानीसागर जलाशय:

भवानीसागर जलाशय के मछली पकड़ने वाले गांवों का सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक बहुत निम्न से निम्न स्तर के बीच पाया गया। सीरुमुगई गांव में यह 0.16 और अन्ना नगर में 0.24 के बीच था। इस क्षेत्र की औसत वार्षिक वर्षा 757.35 मिमी है, लेकिन मछुआरा समुदायों को अभी भी जलाशय पर निर्भरता के कारण सुसुभेद्यता का सामना करना पड़ता है।

➢ वागई जलाशय:

अध्ययन ने करट्टुपट्टी गांव को उच्च सुसुभेद्यता वाले गांव के रूप में पहचाना, जहां उच्च संवेदनशीलता और कम अनुकूलन क्षमता थी। इसके विपरीत, सक्करपट्टी गांव को सबसे कम सुसुभेद्यता वाला माना गया। यह वागई जलाशय पर निर्भर मछली पकड़ने वाले गांवों में सुसुभेद्यता स्तरों में असमानता को दर्शाता है।

➢ पिचीपराई जलाशय:

पिचीपराई और वज़ीचाल जैसे गांवों में उच्च संवेदनशीलता और अनुकूलन क्षमता देखी गई। इससे यह पता चलता है कि ये गांव भले ही सुभेद्य हों, लेकिन प्रतिकूल घटनाओं का सामना करने के लिए कुछ हद तक लचीलापन रखते हैं।

2. सामाजिक अनुकूलन क्षमता का आकलन

अध्ययन ने महाराष्ट्र और तमिलनाडु के विभिन्न जलाशयों के पास मछली पकड़ने वाले गांवों की सामाजिक अनुकूलन क्षमता का आकलन किया।

डिंभे जलाशय:

➢ डिंभे जलाशय के मछली पकड़ने वाले गांवों की SAC सूचकांक 0.51 था, जो जलवायु संबंधी टकों के लिए सीमित अनुकूलन क्षमता को दर्शाता है।

➢ पिचीपराई जलाशय:

पिचीपराई जलाशय के गांवों में सामाजिक अनुकूलन क्षमता उच्च पाई गई। वज़ीचाल गांव में एस ए सी 0.64 और पिचीपराई गांव में 0.67 थी। इन गांवों में 88.2% साक्षरता दर (राज्य औसत से अधिक) ने अनुकूलन क्षमता को मजबूत किया।

➢ भवानीसागर जलाशय:

भवानीसागर जलाशय के गांवों की एस ए सी मध्यम (0.54) थी, जो सामाजिक संसाधनों और बुनियादी ढांचे में सुधार की आवश्यकता को इंगित करती है।

➢ वागई जलाशय:

वागई जलाशय के आसपास के गांवों में एस ए सी भी मध्यम (0.39) थी। इसमें अनुकूलन क्षमता के लिए कुछ संसाधन मौजूद हैं, लेकिन इसमें भी महत्वपूर्ण चुनौतियों को दूर करने की आवश्यकता है।

विभिन्न जलाशयों में सामाजिक अनुकूलन क्षमता भिन्न-भिन्न पाई गई। पिचीपराई जलाशय ने बेहतर शैक्षिक उपलब्धियों के कारण उच्चतम अनुकूलन क्षमता प्रदर्शित की, जबकि डिंभे और वागई जलाशय में सामाजिक अनुकूलन से जुड़ी अधिक गंभीर चुनौतियाँ देखी गईं। ये निष्कर्ष सुभेद्य समुदायों में सामाजिक बुनियादी ढांचे और शैक्षिक अवसरों को सुदृढ़ करने के लिए लक्षित हस्तक्षेपों की आवश्यकता को स्पष्ट रूप से रेखांकित करते हैं।

4.2 जलवायु परिवर्तन के प्रति तटीय मछुआरा परिवारों की सुभेद्यता: गुजरात, भारत का एक अध्ययन

चयनित तटीय आजीविका के लिए सुभेद्यता सूचकांक का निर्माण अनावरण, संवेदनशीलता और अनुकूलन क्षमता के सूचकांकों को मिलाकर किया गया। इस अध्ययन में मछली पालन, अर्थव्यवस्था, सामाजिक स्थिति, पर्यावरण और विकास चालक जैसे पाँच प्रमुख मापदंडों का मूल्यांकन किया गया, जो इन सूचकांकों का निर्धारण करते हैं। यह विश्लेषण गुजरात के जूनागढ़ जिले के चार तटीय गाँवों—ओल्ड लाइट हाउस, भीड़िया, नवाबंदर और राजपारा में किया गया।

पाँच मापदंडों के विश्लेषण के आधार पर, पाया गया कि जलवायु परिवर्तन के कारण अर्थव्यवस्था पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा। चूँकि इस क्षेत्र में मछली पालन अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है, यह अनुकूलन क्षमता की गणना के लिए एक महत्वपूर्ण मापदंड है। अध्ययन के अनुसार, मछली पालन क्षेत्र की अर्थव्यवस्था जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभावों के प्रति अत्यधिक सुभेद्य है। अर्थव्यवस्था के बाद, सामाजिक कारक इस क्षेत्र की संवेदनशीलता को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अध्ययन में पाया गया कि ओल्ड लाइट हाउस, राजपारा और नवाबंदर में

जलवायु परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव आर्थिक पहलुओं पर पड़ा। इसमें ईंधन, उपकरणों और जाल की बढ़ती लागत, खराब होने के कारण होने वाले नुकसान, और मछली पकड़ने के क्षेत्र के विस्तार जैसे कारक शामिल हैं। भीड़िया गाँव में जलवायु परिवर्तन के कारण सबसे अधिक प्रभावित मापदंड पर्यावरण था। इसका मुख्य कारण वेरावल स्थित गुजरात औद्योगिक विकास निगम विशेष आर्थिक क्षेत्र में कारखानों से होने वाला प्रदूषण और माल ढोने वाले परिवहन जहाजों का परिचालन था। अध्ययन के अनुसार, सभी गाँवों में जलवायु परिवर्तन से प्रभावित होने वाला दूसरा सबसे महत्वपूर्ण पहलू सामाजिक मापदंड था। लगभग 37% आबादी ऐसी जगहों पर रहती है जो आपदाओं के प्रति संवेदनशील हैं और जहाँ स्वास्थ्य देखभाल और स्वच्छता की सुविधाएँ न्यूनतम हैं। यह अध्ययन दर्शाता है कि जलवायु परिवर्तन ने तटीय मछुआरा समुदायों के विभिन्न सामाजिक और आर्थिक आयामों पर गहरा प्रभाव डाला है। इन समुदायों की सुभेद्यता को कम करने के लिए लक्षित उपायों की आवश्यकता है, जिसमें पर्यावरणीय प्रबंधन, सामाजिक आधारभूत ढाँचे का सुदृढ़ीकरण, और आर्थिक सुदृढ़ता बढ़ाने के लिए नीतिगत हस्तक्षेप शामिल हैं।

5. सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यताओं का समाधान

सतत मछली पालन समुदायों में सामाजिक- आर्थिक सुभेद्यताओं को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, विशेषकर उन समुदायों में जो प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर हैं।

- **आय स्थिरता:** सतत मछली पालन निरंतर उत्पादन प्रदान करता है, जो मछुआरों के लिए अधिक पूर्वानुमानित आय का स्रोत होता है, जबकि जंगली मछली पकड़ने वाली मछलियों की अस्थिरता, जो अधिक मछली पकड़ने और जलवायु परिवर्तन से प्रभावित होती है, इसकी तुलना में यह स्थिरता प्रदान करता है।
- **रोजगार सृजन:** मछली पालन क्षेत्र मूल्य श्रृंखला में उत्पादन से लेकर विपणन तक रोजगार के अवसर उत्पन्न करता है, जिससे विशेषकर ग्रामीण और तटीय क्षेत्रों में आर्थिक विकास को प्रोत्साहन मिलता है।
- **आजीविका का विविधीकरण:** सतत मछली पालन को अपनाने वाले समुदाय अपनी आय के स्रोतों को विविधित करते हैं, जिससे आर्थिक जोखिमों को कम किया जाता है और झटकों के प्रति लचीलापन बढ़ता है।
- **सीमान्त समूहों का सशक्तिकरण:** सतत मछली पालन में प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण की पहलों का उद्देश्य अक्सर महिलाओं और आदिवासी समूहों को लक्षित करना होता है, जिससे सामाजिक समावेशन बढ़ता है और असमानताओं को कम किया जाता है।
- **खाद्य सुरक्षा और पोषण:** सतत मछली पालन सस्ते, उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन की निरंतर आपूर्ति प्रदान करके खाद्य सुरक्षा और पोषण को बढ़ाता है, जिससे कमजोर आबादी को लाभ होता है और कुपोषण से लड़ने में मदद मिलती है।

पर्यावरणीय रूप से जिम्मेदार प्रथाओं और सामाजिक-आर्थिक लाभों के माध्यम से, सतत मछली पालन एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में उभरता है, जो लचीलापन को बढ़ाता है, सुभेद्यताओं को कम करता है और एक सतत भविष्य में योगदान करता है।

6. सुभेद्यताओं को कम करने में सतत मत्स्य पालन की भूमिका

सतत मत्स्य पालन में जलीय जीवों जैसे मत्स्य, शंखमच्छियाँ और जल पौधों को इस तरह से उगाना शामिल है कि यह वर्तमान आर्थिक और पोषण संबंधी आवश्यकताओं को संतुलित करते हुए पर्यावरणीय संसाधनों को आने वाली पीढ़ियों के लिए संरक्षित रखे। इस दृष्टिकोण में जिम्मेदार संसाधन प्रबंधन को प्राथमिकता दी जाती है, पारिस्थितिकीय प्रभावों को न्यूनतम किया जाता है, और आर्थिक स्थिरता और सामाजिक कल्याण को बढ़ावा दिया जाता है। इंटीग्रेटेड मल्टी- ट्रोफिक एक्वाकल्चर और रिसर्कुलेटिंग एक्वाकल्चर सिस्टम जैसी नवाचारी विधियों के माध्यम से, सतत मत्स्य पालन पर्यावरणीय और सामाजिक-आर्थिक सुसुभेद्यताओं दोनों को संबोधित करता है।

सततता के लिए नवाचारी दृष्टिकोण

1. एकीकृत बहु-पोषी जलीय कृषि:

एकीकृत बहु-पोषी जलीय कृषि प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र की नकल करता है, जिसमें विभिन्न प्रजातियों को एक साथ उगाया जाता है, जिससे एक सहजीवी वातावरण बनता है। उदाहरण के लिए, मत्स्य अपशिष्ट के रूप में पोषक तत्व प्रदान करते हैं, जिन्हें शैवाल द्वारा अवशोषित किया जाता है, जिससे पोषक प्रदूषण कम होता है। शंखमच्छियाँ जैसे मसल्स और सीप पानी को छानकर साफ करती हैं, जो दक्षता और सततता को बढ़ाती हैं। IMTA, जैसे कृत्रिम इनपुट जैसे चारा या उर्वरकों पर निर्भरता को कम करके पर्यावरणीय प्रभाव को घटाता है और संसाधन दक्षता को बढ़ाता है।

2. पुनःपरिसंचरण जलकृषि प्रणाली:

पुनःपरिसंचरण जलकृषि प्रणाली, बंद-लूप सिस्टम का उपयोग करता है, जो पानी को रीसायकल और छानने में मदद करता है, जिससे मत्स्य नियंत्रित वातावरण में बहुत कम पानी का उपयोग करके पाले जा सकते हैं। यह प्रौद्योगिकी ताजे पानी की खपत को न्यूनतम करती है, प्रदूषण को रोकती है, और जंगली पारिस्थितिकियों में अतिक्रमण करने वाली प्रजातियों या रोगों के प्रकोप को समाप्त करती है। पानी की गुणवत्ता और तापमान को नियंत्रित करके, RAS एंटीबायोटिक्स की आवश्यकता को कम करता है और मत्स्य के स्वास्थ्य को बढ़ाता है, जिससे एक सतत और पर्यावरण-अनुकूल उत्पादन प्रक्रिया को बढ़ावा मिलता है।

7. मत्स्य पालन और जलजीव पालन पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अनुकूलन रणनीतियाँ

सतत मत्स्य पालन के माध्यम से अनुकूलन क्षमता का तात्पर्य है उन मत्स्य पालन प्रणालियों और उनसे निर्भर समुदायों की क्षमता, जो पर्यावरणीय परिस्थितियों में बदलाव के साथ विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाले परिवर्तनों के प्रति समायोजित कर सकें। इस क्षमता को विभिन्न सतत प्रथाओं और रणनीतियों के माध्यम से बढ़ाया जा सकता है, जिनमें निम्नलिखित शामिल हैं:

1. प्रजातियों और प्रथाओं का विविधीकरण:

मत्स्य पालन प्रजातियों और प्रथाओं की विविधता को लागू करने से आय के एकल स्रोत पर निर्भरता को कम किया जा सकता है और बाजार में उतार-चढ़ाव और पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति लचीलापन बढ़ाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, समुद्री मत्स्य पालन (मैरिकल्चर) को जोड़ने से ताजे पानी के प्रणालियों से जुड़ी जोखिमों को कम करने में मदद मिल सकती है।

2. प्रबंधकीय प्रथाओं में सुधार:

इंटीग्रेटेड और अनुकूलनात्मक प्रबंधकीय दृष्टिकोण अपनाना, जैसे इकोसिस्टम एप्रोच टू एक्वाकल्चर (EAA), मत्स्य पालन संचालन की सततता को बढ़ा सकता है। इसमें निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में पारिस्थितिकी, सामाजिक और आर्थिक कारकों पर विचार करना शामिल है।

3. जैव सुरक्षा उपाय:

मजबूत जैव सुरक्षा ढांचे स्थापित करना रोगों और आक्रामक प्रजातियों के प्रवेश और फैलाव को रोकने में मदद कर सकता है, जो जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से बढ़ जाते हैं। इसमें जोखिम विश्लेषण और पर्यावरणीय आकलन शामिल हैं ताकि मत्स्य पालन फार्मों को सुरक्षित रखा जा सके।

4. प्रौद्योगिकीय नवाचार:

मत्स्य पालन प्रणालियों की निगरानी और प्रबंधन के लिए नई प्रौद्योगिकियों का उपयोग दक्षता में सुधार कर सकता है और पर्यावरणीय प्रभावों को कम कर सकता है। नवाचारों में बेहतर चारे के मिश्रण, रोग प्रबंधन उपकरण और पर्यावरणीय परिवर्तनों की भविष्यवाणी करने वाली प्रणालियाँ शामिल हो सकती हैं।

5. समुदाय की भागीदारी और क्षमता निर्माण:

स्थानीय समुदायों को निर्णय-निर्माण प्रक्रियाओं में शामिल करना और शिक्षा एवं प्रशिक्षण प्रदान करना उनके अनुकूलन क्षमता को बढ़ा सकता है। समुदायों को उनके संसाधनों का सतत रूप से प्रबंधन करने के लिए सशक्त बनाना लचीलापन को बढ़ावा देता है।

6. वित्तीय उपकरणों तक पहुँच:

सार्वजनिक और निजी बीमा योजनाओं को लागू करना जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाले नुकसान से वित्तीय सुरक्षा प्रदान कर सकता है। इससे मत्स्य पालन ऑपरेटरों को प्रतिकूल घटनाओं से जल्दी उबरने में मदद मिल सकती है।

7. सतत संसाधन उपयोग:

यह सुनिश्चित करना कि मत्स्य पालन की प्रथाएँ स्थानीय संसाधनों को न तो समाप्त करें और न ही पारिस्थितिकी तंत्र को नुकसान पहुँचाएँ, अत्यंत महत्वपूर्ण है। सतत प्रथाओं में जिम्मेदार चारा स्रोत और जंगली मत्स्य भंडार का न्यूनतम उपयोग शामिल है।

8. निगरानी और शोध:

पर्यावरणीय परिस्थितियों और मत्स्य पालन प्रथाओं की निरंतर निगरानी और शोध अनुकूलन प्रबंधन रणनीतियों को सूचित कर सकते हैं। इससे हितधारकों को उभरती चुनौतियों का पूर्वानुमान लगाने और त्वरित प्रतिक्रिया देने में मदद मिलती है।

इन पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करके, सतत मत्स्य पालन में अनुकूलन क्षमता को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाया जा सकता है, जिससे समुदाय जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से बेहतर तरीके से निपट सकते हैं और उनके मत्स्य पालन प्रणालियों की दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित हो सकती है।

निष्कर्ष

मत्स्य पालन वैश्विक खाद्य सुरक्षा, आर्थिक विकास और पर्यावरणीय प्रतिरोधक्षमता को संबोधित करने के लिए एक सतत समाधान के रूप में अपार संभावनाएँ रखता है। हालांकि, यह जलवायु परिवर्तन और सामाजिक-आर्थिक विषमताओं के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है, जो इसकी उत्पादकता और उन लाखों लोगों के आजीविका को खतरे में डालती हैं जो इस पर निर्भर हैं। मत्स्य पालन के भविष्य को सुरक्षित रखने के लिए, यह आवश्यक है कि नवाचार और सतत प्रथाओं को अपनाया जाए, अनुकूलन क्षमता को मजबूत किया जाए, और समुदायों की सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता को संबोधित किया जाए।

इस अध्याय में यह बताया गया है कि सतत मत्स्य पालन प्रणालियाँ, जैसे कि इंटीग्रेटेड मल्टी-ट्रॉफिक एक्वाकल्चर और रीसर्कुलेटिंग एक्वाकल्चर सिस्टम्स, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, जबकि प्रतिरोधक्षमता बढ़ाने और सुभेद्यता को कम करने का कार्य करती हैं। आय स्थिरता को बढ़ावा देने, रोजगार सृजन करने और हाशिए पर पड़े समूहों को सशक्त बनाने के माध्यम से, ये दृष्टिकोण मत्स्य पालन की सामाजिक-आर्थिक और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ाते हैं।

इसके अतिरिक्त, समाजिक- आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक (सामाजिक-आर्थिक सुभेद्यता सूचकांक) जैसे ढांचे समुदायों की सुभेद्यता के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं, जो लक्षित हस्तक्षेपों और सूचित नीति निर्णयों को सक्षम बनाते हैं। अनुकूलन रणनीतियाँ, जैसे कि प्रथाओं का विविधीकरण, प्रौद्योगिकी नवाचार, और समुदाय की भागीदारी, जलवायु चुनौतियों के खिलाफ प्रतिरोधक्षमता बनाने के लिए आवश्यक हैं।

अंततः, एक समग्र दृष्टिकोण जो पर्यावरणीय संरक्षण, सामाजिक समानता और आर्थिक व्यवहार्यता को एकीकृत करता है, मत्स्य पालन के सतत विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। हितधारकों के बीच समन्वित प्रयासों के माध्यम से, मत्स्य पालन नीले अर्थव्यवस्था के एक स्तंभ के रूप में विकसित हो सकता है, जो सभी के लिए एक अधिक सतत और समान भविष्य में योगदान दे सकता है।

संदर्भ

1. डी यंग, सी., सोतो, डी., बाहरी, टी., और ब्राउन, डी., 2012। मत्स्य पालन और जलीय कृषि क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन के लिए स्थिरता निर्माण। कृषि क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन के लिए स्थिरता निर्माण, 23, पृष्ठ 103।
2. यादव, वी.के., अकिलंदेश्वरी, ए., और ओझा, एस.एन., 2021। महाराष्ट्र और तमिलनाडु के चयनित जलाशयों में सामाजिक-आर्थिक संवेदनशीलता का आकलन। जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय स्थिरता, 9(2), पृष्ठ 130-143।
3. कोया, एम., डैश, जी., कुमारी, एस., श्रीनाथ, के.आर., डैश, एस.एस., एम्ब्रोस, टी.वी., श्याम, एस.एस., कृपा, वी., और ज़कारिया, पी.यू., 2017। जलवायु परिवर्तन के प्रति तटीय मत्स्य पालन घरों की संवेदनशीलता: गुजरात, भारत का एक अध्ययन। तुर्की जर्नल ऑफ फिशरीज एंड एक्वाटिक साइंसेस, 17, पृष्ठ 193-203।
4. कृष्णन, पी., अनंतन, पी.एस., पुर्वजा, आर., जॉयसन जो जीवमनी, जे., अमाली इन्फैंटिना, जे., श्रीनिवास राव, सी., आनंद, ए., महेंद्र, आर.एस., सेकर, आई., करीमुल्ला, के., और बिस्वास, ए., 2019। तटीय संवेदनशीलता के कारकों को मानचित्रित करने और जलवायु परिवर्तन अनुकूलन के लिए स्थानिक निर्णय लेने का ढांचा: महाराष्ट्र, भारत का एक अध्ययन। एंबियो, 48, पृष्ठ 192-212।

*

जैविक उपचार – जलकृषि में इसका अनुप्रयोग

केन्युम लोलेन, सुखम मुनिलकुमार, कपिल सुखधाने, सत्य प्रकाश

पिछले कुछ दशकों में, पर्यावरण प्रदूषण दुनिया भर में काफी बढ़ गया है। यह वृद्धि मुख्य रूप से जनसंख्या वृद्धि, तेजी से औद्योगिकीकरण, मानवीय गतिविधियों और अनियमित कृषि प्रथाओं जैसे कारकों के कारण है। इनसे पर्यावरण में खतरनाक अपशिष्टों का निर्माण हुआ है, जिसमें प्लास्टिक, कृषि, घरेलू, रबर, धातु और औद्योगिक अपशिष्ट शामिल हैं। ऐसे अपशिष्ट में अक्सर भारी धातु, पेट्रोलियम तेल, कीटनाशक, हाइड्रोकार्बन (एलिफैटिक, एरोमैटिक और पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन सहित), नाइट्रोएरोमैटिक यौगिक, क्लोरीनयुक्त हाइड्रोकार्बन (जैसे पीसीबी और परक्लोरोइथिलीन), ऑर्गनोफॉस्फोरस यौगिक, कार्बनिक विलायक (जैसे फेनोलिक यौगिक) और थेलेट्स (मेघराज एट अल., 2011) जैसे हानिकारक पदार्थ होते हैं।

पर्यावरण में प्रदूषण का व्यापक प्रभाव जैसे मिट्टी की संरचना इसकी संरचना और उर्वरता दोनों) को नुकसान मिट्टी के सूक्ष्मजीवों के विकास और चयापचय प्रक्रियाओं में बाधा और पौधों, जलीय जीवन और तत्वों के प्राकृतिक चक्र को प्रभावित करता है। ये व्यवधान पारिस्थितिकी तंत्र के समग्र कार्य को नुकसान पहुंचाते हैं और मानव स्वास्थ्य के लिए जोखिम पैदा करते हैं (हरेकृष्ण और कुमार, 2012)। इसे संबोधित करने के लिए, अपशिष्ट प्रबंधन और सफाई प्रयासों में जैविक उपचार विधियों का तेजी से उपयोग किया जा रहा है। ये पर्यावरण के अनुकूल तकनीकें प्रदूषकों को विषाक्तविहीन करने और उन्हें तोड़ने में मदद करती हैं, जो प्रदूषित क्षेत्रों को उनकी मूल स्थिति में बहाल करने का एक लागत प्रभावी, प्राकृतिक और टिकाऊ तरीका प्रदान करती हैं (कुमार आदि , 2018)।

जैविक उपचार को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है जो जीवित जीवों, मुख्य रूप से सूक्ष्मजीवों, पादपों और उनके एंजाइमों का उपयोग करके, दूषित स्थलों के उपचार के दौरान पर्यावरण प्रदूषकों और पर्यावरण अपशिष्ट के मुख्य व घातक घटकों को हटाने, विघटित करने, खनिज बनाने, बदलने और विषहरण करने के लिए उन्हें हानिरहित या कम विषाक्त रूपों में बदल देती है ताकि पर्यावरण की मूल स्थिति में वापस लाया जा सके (अजुबुइके एट अल., 2016)। जैविक उपचार प्रक्रिया का उपयोग विभिन्न रासायनिक प्रदूषकों, जैसे कि कीटनाशकों, पॉलीएरोमैटिक हाइड्रोकार्बन, हैलोजेनेटेड पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन, नाइट्रोएरोमैटिक यौगिकों, धातुओं और औद्योगिक घोलक की सांद्रता और विषाक्तता को कम करने के लिए किया जाता है (दुआ एट अल., 2002)।

जैविक उपचार तकनीक द्वारा दूषित भूजल, मिट्टी, लैगून, अपशिष्ट धाराओं और कीचड़ की सफाई में लागू किया जा सकता है। प्राकृतिक और संशोधित सूक्ष्मजीवों और उनकी प्रक्रियाओं और अनुकूल विकास वातावरण प्रदान करने के लिए उपयुक्त इंजीनियरिंग मॉडल या डिज़ाइन के उचित उपयोग के साथ, जैविक उपचार तकनीकों को दूषित क्षेत्र में सफलतापूर्वक प्रत्यारोपित किया जा सकता है।

जैविक उपचार का सिद्धांत

जैवउपचार में, जीवित जीवों, जैसे सूक्ष्मजीवों (बैक्टीरिया, कवक और शैवाल) या पौधों का उपयोग पर्यावरण में मौजूद खतरनाक प्रदूषकों को विघटित करने और विषहरण करने के लिए किया जाता है और उन्हें कार्बनडाय ऑक्साइड, पानी, सूक्ष्मजीवी बायोमास और मेटाबोलाइट्स (उपोत्पाद जो मूल यौगिक की तुलना में कम विषाक्त होते हैं) में परिवर्तित किया जाता है। ये सूक्ष्मजीव उस दूषित स्थल के मूल निवासी हो सकते हैं या उन्हें अलग किया जा सकता है और जैवउपचार के लिए बाहर से उस दूषित स्थल पर लाया जा सकता है।

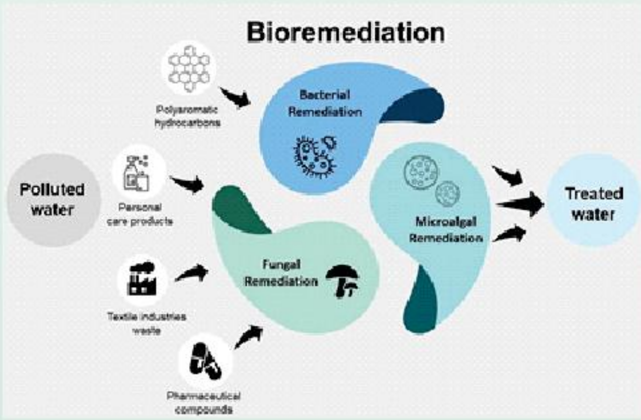

(जैन आदि, 2022)

सूक्ष्मजीव अपनी चयापचय प्रतिक्रियाओं के माध्यम से इन प्रदूषकों को विघटित और रूपांतरित कर उन्हें अपने विकास के लिए उपयोग करते हैं। किसी प्रदूषक के पूर्ण विघटन के लिए कई सूक्ष्मजीवों की क्रिया की आवश्यकता होती है, इसलिए कभी-कभी संभावित सूक्ष्मजीवों को प्रभावी विघटन प्रक्रिया के लिए दूषित स्थल में जोड़ा जा सकता है और इस प्रक्रिया को जैव-संवर्द्धन कहा जाता है। जैव-निम्नीकरण प्रक्रिया अनुकूल पर्यावरण स्थितियों, प्रदूषक के प्रकार और घुलनशीलता, और सूक्ष्मजीवों के लिए प्रदूषक की जैव उपलब्धता पर निर्भर करती है, इसलिए पर्यावरणीय स्थितियों को पर्याप्त सूक्ष्मजीव विकास की अनुकुल करने के लिए नियंत्रित या परिवर्तन किया जाता है और इस प्रकार तेज़ और प्रभावी जैव-निम्नीकरण होता है। सूक्ष्मजीव घातक प्रदूषक को ऑक्सी-अनाक्सी (माइकोबैक्टीरियम, अल्कालिजेन्स, स्फिंगोमोनस, स्यूडोमोनस) और एनारोबिक स्थितियों में अपनी ऊर्जा और कार्बन स्रोत के रूप में उपयोग करते हैं, और इस प्रकार चयापचय गतिविधि के माध्यम से प्रदूषक को कम या गैर विषैले मेटाबोलाइट्स में विघटित या परिवर्तित कर सकते हैं।

जैविक उपचार के प्रकार

जैव-उपचार प्रक्रिया को सामान्य तौर पर एक्स-सीटू उपचार और इन-सीटू जैव-उपचार में वर्गीकृत किया जाता है, जो कि प्रदूषकों की उत्पत्ति, परिवहन और दूषित स्थलों से उनके निष्कासन पर आधारित होता है।

इन-सीटू जैविक उपचार

इसे सबसे उपयुक्त विकल्प माना जाता है क्योंकि इसमें बिना किसी खुदाई या व्यवधान के वास्तविक दूषित स्थलों पर प्रदूषकों का उपचार शामिल है (कुमार आदि, 2018)। इसे आंतरिक इन सीटू जैविक उपचार (बिना किसी वृद्धि के अभ्यास के) या संवर्धित इन सीटू जैविक उपचार (बायोवेंटिंग, बायोस्पार्जिंग और फाइटोरेमेडिएशन) (अजुबुइके आदि, 2016) में विभाजित किया गया है।

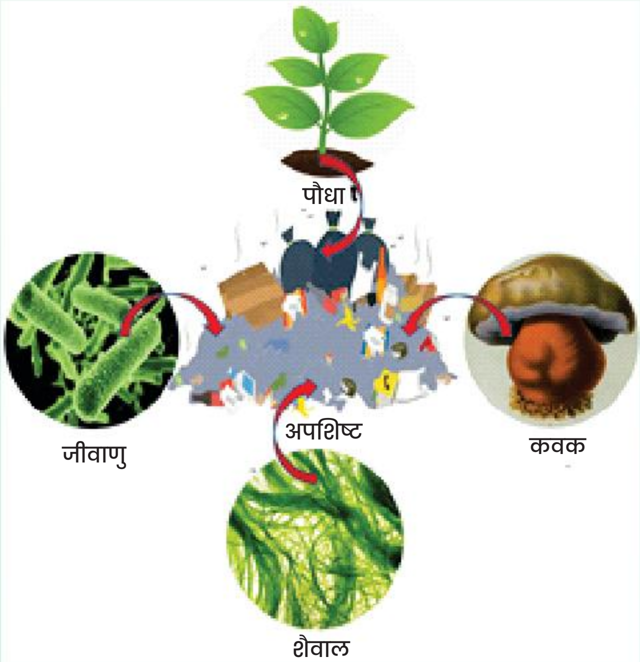

(कुमार और त्यागी, 2022)

हालांकि इन सीटू विधि आर्थिक रूप से व्यवहार्य है, क्योंकि किसी भी खुदाई और परिवहन प्रक्रियाओं के लिए कोई अतिरिक्त लागत की आवश्यकता नहीं होती है (केवल सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बढ़ाने के लिए उपयोग किए जाने वाले उपकरणों को डिजाइन करने और स्थापित करने की लागत की आवश्यकता है), यह एक्स सीटू जैविक उपचार विधियों की तुलना में कम नियंत्रणीय और कम प्रभावी है। इस विधि का उपयोग रंगों, क्लोरीनयुक्त घोलक, भारी धातुओं और हाइड्रोकार्बन से दूषित स्थलों के प्रभावी उपचार के लिए किया जाता है (किम आदि, 2014)।

1. आंतरिक इन-सीटू जैविक उपचार

जैविक उपचार की इस तकनीक को प्राकृतिक क्षीणन के रूप में भी जाना जाता है और यह इन-सीटू जैविक उपचार विधियों में से एक है। इस विधि में बिना किसी मानवीय हस्तक्षेप के दूषित स्थलों का बिना किसी अतिरिक्त सहायता के और निष्क्रिय उपचार शामिल है। इस तकनीक में जैव अपघटनीय और रिकैलिट्रेंट प्रदूषकों के उपचार के लिए ऑक्सी और अनोक्सी दोनों तरह की सूक्ष्मीय प्रक्रियाएँ शामिल हैं

2. संवर्धित इन-सीटू जैविक उपचार

इस प्रकार के इन-सीटू जैविक उपचार में जैव अपघटन प्रक्रिया के लिए माइक्रोबियल विकास को बढ़ाने के लिए खुदाई या पोषक तत्वों, हवा और माइक्रोब्स को जोड़कर प्रदूषित स्थलों को संवर्धित करना शामिल है। बायोऑगमेंटेशन, बायोस्टिम्यूलेशन, बायोस्लर्पिंग, बायोस्पार्जिंग और बायोवेंटिंग जैसी तकनीकें संवर्धित इन-सीटू जैविक उपचार विधि के उदाहरण हैं।

· बायोऑगमेंटेशन

इस प्रक्रिया में, स्वदेशी सूक्ष्मजीवों, अन्य जगहो से सूक्ष्मजीवों या आनुवंशिक रूप से इंजीनियर सूक्ष्मजीवों के एक समूह को दूषित जगह पर संवर्धित किया जाता है ताकि क्षरण प्रक्रिया में सुधार हो सके। इस विधि का उपयोग ज्यादातर सुगंधित और क्लोरीनयुक्त हाइड्रोकार्बन से दूषित नगरपालिका अपशिष्ट जल और मिट्टी के उपचार के लिए किया जाता है।

· बायोस्टिम्यूलेशन

इस इन सीटू जैविक उपचार विधि में, प्रदूषकों के प्रभावी उपचार के लिए दूषित मिट्टी या भूजल में आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति करके स्वदेशी सूक्ष्मजीव आबादी की वृद्धि को उत्तेजित किया जाता है। यह हाइड्रोकार्बन और धातु-दूषित जगहो के उपचार के लिए एक उपयोगी विधि है।

· बायोवेंटिंग

बायोवेंटिंग जैविक उपचार विधि में, क्षरण प्रक्रिया के लिए सूक्ष्मजीव गतिविधि को उत्तेजित करने के लिए दूषित मिट्टी में कुओं के माध्यम से नियंत्रित तरीके से हवा (ऑक्सीजन) और पोषक तत्वों की आपूर्ति की जाती है।

· बायोस्लर्पिंग

बायोस्लर्पिंग की तकनीक कई प्रक्रियाओं को जोड़ती है, जैसे कि वैक्यूम एन्हांस्ड पंपिंग, बायोवेंटिंग और मृदा वाष्प निष्कर्षण, ऑक्सीजन की अप्रत्यक्ष आपूर्ति का उपयोग करके मिट्टी और भूजल प्रदूषकों को हटाने और माइक्रोबियल जैव अपघटन को उत्तेजित करने के लिए।

· बायोस्पार्जिंग

बायोवेंटिंग प्रक्रिया के विपरीत, बायोस्पार्जिंग प्रक्रिया में हवा को मिट्टी की सतह (यानी संतृप्त क्षेत्र) में आपूर्ति की जाती है, जो जैव अपघटन प्रक्रिया के लिए सतह क्षेत्र में वाष्पशील कार्बनिक प्रदूषकों की ऊपर की ओर गति का कारण बन सकती है और माइक्रोबियल गतिविधि को उत्तेजित करके प्रदूषित स्थान से प्रदूषक हटाने को भी बढ़ाती है।

· एक्स सिटू जैविक उपचार

एक्स सिटू बायोरिमेडिएशन विधि में वास्तविक प्रदूषित स्थल से प्रदूषकों को निकालकर दूसरे स्थल तक ले जाना और फिर कई बायोरिमेडिएशन तकनीकों का उपयोग करके प्रदूषकों को हटाना शामिल है।

एक्स सिटू जैविक उपचार तकनीकों को प्रदूषक के प्रकार, प्रदूषण की गहराई और डिग्री, उपचार लागत और प्रदूषित साइट की भौगोलिक और भूवैज्ञानिक विशेषताओं के आधार पर लैंडफार्मिंग, कम्पोस्टिंग, बायोपाइलिंग, बायोरिएक्टर और बायोफिल्टर जैसी

विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है (एटलस और फिलिप, 2005)। एक्स सिटू रेमेडिएशन तकनीकों के साथ उपचार के बाद दूषित मिट्टी का उपयोग भूनिर्माण उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है।

· बायोपाइलिंग

बायोपाइलिंग या हीप तकनीक भूमि खेती और खाद बनाने की विधियों का संयोजन है। इस प्रक्रिया में दूषित मिट्टी के नमूने की प्रयोगशाला में जांच करके क्षरण की संभावना की जांच करना, मिट्टी के समरूपीकरण के लिए मिट्टी के नमूने को यांत्रिक रूप से अलग करना, उत्खनित प्रदूषित मिट्टी का ढेर लगाना, पोषक तत्वों के साथ मिट्टी में और सुधार करना और सूक्ष्मजीव क्षरण को बढ़ाने के लिए जबरन वातन करना शामिल है। इस तकनीक का उपयोग इसकी लागत-प्रभावशीलता के कारण जैव उपचार के लिए तेजी से किया जा रहा है, और जैव उपचार के लिए तापमान, पीएच और पोषक तत्व की स्थिति को नियंत्रित किया जा सकता है।

· बायोपाइलिंग

बायोपाइलिंग या हीप तकनीक भूमि खेती और खाद बनाने की विधियों का संयोजन है। इस प्रक्रिया में दूषित मिट्टी के नमूने की प्रयोगशाला में जांच करके क्षरण की संभावना की जांच करना, मिट्टी के समरूपीकरण के लिए मिट्टी के नमूने को यांत्रिक रूप से अलग करना, उत्खनित प्रदूषित मिट्टी का ढेर लगाना, पोषक तत्वों के साथ मिट्टी में और सुधार करना और सूक्ष्मजीव क्षरण को बढ़ाने के लिए जबरन वातन करना शामिल है। इस तकनीक का उपयोग इसकी लागत-प्रभावशीलता के कारण जैव उपचार के लिए तेजी से किया जा रहा है, और जैव उपचार के लिए तापमान, पीएच और पोषक तत्व की स्थिति को नियंत्रित किया जा सकता है।

भूमि खेती

भूमि खेती तकनीक में, दूषित मिट्टी को समय-समय पर जमीन के ऊपर स्थिर मिट्टी की परत के सहारे खोदकर फैलाया जाता है, और स्वदेशी सूक्ष्मजीवों द्वारा प्रदूषकों के ऑक्सी जैव-अपघटन की अनुमति देने के लिए जोता जाता है। भूमि खेती के दौरान सूक्ष्मजीव गतिविधि को बढ़ाने के लिए जुताई वातन, पोषक तत्व और सिंचाई प्रदान करती है। यह देखा गया है कि भूमि खेती केवल 10-35 सेमी सतह मिट्टी के उपचार के लिए की जा सकती है।

बायोरिएक्टर

इस विधि में, आम तौर पर नियंत्रित परिस्थितियों में दूषित पदार्थों को नष्ट करने के लिए रिएक्टर या कंटेनर का उपयोग किया जाता है। इंजीनियर्ड कंटेनमेंट सिस्टम, जैसे कि घोल या जलीय रिएक्टर, दूषित ठोस पदार्थ (मिट्टी, कीचड़ और तलछट) और पानी के उपचार के लिए उपयोग किए जाते हैं। बायोरिएक्टर विधि का उपयोग बेंजीन, टोल्यून, एथोल बेंजीन और ज़ाइलीन जैसे वाष्पशील कार्बनिक प्रदूषकों से दूषित मिट्टी या पानी के उपचार के लिए किया जाता है।

बायोफ़िल्टर

बायोफ़िल्टर विधि का उपयोग ज़्यादातर गैसीय प्रदूषकों को हटाने के लिए किया जाता है। इस तकनीक में, गैसीय प्रदूषकों को खत्म करने के लिए सूक्ष्मजीवों से भरे स्तंभों का उपयोग किया जाता है।

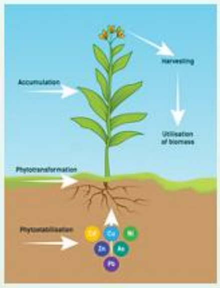

फाइटोरेमेडिएशन

फाइटोरेमेडिएशन एक कारगर जैविक उपचार तकनीक है जो दूषित मिट्टी और पानी के उपचार के लिए पौधों और उनकी जड़ों का उपयोग करती है। अधिकांश शोध अध्ययनों ने बताया है कि, दूषित स्थल पर, पौधों द्वारा प्रदूषक हटाने की प्रक्रिया में निष्क्रिय प्रक्रिया द्वारा प्रदूषकों का अवशोषण, जाइलम प्रवाह द्वारा प्रदूषक का जड़ से अंकुर तक स्थानांतरण और अंकुर में संचय शामिल है (मिगुएल आदि, 2013)

जलकृषि में जैवउपचार का अनुप्रयोग

जलकृषि में जल की गुणवत्ता में सुधार के लिए किया जा रहा नवीनतम प्रयास तालाबों में प्रोबायोटिक्स और एंजाइम्स का प्रयोग है, जिसे बायोरिमेडिएशन के रूप में जाना जाता है, जिसमें कार्बनिक पदार्थों के खनिजीकरण को बढ़ाने और अवांछनीय अपशिष्ट यौगिकों से छुटकारा पाने के लिए तालाबों में सूक्ष्मजीवों में हेरफेर करना शामिल है।

जैविक अपशिष्ट और जैव उपचार

जल निकाय में घुले और निलंबित कार्बनिक पदार्थ में मुख्य रूप से कार्बन श्रृंखलाएँ होती हैं और यह सूक्ष्मजीवों और शैवालों के लिए प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। एक अच्छे जैविक उपचार में ऐसे सूक्ष्मजीव होने चाहिए जो पानी से कार्बनयुक्त अपशिष्टों को प्रभावी ढंग से क्षय करने में सक्षम हों। इसके अलावा, जब ये सूक्ष्मजीव तेज़ी से वृद्धि करते हैं और उनमें अच्छी मात्रा एंजाइमेटिक क्षमता होती है। बैसिलस सबटिलिस, बी. लाइकेनीफॉर्मेस, बी. सेरेस, बी. कोएगुलन्स और प्रजाति फेनिबैसिलस पॉलीमिक्सा जैसे बैसिलस जीनस के सदस्य कार्बनिक मलबे के जैविक उपचार के लिए उपयुक्त बैक्टीरिया के अच्छे उदाहरण हैं।

हालांकि, वे आम तौर पर पानी के स्तंभ में आवश्यक मात्रा में मौजूद नहीं होते हैं, उनका प्राकृतिक आवास तलछट है। जब कुछ बैसिलस उपभेदों को पर्याप्त मात्रा में पानी में मिलाया जाता है, तो वे प्रभाव डाल सकते हैं। वे उपलब्ध कार्बनिक पदार्थों, जैसे कि लीच या अतिरिक्त फ़ीड और झींगा मल के लिए स्वाभाविक रूप से मौजूद

हालांकि, वे आम तौर पर पानी के स्तंभ में आवश्यक मात्रा में मौजूद नहीं होते हैं, उनका प्राकृतिक आवास तलछट है। जब कुछ बैसिलस उपभेदों को पर्याप्त मात्रा में पानी में मिलाया जाता है, तो वे प्रभाव डाल सकते हैं। वे उपलब्ध कार्बनिक पदार्थों, जैसे कि लीच या अतिरिक्त फ़ीड और झींगा मल के लिए स्वाभाविक रूप से मौजूद जीवाणु वनस्पतियों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। जैव-संवर्द्धन के एक भाग के रूप में, बैसिलस का उत्पादन किया जा सकता है, रेत या मिट्टी के साथ मिलाया जा सकता है और तालाब के तल में जमा किया जा सकता है। कार्बनिक मलबे को तोड़ने के लिए बैसिलस के साथ लैक्टोबैसिलस का भी उपयोग किया जाता है। ये बैक्टीरिया कई तरह के एंजाइम बनाते हैं जो प्रोटीन और स्टार्च को छोटे अणुओं में तोड़ते हैं, जिन्हें फिर अन्य जीवों द्वारा ऊर्जा स्रोतों के रूप में लिया जाता है। बड़े कार्बनिक यौगिकों को अपघटन होने से पानी की गंदगी कम हो जाती है।

नाइट्रोजनी यौगिक एवं जैवउपचार

तालाब की अवशोषण क्षमता से अधिक नाइट्रोजन के प्रयोग से नाइट्रोजन युक्त यौगिकों (अमोनिया और नाइट्राइट) के संचय के माध्यम से जल की गुणवत्ता में गिरावट आ सकती है, जिससे मछलियों और झींगा के लिए विषाक्तता उत्पन्न होती सकती है।अमोनिया के प्रमुख स्रोत मल, उत्सर्जन और तलछट प्रवाह, जो कार्बनिक पदार्थों के खनिजीकरण से उत्पन्न होते हैं, तथा कम तलछट से आणविक प्रसार है।

अमोनिया ऑक्सीडाइज़र को पाँच प्रजातियों नाइट्रोसोमोनस, नाइट्रोसोविब्रियो, नाइट्रोसोकोकस, नाइट्रोलोबस और नाइट्रोस्पिरा के अंतर्गत रखा गया है। नाइट्रीकरण न केवल नाइट्रेट का उत्पादन करता है बल्कि पीएच को अम्लीय सीमा की ओर भी बदलता है, जिससे घुलनशील पदार्थों की उपलब्धता में सुविधा होती है। अधिकांश जलीय कृषि तालाबों में नाइट्रेट जमा हो जाता है, क्योंकि उनमें डिनाइट्रीफाइंग फ़िल्टर नहीं होता है।

डिनाइट्रीफाइंग फ़िल्टर नाइट्रेट को नाइट्रोजन में बदलने में मदद करते हैं। यह एक अवायवीय क्षेत्र बनाता है जहाँ अवायवीय बैक्टीरिया विकसित हो सकते हैं और नाइट्रेट को नाइट्रोजन गैस में बदल सकते हैं। नाइट्रीकरण द्वारा उत्पादन के बाद नाइट्रेट कई जैव रासायनिक मार्गों का अनुसरण कर सकता है।

फॉस्फोरस और जैविक उपचार

फॉस्फोरस की सामान्य रूप से मीठे पानी के वातावरण में सीमाएँ होती हैं। माना जाता है कि सामान्य नाइट्रोट/फॉस्फेट अनुपात से कोई भी विचलन इस बात पर निर्भर करता है कि फॉस्फोरस के नाइट्रीकरण या जीवाणु पुनर्जनन की दर को कौन प्रभावित करता है। फॉस्फोरस कार्बनिक यौगिक से PO4 के रूप में कुछ बैक्टीरिया द्वारा उत्पन्न होता है जो फॉस्फोटेस और फाइटेस जैसे एंजाइम का उत्पादन करते हैं। अकार्बनिक फॉस्फोटेस की घुलनशीलता मुख्य रूप से पीएच का एक कार्य है। बैक्टीरिया कार्बनिक और खनिज अम्लों के उत्पादन के माध्यम से इन यौगिकों से PO4 को मुक्त करने में सक्षम हैं।

हाइड्रोजन सल्फाइड एवं जैवउपचार

सल्फर जलीय कृषि में महत्वपूर्ण का विषय है क्योंकि यह एनोक्सिक तलछट में विषाक्तता का कारण है। कार्बनिक लोडिंग H2S उत्पादन को उत्तेजित कर सकती है और बेन्थिक जीवों की विविधता में कमी लाता है। हाइड्रोजन सल्फाइड पानी में घुलनशील है और इसे मछली में गिल क्षति और अन्य बीमारियों का कारण माना जाता है। यूनियनकृत H2S मछली के लिए बेहद जहरीला है जो प्राकृतिक जल के साथ-साथ जलीय कृषि खेतों में भी हो सकता है। मछली की कई प्रजातियों के बायोएसे से पता चलता है कि H2S की किसी भी पता लगाने योग्य सांद्रता को मछली उत्पादन के लिए हानिकारक है।

तालाब के तल पर H2S को तोड़ने वाले प्रकाश संश्लेषक बेन्थिक बैक्टीरिया का उपयोग अनुकूल वातावरण बनाए रखने के लिए जलीय कृषि में व्यापक रूप से किया जाता है। इन बैक्टीरिया में बैक्टीरियो-क्लोरोफिल होता है जो प्रकाश को अवशोषित करता है और अवायवीय परिस्थितियों में प्रकाश संश्लेषण करता है।

क्रोमेटियासी और क्लोरोबियासी प्रकाश संश्लेषक सल्फर बैक्टीरिया के दो परिवार हैं जो सौर ऊर्जा और सल्फाइड का उपयोग करते हुए विकास के लिए अवायवीय स्थितियों का पक्ष लेते हैं। क्रोमेटियासी में कोशिकाओं में सल्फर कण होते हैं लेकिन क्लोरोबियासी उन्हें बाहर निकाल देते हैं। जलकृषि में महत्व के प्रकाश संश्लेषक बैक्टीरिया के सामान्य उदाहरण हैं रोडोस्पिरिलम, रोडोप्स्यूडोमोनास, क्रोमेटियम, थियोसिस्टिस, थियोस्पिरिलम, थियोकैप्सा, लैम्प्रोसिस्टिस, थियोडिक्टियन, थियोपीडिया, एमोबोबैक्टर, क्लोरोबियम, प्रोस्थेकोक्लोरिस, पेलोडिक्टियन और क्लैथ्रोक्लोरिस।

जैविक उपचार के लाभ

जैविक उपचार को वास्तविक दूषित स्थलों पर लागू किया जा सकता है, यह संदूषक को स्थायी रूप से समाप्त कर सकता है, बड़े पैमाने पर संचालित किया जा सकता है, अपशिष्ट उपचार की भौतिक और रासायनिक तकनीकों के साथ जोड़ा जा सकता है, और दीर्घकालिक व्यवहार्यता को भी समाप्त कर सकता है।

यह लागत प्रभावी है, क्योंकि इसकी स्थापना और रखरखाव की लागत बहुत कम है, यह पर्यावरण के अनुकूल है, और इसे अधिक सार्वजनिक स्वीकृति प्राप्त है।

फाइटोरेमेडिएशन तकनीक के लाभ में मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि, कीमती धातुओं की वसूली, धातु के क्षरण और निक्षालन की रोकथाम शामिल है।

जैविक उपचार के नुकसान

जिन्हें माइक्रोबियल प्रक्रिया का उपयोग करके कुछ यौगिकों का विघटन नहीं किया जा सकता है, जैसे धातु, क्लोरीनयुक्त कार्बनिक प्रदूषक और रेडियोन्यूक्लाइड। कभी-कभी सूक्ष्मजीव संदूषकों के चयापचय के दौरान विषाक्त उपोत्पाद या मेटाबोलाइट्स का उत्पादन करते हैं।

वैज्ञानिक रूप से गहन प्रक्रिया होने के कारण, जैविक उपचार को साइट-विशिष्ट स्थितियों के अनुरूप बनाया जाना चाहिए, अर्थात, दूषित साइट के वास्तविक उपचार के लिए तकनीक को

करने के लिए एंजाइमों की अनुपस्थिति के कारण कार्बनिक प्रदूषकों का उपचार करने में असमर्थता शामिल है।

निष्कर्ष

अन्य भौतिक और रासायनिक तरीकों की तुलना में जैविक उपचार एक आशाजनक, अनुकूलनीय, तेजी से बढ़ने वाला, कुशल और पर्यावरण के अनुकूल उपचार दृष्टिकोण है, और यह जैविक हरियाली के रास्ते पर आगे बढ़ने की प्रक्रिया में है। साथ ही, जैविक उपचार तकनीकों, यानी इन सीटू और एक्स सीटू जैविक उपचार, दोनों के तंत्र, सिद्धांत और प्रभावशीलता कई दूषित स्थलों के उपचार में सफल पाए गए हैं।

प्रदूषकों को कुशलतापूर्वक विघटित करने के लिए किस जैविक उपचार तकनीक का उपयोग किया जाना चाहिए, कई कारकों पर विचार किया जाए, जैसे कि प्रदूषित स्थल के भूवैज्ञानिक पैरामीटर (मिट्टी की प्रकृति, प्रदूषक का प्रकार और गहराई), मानव निवास के सापेक्ष प्रदूषित स्थल का स्थान, और प्रत्येक जैविक उपचार अभ्यास की प्रदर्शन विशेषताएँ। जैविक उपचार तकनीक को सकारात्मक और नकारात्मक अर्थों में प्रभावित करने वाला प्रत्येक कारक जैविक उपचार तकनीक की व्यवहार्यता पर निर्भर करता है।

संदर्भ

- एटलस, आर.एम., फिलिप, जे., 2005. जैविक उपचार । वास्तविक दुनिया के पर्यावरण की सफाई के लिए लागू माइक्रोबियल समाधान। ए.एस.एम. प्रेस.
- अजुबुइके, सीसी, चिकेरे, सीबी, ओकपोकवासिली, जीसी, 2016. जैविक उपचार तकनीक-उपयोग की जगह के आधार पर वर्गीकरण: सिद्धांत, लाभ, सीमाएँ और संभावनाएँ। वर्ल्ड जे. माइक्रोबायोल. बायोटेक्नोलोजी. 32 (11), 180.
- दुआ, एम., सिंह, ए., सेथुनाथन, एन., जोहरी, ए., 2002. बायोटेक्नोलॉजी और जैविक उपचार: सफलताएँ और सीमाएँ। एप्लिकेशन माइक्रोबायोल. बायोटेक्नोलॉजी. 59 (2-3), 143-152।
- हरेकृष्ण, एस., कुमार, डी.सी., 2012. जैविक उपचार पर एक समीक्षा। अंतर्राष्ट्रीय जर्नल ऑफ रिसर्च, केम. एनवायरनमेंट 2 (1), 13-21।
- जैन, एम., खान, एस.ए., शर्मा, के., जाधाओ, पी.आर., पंत, के.के., जिओरा, जेड.एम. और ब्लास्कोविच, एम.ए., 2022। अपशिष्ट जल से कार्बनिक प्रदूषकों के बायोरेमेडिएशन के लिए नवीन रणनीतियों का वर्तमान परिप्रेक्ष्य। जैवसंसाधन प्रौद्योगिकी, 344, पृ.126305।
- किम, एस., क्रजमलनिक-ब्राउन, आर., किम, जे.ओ., चुंग, जे., 2014. डीएनए निदान-आधारित बायोस्लर्पिंग तकनीक द्वारा पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन-दूषित स्थलों का उपचार। विज्ञान. कुल पर्यावरण। 497, 250-259।
- कुमार, वी., शाही, एस.के., सिंह, एस., 2018. जैविक उपचार : दूषित स्थलों की बहाली के लिए एक पर्यावरण- स्थायी दृष्टिकोण। सतत विकास के लिए माइक्रोबियल बायोप्रोस्पेक्टिंग। स्प्रिंगर, सिंगापुर, पृ. 115-136.
- कुमार, एन. और त्यागी, बी., 2020. बायोरेमेडिएशन: पर्यावरण प्रबंधन, विषाक्तता, प्रदूषकों के क्षरण के तंत्र, विषहरण और चुनौतियों में सिद्धांत और अनुप्रयोग।
- मिगुएल, ए.एस., रावनेल, पी., रेवटन, एम., 2013. फ्राग्माइट्स ऑस्ट्रेलिस द्वारा ऑर्गेनोक्लोरीन के अवशोषण और स्थानांतरण पर एक तुलनात्मक अध्ययन। जे. हैज़र्ड। मैटर। 244, 60-69।

*

अलंकारी मछली के पोषक तत्वों की आवश्यकता और खाद्य मिश्रण

केदार नाथ मोहंता, सिकेन्दर कुमार, मनीष जयंत, शामना एन., साईप्रसाद भुसारे और समीक्षा मिश्रा

परिचय

अलंकारी मछली एक अरब डॉलर का उद्योग है। एक्वेरियम में मछली पालन औद्योगिक देशों में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है और इसे दूसरा सबसे लोकप्रिय शौक एवं सबसे लोकप्रिय प्रकार का पालतू जलीय पशु माना गया है। नेशनल पेट ओनर्स सर्वे 2023-24 से पता चला कि अकेले संयुक्त राज्य अमेरिका में 11.1 मिलियन मीठे पानी और 2.2 मिलियन खारे पानी की मछलियों को अलंकारी के रूप में रखा गया था। यह 10% से अधिक की वैश्विक वार्षिक वृद्धि दर के साथ सबसे तेजी से बढ़ते मछली पालन क्षेत्र में से एक है। अलंकारी मछली व्यापार की घरेलू वैश्विक वृद्धि 20% से अधिक है और इसमें और वृद्धि की अपार संभावनाएं है क्योंकि भारत में अभी तक इसकी क्षमता का पूरी तरह से उपयोग नहीं किया जा सका है। अलंकारी मछली का वार्षिक कारोबार 9.0 बिलियन अमेरिकी डॉलर है। ऐसा अनुमान है कि भारत में देशी और विदेशी अलंकारी मछलियों की 300 से अधिक किस्मों का व्यापार किया जाता है। भारत में उपलब्ध मीठे पानी की अलंकारी मछलियों की प्रमुख किस्में हैं। बार्ब्स, लोचेस, डेनियोस, मीठे पानी की शार्क, गौरामी, कैटफिश, ईल, बैडिस, ग्लास मछली, शार्क कैटफिश, गप्पी, सुनहरी मछली, प्लैटी, स्वोर्ड टेल, ऑस्कर, फाइटर, सेवेरम, एंजल फिश, डिस्कस, टेट्रास आदि। भारत में बार्ब्स की लगभग 150 प्रजातियाँ उपलब्ध हैं और यह भारत में सबसे बड़े और अप्रयुक्त अलंकारी मछली समूह में से एक है जिसमें बहुत अधिक निर्यात क्षमता है। अलंकारी मछलियाँ जीवित रत्न कहलाती हैं। वैसे तो अलंकारी मछली की कोई परिभाषा नहीं है। कोई भी मछली जिसे उपभोक्ता पसंद करते हैं और जिसे कैद में छोटे वातावरण में पाला जा सकता है, अलंकारी मछली कहलाती है। वैश्विक अलंकारी मछली के व्यापार का 60% से अधिक योगदान मीठे पानी की मछली द्वारा किया जाता है। यद्यपि इसमें अपार संभावनाएं हैं, वैश्विक अलंकारी मछली व्यापार में भारत का योगदान बहुत कम (<0.01) है। एक्वेरियम मछली पालन, जो फोटोग्राफी के बाद दूसरा सबसे बड़ा शौक है, एक लाभदायक व्यवसाय में बदल गया है और इसमें विदेशी मुद्रा अर्जित करने और रोजगार सृजन की काफी गुंजाइश है। भारत में अलंकारी मछली व्यापार के विस्तार के लिए अतिरिक्त लाभ हैं। अनुमान से पता चलता है कि, मूल्य के संदर्भ में, अलंकारी मछली के व्यापार में अधिकांश (कम से कम 90%) मीठे पानी की प्रजातियाँ शामिल हैं।

हाल ही में, अलंकारी मछली के महत्व को काफी हद तक महसूस किया जा रहा है और अब एमपीईडीए, कोच्चिय एनएफडीबी, हैदराबादय आईसीएआर-नई दिल्ली और कई राज्य मत्स्य पालन विभाग बड़े पैमाने पर अलंकारी मछली को बढ़ावा दे रहे हैं। पीएमएमएसवाई, नई दिल्ली के तहत, वर्ष 2023 तक, अलंकारी मछली की 2283 संख्या मछली पालन इकाइयाँ और एकीकृत अलंकारी मछली इकाइयाँ स्थापित की गईं।

मछली आहार सामग्री और उनकी पाचनशक्ति

अच्छी गुणवत्ता वाले अलंकारी मछली खाद्य के उत्पादन के लिए उचित खाद्य सामग्री का चयन और उपयोग बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ऐसा कहा जाता है कि खाद्य उतना ही अच्छा होता है जितनी उसकी सामग्री अच्छी होती है। इसका मतलब है कि गुणवत्तापूर्ण खाद्य तैयार करने के लिए गुणवत्तापूर्ण सामग्री का उपयोग करना होगा। आमतौर पर, प्रजाति विशिष्ट खाद्य तैयार करने के लिए उपयोग की जाने वाली खाद्य सामग्री को मछली की आहार की आदत के आधार पर चुना जाता है।

मछली की पोषक तत्वों और ऊर्जा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए और आर्थिक कारणों से एक घटक को दूसरे के साथ बदलने के लिए, मछली खाद्य निर्माण में उपयोग की जाने वाली सामग्री की पोषक तत्व पाचन क्षमता का ज्ञान आवश्यक है। उत्कृष्ट पोषक संरचना वाले खाद्य पदार्थ का वास्तविक मूल्य तब तक कम होगा जब तक कि इसके पोषक तत्व लक्षित प्रजातियों में ठीक से पच और अवशोषित न हो जाएं। इसलिए, पोषक तत्वों की जैव उपलब्धता अधिक महत्वपूर्ण है। रासायनिक विश्लेषण के साथ, पाचनशक्ति निर्धारण से मछली के संपूर्ण आहार में किसी विशेष प्रोटीन स्रोत के पोषक मूल्य का अधिक गहन अनुमान लगाया जा सकता है। प्रोटीन तभी उपयोगी है जब इसे पचाया जा सके और प्राप्त विभिन्न क्षरण उत्पादों को मछली द्वारा कुशलतापूर्वक अवशोषित किया जा सके। इसलिए, व्यावहारिक आहार तैयार करने से पहले विभिन्न मछली खाद्य सामग्री के स्पष्ट पोषक तत्व और ऊर्जा पाचन क्षमता गुणांक का निर्धारण बहुत आवश्यक है।

मछली की आहार आदत के आधार पर विभिन्न आहार सामग्री (विशेषकर प्रोटीन स्रोत) का उपयोग किया जाता है। जबकि मांसाहारी अलंकारी मछली की प्रोटीन आवश्यकता पशु प्रोटीन स्रोतों के माध्यम से पूरी की जाती है, शाकाहारी और सर्वाहारी मछली के लिए इसे पौधे प्रोटीन स्रोतों से पूरा किया जाना चाहिए जिसमें कुछ पशु प्रोटीन स्रोतों का बहुत कम समावेश होता है। अलंकारी मछली तैयार करने के लिए उपयोग की जाने वाली खाद्य सामग्री की प्रोटीन, लिपिड और ऊर्जा पाचन क्षमता पशु प्रोटीन स्रोतों के लिए 90% से अधिक और पौधों के प्रोटीन स्रोतों के लिए 80-90% से अधिक होनी चाहिए।

अलंकारी मछली आहार तैयार करने के लिए, खली (मूंगफली, सोयाबीन, तिल, सरसों और सूरजमुखी), मछली, सीप, स्क्विड, दुबला झींगाध्झींगा आहार, पशु और हड्डी, चिकन ऑफल, मछली प्रसंस्करण अपशिष्ट, चिकनध् गोमांस जिगर का उपयोग आहार प्रोटीन स्रोतों के रूप में किया जाता है। मक्का, चावल की भूसी और गेहूं की भूसी का उपयोग कार्बोहाइड्रेट स्रोतों के रूप में किया जाता है। मछली का तेल और वनस्पति तेल लिपिड स्रोत के रूप में

उपयोग किया जाता है। चूंकि अलंकारी मछली की कीमत काफी हद तक उसके रंग से निर्धारित होती है, विभिन्न रंग एजेंटों मुख्य रूप से कैरोटीन (प्राकृतिक/कृत्रिम) का उपयोग किया जाता है। कुछ प्राकृतिक रंग, जैसे स्पिरुलिना, चुकंदर की जड़, गाजर, गेंदा की पंखुड़ियाँ, आदि जो कैरोटीन सामग्री में बहुत समृद्ध हैं, अलंकारी मछली में रंजकता रंग को बढ़ाने के लिए उपयोग किए जाते हैं।

मीठे पानी की अलंकारी मछली की पोषक तत्वों की आवश्यकता

आईसीएआर रिसर्च कॉम्प्लेक्स गोवा (अब आईसीएआर-सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ कोस्टल एग्रीसंवर्धन ल रिसर्च इंस्टीट्यूट, गोवा) में किए गए एक बहुत व्यापक अध्ययन से पता चलता है कि अलंकारी मछली की पोषक तत्वों की आवश्यकता लगभग खाद्य मछलियों के समान है। सामान्य मीठे पानी की अलंकारी मछली की पोषक तत्वों की आवश्यकता नीचे तालिका-1 में दी गई है।

तालिका 1. कुछ सामान्य मीठे पानी की अलंकारी मछलियों की पोषक तत्वों की आवश्यकता

मछली	प्रोटीन आवश्यकता (%)		ऊर्जा आवश्यकता (किलो कैलोरी/ग्राम)
गोल्ड फिश	30.0	8-0	3-5
ब्लू गोरामी	35.0	8-0	3-5
गप्पी	30.0	10-0	4-0
स्वर्ड टेल	40.0	6-0	4-0
मोली	40.0	6-0	4-0

पोषक तत्वों की आवश्यकता के आधार पर कुछ व्यावसायिक व्यावहारिक आहार विकसित किए गए हैं जिनका सूत्रीकरण नीचे दिया गया है (तालिका 2)।

तालिका 2. अलंकारी मछली, कैरासियस ऑराटस के लिए विकसित आहार के संघटक

सामग्री	आहार 1	आहार 2	आहार 3	आहार 4
चिकन लिवर	25	---	---	---
झिंगा मील	---	25	---	---
मसल मील	---	---	35	---
मसल मील	---	---	35	---
स्क्विड मील	---	---	---	20
मछली	25	25	25	25
मूंगफली खली	20	20	20	25
गेहु का भूसा	10	10	10	10
मक्का	10	10	10	10
विटामिन और खनिज	3	3	3	3
तेल	2	2	2	2
बाईंडर	5	5	5	5

तलिका 3 - नीली गौरामी, ट्राइकोगैस्टर ट्राइकोप्टेरस के लिए विकसित आहारों का चयन

सामग्री (ड्राय मैटर)	आहार 1	आहार 2	आहार 3	आहार 4	आहार 5	आहार 6
मीठे पानी की मछली प्रसंस्करण अपशिष्ट	45	---	---	---	---	
सुरीमी बायप्रॉडक्ट	---	40	---	---	---	-----
स्क्विड	---	---	28	---	---	-----
म्सल	---	---		30	---	-----
चिकन लिवर	---	---	---	---	33	-----
झिंगा मील	---	---	---	---		32
मछली मील	10	10	10	10	10	10
मूंगफली खली	18	16	20	20	20	18
गेहु का भूसा	23	26	35	34	31	31
विटामिन और खनिज	2	2	2	2	2	2
तेल	-----	4	3	2	2	5
बाईडर	2	2	2	2	2	2

तालिका 4- गप्पी, पॉसीलिया रेटिकुलाटा के लिए विकसित आहार की चयन

सामग्री ड्राय मैटर	आहार 1	आहार 2	आहार 3	आहार 4
सुरीमी बायप्रॉडक्ट	30	-----	-----	-----
स्क्विड	-----	25	-----	-----
मसल	-----		26	-----
झिंगा मील	-----	-----	------	28
मछली मील	10	10	10	10
मूंगफली खली	18	20	16	15
गेहु का भूसा	28	31	35	32
विटामिन और खनिज	5	5	5	5
तेल	7	7	6	8
बाईंडर	2	2	2	2

तालिका 5- स्वर्ड टेल, जिफोफोरस हेलेरी के लिए विकसित आहार के चयन हेतु

सामग्री (ड्राय मैटर)	आहार 1	आहार 2	आहार 3	आहार 4	आहार 5	आहार 6	आहार 7
शंबूक	45	----	----	----	----	----	----
मीठे पानी की मछली प्रसंस्करण अपशिष्ट	----	48	----	----	----	----	----
चिकन अपशिष्ट	----	----	46	----	----	----	----
स्क्विड	----	----	----	36	----	----	----
म्सल	----	----	----	----	38	----	----
चिकन लिवर	----	----	----	----	----	40	----
झिंगा मील	----	----	----	----	----	----	38
मछली मील	10	10	10	10	10	10	10
मूंगफली खली	20	25	25	22	18	22	20
गेहु का भूसा	18	12	15	25	29	23	25
विटामिन और खनिज	5	5	5	5	5	5	5
तेल	2	----	----	2	----	----	2

आमतौर पर उपयोग की जाने वाली मछली खाद्य सामग्री की रासायनिक संरचना:

कुछ सामान्य रूप से उपलब्ध खाद्य सामग्रियों की रासायनिक संरचना तालिका 6 में प्रस्तुत की गई है।

तालिका 6. स्थानीय रूप से उपलब्ध कुछ खाद्य सामग्रियों की अनुमानित संघटन (सरंचना)

सामग्री	ड्राइ मैटर	प्रोटीन	लिपिड	फाइबर	राख
मछली मील	93.8	42	6	3	31.5
झींगा अपशिष्ट	93.7	32	1.5	22.5	40.6
मूंगफली खली	95.4	42	9	8.5	6.9
गेहु का भूसा	89.9	13.9	4	10.5	6.9
कपास के बीज खली	91.9	26	8	21	14
मक्का	91.1	9	4	2.2	1.9
स्पेंट यीस्ट	94.1	43	0.5	-	7.6
टजोला	89.8	13	1.2	9	17.6
प्रेस मड	79.7	9	1.5	3	12
शराब बनाने का अपशिष्ट	91.4	26	15.5	15.5	3
तूर चुन्नी	91.3	12.5	2.2	31	14
चने की चुन्नी	91.8	11	1.8	20	11.3
चावल की भूसी	92.3	12.8	13.8	13.8	10.5
गेहु का भूसा	91.3	12.25	1.8	10.6	6.9
सोयाबीन मील	91.8	48.3	21.2	6.5	8

चावल की पॉलिश	89.9	12.2	1.8	13.2	13.8
चिकन लिवर	15.2	66.1	23.5	2	10.4
झिंगा मील	26.7	64.3	5	1.2	14.1
मसल मील	13.71	57.2	13.4	1	9.4
स्क्विड मील	11.57	70.1	5	1.1	10
ऑईस्टर मील	13.8	48	10.1	1.2	17
घोंघा	30.26	52.5	4	0.8	16
मीठे पानी की मछली प्रसंस्करण अपशिष्ट	32.27	45.5	19	1.8	18
समुद्री पानी की मछली प्रसंस्करण अपशिष्ट	30	56.5	9.6	0.8	16
सुरीमी बायप्रॉडक्ट	32	56	6	1.6	17.5
चिकन ऑफल	29.7	50.75	35	0.6	13.5
केंचुआ	17.25	49	14	0.4	13.2

आहार पेलेट कैसे बनायें?

- आवश्यक मात्रा में सामग्री को पीसकर एक साथ मिलाया जाता है।
- पीसने और मिश्रण करने का काम पोर्टेबल मिनी ग्राइंडर कम पल्वराइजर द्वारा किया जा सकता है।
- 2-3% बाइंडर जोड़ें।
- मौजूद पोषक-विरोधी कारकों, यदि कोई हो, को कम करने के लिए मिश्रण को थोड़े से पानी के साथ भाप दें।
- मिश्रण को ठंडा करें, 5% व्यावसायिक विटामिन और खनिज प्रीमिक्स मिला सकते हैं।
- आवश्यक मात्रा में पानी डालकर आटा गूंथ लें.
- आटा दाना दाना तैयार करने के लिए तैयार मिश्रण है।
- आटे को पोर्टेबल मिनी पेलेट मशीन में प्रोसेस करें।
- खाद्य पेलेट को प्राप्त करने के लिए वांछित पासों का उपयोग करें।
- पेलेट को धूप में सुखाएं/ओवन में सुखाएं और हवा बंद कंटेनर में पैक करें।

मछली को आहार खिलाने कि प्रक्रिया

मछलियों को उतनी मात्रा में आहार दें जितनी तैरने वाली खुराक के लिए 10-15 मिनट में और डूबने वाली गोलियों के लिए 30-45 मिनट में खाई जा सके।

आमतौर पर, घरेलू एक्वेरियम में तैरते हुए खाद्य और तालाबों/टैंकों में एक्वेरियम व्यापारियों द्वारा पाली गई वयस्क/ब्रूड स्टॉक मछली के लिए डूबते हुए दाने वाले खाद्य का उपयोग करने की सलाह दी जाती है। डूबने वाले पेलेट को एक्सट्रूडर का उपयोग करके तैयार किया जाता है। सामुदायिक टैंकों में पाली जाने वाली मछलियों के लिए 30-40% प्रोटीन युक्त सामान्य आहार का उपयोग किया जाता है। लेकिन किसी विशेष प्रजाति के लिए ब्रूडस्टॉक बढ़ाने के लिए, मछली की पोषक तत्वों की आवश्यकता के आधार पर प्रजाति विशिष्ट खाद्य तैयार किया गया और उसका उपयोग किया गया। ब्रूडस्टॉक और लार्वा खाद्य को पीयूएफए, विटामिन (ए, सी और ई) और खनिज (कैल्शियम, फोस्फरस, मग्नीशियम , क्लोराइड, सोडियम और पोटाश) और ट्रेस तत्व (कोबाल्ट , कोपर, आयोडिन, लौह, मैंगनीज़, ज़िंक, सेलिनियम) से समृद्ध किया जाता है।

सन्दर्भ:

- डी सिल्वा, एस.एस. और एंडरसन, टी.ए.,1664। एक्वासंवर्धन में मछली पोषण (खंड 1)। स्प्रिंगर साइंस एंड बिजनेस मीडिया।
- गिलाउम, जे., कौशिक, एस. और बर्गोट, पी., 2001। मछली और क्रस्टेशियंस का पोषण और आहार पदार्थ । स्प्रिंगर साइंस एंड बिजनेस मीडिया।
- हैल्वर, जे.ई. और हार्डी, आर.डब्ल्यू., 2002 (तीसरा संस्करण) आहार निर्माण और निर्माण, मछली पोषण, एकेडमिकप्रेस, यूएसए।

*

भारत में कार्प मछलियों के आनुवांशिक सुधार के लिए चयनात्मक प्रजनन

कृति कुमारी, किरण रसाल, अंगोम लेनिन सिंह, मुजाहिदखान ए पठान, हर्षावर्तिनी एम.

मछलियों में चयनात्मक प्रजनन एक ऐसा अभ्यास है जिसका उपयोग मछली आबादी में इच्छित गुणों को बढ़ाने के लिए किया जाता है। इसे मुख्य रूप से जलीय कृषि, सजावटी मछलियों के प्रजनन और संरक्षण के क्षेत्र में उपयोग किया जाता है। चयनात्मक प्रजनन का मुख्य उद्देश्य ऐसी मछलियाँ पैदा करना है जिनमें विशिष्ट विशेषताएँ हों, जैसे तेजी से बढ़ने की दर, रोग प्रतिरोधक क्षमता, चमकदार रंग या विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति बेहतर अनुकूलता। ऐसे मछलियों का सावधानीपूर्वक चयन और मिलान करके, जिनमें ये इच्छित गुण हों, प्रजनक समय के साथ ऐसी आबादी विकसित कर सकते हैं जो लगातार इन गुणों को प्रदर्शित करती हो। मछलियों में चयनात्मक प्रजनन, कृषि और पशुधन में अपनाई जाने वाली अभ्यासों के समान है, लेकिन इसमें अनुवांशिक विविधता, नैतिक मुद्दे और पर्यावरणीय स्थिरता के संबंध में विशेष चुनौतियाँ और विचार शामिल होते हैं। आनुवांशिकी अनुसंधान और जैव प्रौद्योगिकी में प्रगति इन तकनीकों को और अधिक परिष्कृत कर रही है, जिससे अधिक सटीक चयन और वंशानुगत गुणों की बेहतर समझ संभव हो रही है। इससे अंततः अधिक कुशल और स्थायी मछली प्रजनन अभ्यासों में योगदान मिलता है। भारत में कार्प मछलियों का चयनात्मक प्रजनन अत्यधिक महत्वपूर्ण है, विशेषकर इसके बड़े पैमाने पर जलीय कृषि उद्योग के लिए, जहाँ रोहू, कतला, और मृगल जैसी कार्प प्रजातियाँ मीठे पानी की मछली पालन की रीढ़ हैं। भारत दुनिया के शीर्ष मीठे पानी की मछली उत्पादकों में से एक है, और कार्प प्रजातियों की उत्पादकता और सहनशीलता में सुधार के माध्यम से चयनात्मक प्रजनन, खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण आजीविका और आर्थिक विकास को बढ़ाने के लिए एक प्राथमिकता है। भारत में कार्प में चयनात्मक प्रजनन के महत्व के कुछ मुख्य कारण हैं, उत्पादकता और वृद्धि दर मे चयनात्मक प्रजनन से वृद्धि दर में काफी सुधार हो सकता है, जिससे बाजार के आकार तक पहुँचने में समय कम लगेगा। तेजी से बढ़ने वाली कार्प मछलियाँ संसाधनों का अधिक कुशलता से उपयोग करती हैं, जिससे किसान उच्च मांग को अधिक तेजी और स्थिरता के साथ पूरा कर सकते हैं। रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार से भारतीय कार्प आबादी अक्सर बीमारियों की चुनौती का सामना करती है, जो उत्पादन और लाभप्रदता पर गंभीर प्रभाव डाल सकती हैं।

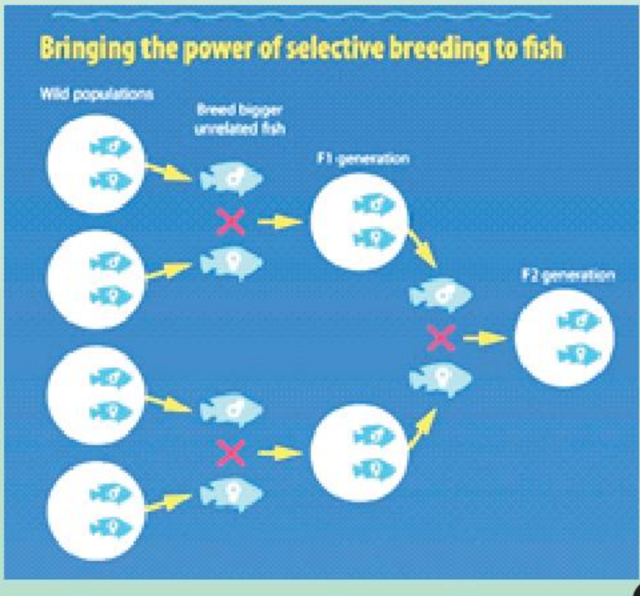

चयनात्मक प्रजनन के माध्यम से ऐसे कार्प प्रजातियाँ विकसित की जा सकती हैं, जिनमें सामान्य बीमारियों के प्रति प्राकृतिक प्रतिरोध हो, जिससे एंटीबायोटिक और अन्य उपचारों पर निर्भरता कम हो सके। फीड रूपांतरण दक्षता में वृद्धि क्योंकी जलीय कृषि में फीड सबसे बड़ा खर्च होता है। चयनात्मक प्रजनन कार्यक्रम ऐसे कार्प उत्पन्न कर सकते हैं, जो फीड का अधिक कुशलता से उपयोग करते हैं, जिससे उत्पादन लागत कम होती है और मछली पालन छोटे स्तर के किसानों के लिए अधिक आर्थिक रूप से व्यवहार्य बनता है। पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति बेहतर अनुकूलता क्योंकी भारत में विभिन्न जलवायु और जल निकाय हैं, जिससे ऐसी कार्प प्रजातियों को विकसित करना महत्वपूर्ण है जो विभिन्न परिस्थितियों में जीवित रह सकें, जैसे तापमान, जल की गुणवत्ता और लवणता के स्तर में बदलाव। यह अनुकूलता मछली पालन को विभिन्न क्षेत्रों में संभव बनाती है, जिससे पूरे देश में जलीय कृषि का विस्तार होता है। जलीय कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्थाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो रोजगार और प्रोटीन का एक विश्वसनीय स्रोत प्रदान करती है। चयनात्मक प्रजनन के माध्यम से कार्प प्रजातियों को बेहतर बनाना सीधे खाद्य सुरक्षा का समर्थन करता है, जिससे मछली पालन अधिक उत्पादक और छोटे किसानों के लिए सुलभ हो जाता है। चयनात्मक प्रजनन, जब स्थायी रूप से किया जाता है, कार्प आबादी में आनुवांशिक विविधता को संरक्षित करने में मदद कर सकता है, जिससे कठोर और सहनशील प्रजातियाँ उपलब्ध हो सकें। यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि यह प्राकृतिक आवासों में क्षरण और अत्यधिक मछली पकड़ने के कारण दबाव का सामना कर रही जंगली आबादी के संरक्षण में मदद करता है। भारत में कार्प मछलियों में चयनात्मक प्रजनन पर जोर, मछली उत्पादन को बढ़ावा देने के राष्ट्रीय प्रयासों जैसे नीली क्रांति पहल के अनुरुप है, जिसका उद्देश्य बेहतर प्रजनन, स्थायी प्रथाओं और उन्नत उत्पादकता के माध्यम से जलीय कृषि उद्योग को सुदृढ़ बनाना है। भारत के विभिन्न संस्थानों मे कार्प मछलियों के चयनात्मक प्रजनन के लिए कई अनुसंधान परियोजना चल रहे हैं। चयनात्मक प्रजनन कार्यक्रमों के तहत मछलियों की प्रजातियाँ नीचे वर्णित की गई हैं।

डायअलिल 1	डायअलिल 2
गंगा नदी	गोमती नदी
यमुना नदी	सतलज नदी
स्थानीय (फार्म) रोहू	ब्रह्मपुत्र नदी

रोहू (लैबियो रोहिता)

डायअलिल 1 डायअलिल 2 गंगा नदी गोमती नदीयमुना नदीसतलज नदीस्थानीय (फार्म) रोहूब्रह्मपुत्र नदी रोहू तीन भारतीय प्रमुख कार्प में से एक है जो पॉलीकल्चर में सबसे प्रमुख प्रजाति है, जो कतला (कतला कतला) और मृगल (सिरहिनस मृगाला) के साथ उच्च संगतता रखता है। इसकी तेज़ वृद्धि और उपभोक्ता मांग इसे भारत, बांग्लादेश और आस-पास के क्षेत्रों में फार्म की जाने वाली प्रमुख मीठे पानी की प्रजाति बनाते हैं। इसके महत्व के कारण, भारत में चयनात्मक प्रजनन के प्रयास आनुवंशिक सुधार पर केंद्रित हैं। प्रारंभिक जीवन में, रोहू मुख्य रूप से प्राणिप्लवक जैसे कि रोटिफ़र्स और क्लेडोसेरन्स का सेवन करता है, जबकि फ़ाइटोप्लांकटन एक पूर्तिकर खाद्य स्रोत के रूप में होता है। 1992 में, भा.कृ.अनु.प.-CIFA ने नॉर्वे के एक्वाकल्चर रिसर्च इंस्टीट्यूट (AKVAFORSK) के साथ साझेदारी में भारत में रोहू के चयनात्मक प्रजनन की शुरुआत की ताकि इसके विकास दर को बढ़ाया जा सके। इससे 1997 में "जयन्ती" रोहू का विकास हुआ, जिसका नाम भारत की 50वीं स्वतंत्रता वर्षगांठ (स्वर्ण जयन्ती) के सम्मान में रखा गया। रोहू का प्रजनन चयन उसकी बहुतायत उपभोक्ता मांग और पॉलीकल्चर सिस्टम में अपेक्षाकृत धीमी वृद्धि के कारण किया गया।

रोहू की मूल जनसंख्या का संग्रह विभिन्न स्रोतों से किया गया है। पांच पीढ़ियों के चयनात्मक प्रजनन के बाद, जयन्ती रोहू ने प्रति पीढ़ी औसतन 17% आनुवंशिक लाभ प्राप्त किया। वर्तमान में, नौ पीढ़ियों के बाद, यह प्रति पीढ़ी 18% वृद्धि दिखा रहा है। सभी फील्ड परीक्षण केंद्रों में, जयन्ती रोहू ने स्थानीय हैचरी स्टॉक की तुलना में लगातार बेहतर विकास दक्षता प्रदर्शित की है।

जयंती रोहु और इम्प्रूव्ड कतला (रसाल आदि,2022)

कतला (कतला कतला)

कतला, रोहू के बाद भारतीय प्रमुख कार्प में दूसरा सबसे महत्वपूर्ण मछली है, जो अपनी तेज़ वृद्धि, स्वाद और बाजार मांग के लिए लोकप्रियता प्राप्त कर रही है। भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश की प्रमुख नदियों की मूल निवासी, कतला का एक्वाकल्चर में उच्च मूल्य है। जयन्ती रोहू की सफलता के बाद, भा.कृ.अनु.प.-CIFA ने कतला के लिए एक चयनात्मक प्रजनन कार्यक्रम शुरू किया, जिसका मुख्य उद्देश्य वृद्धि दर को बढ़ाना है। प्रभावी चयनात्मक प्रजनन के लिए मूल जनसंख्या में आनुवंशिक भिन्नता का गहन मूल्यांकन आवश्यक है, क्योंकि दीर्घकालिक आनुवंशिक लाभ इस भिन्नता, प्रजनन स्टॉक का उचित चयन, और पीढ़ियों में निरंतर रखरखाव पर निर्भर करता है।

भारत के विभिन्न स्थानों से नौ कतला स्ट्रेन एकत्र किए गए ताकि मूल जनसंख्या स्थापित की जा सके, और इसके बाद फ्राई को भा.कृ.अनु.प.-CIFA में स्थानांतरित किया गया।

प्रकार	राज्य
गंगा नदी	पटना (C01)
सुवर्णरेखा नदी	बालासोर (C02)
अवाला सिद्धि हैचरी	पश्चिम बंगाल (C03)
राज्य मत्स्य हैचरी,	ओडिशा (C04),
कुमार स्वामी हैचरी,	आंध्र प्रदेश (C05)
निलू घोष हैचरी, कोलकाता,	पश्चिम बंगाल (C06)
साईं राम हैचरी	आंध्र प्रदेश (C07)
भा.कृ.अनु.प.-CIFA फार्म, कौसल्यागंगा,	भुवनेश्वर (C08)
भा.कृ.अनु.प.- राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिकी संसाधन ब्यूरो (भा.कृ.अनु.प.-NBFGR)	उत्तर प्रदेश (C09)

यह अध्ययन, जो 2013-2014 में शुरू हुआ, खेती की गई और जंगली कतला प्रजातियों के प्रदर्शन पर सीमित दस्तावेज़ीकरण को संबोधित करता है। ऐसे डेटा किसानों के लिए महत्वपूर्ण हैं जो उच्च प्रदर्शन करने वाले बीजों की तलाश कर रहे हैं और भारत में चयनात्मक प्रजनन के लिए मूल जनसंख्याओं का अनुकूलन कर रहे हैं। प्रजातियों के बीच प्रदर्शन के अंतर कई पीढ़ियों में देखे गए चयन के उत्तर से मेल खा सकते हैं।

राज्य
मध्य प्रदेश (एमपी)
हरियाणा (एचआर)
त्रिपुरा (टीआर)
आंध्र प्रदेश (एपी)
मणिपुर (एमएन)
महाराष्ट्र (एमएच)

इस अध्ययन में, तीन नदी प्रजातियों (गंगा नदी के दो विभिन्न स्थलों से, सी01 और सी09) और एक सुवणरिखा नदी (सी02) से, साथ ही छह फार्म-पालित प्रजातियों का विकास प्रदर्शन के लिए मूल्यांकन किया गया। पटना, बिहार की गंगा प्रजाति (सी01) ने उत्तर प्रदेश की प्रजाति (सी09) और अन्य प्रजातियों की तुलना में महत्वपूर्ण रूप से बेहतर वृद्धि दिखाई। छह हैचरी प्रजातियों ने भी सुवणरिखा (सी02) और गंगा (सी09) नदी प्रजातियों को पीछे छोड़ दिया, जो हैचरी में बेहतर प्रजनन प्रबंधन प्रथाओं का समर्थन करती है। प्रदूषण और हैचरी स्टॉक्स के साथ मिलावट नदी प्रजातियों को प्रभावित कर सकती है, और जीनोटाइप-पर्यावरण अंतः क्रिया का आकलन करने के लिए विभिन्न कृषि- जलवायु स्थितियों में आगे की परीक्षण की आवश्यकता है।

कॉमन कार्प (साइप्रिनस कार्पियो)

भारत में आंतरिक लवणीय जल कृषि के लिए अनुकूलित साइप्रिनस कार्पियो (लिनियस, 1758) की एक नस्ल विकसित करने के लिए वर्तमान में एक चयनात्मक प्रजनन कार्यक्रम चल रहा है। भा.कृ.अनु.प.-सीआईएफई में, भारत के विभिन्न भौगोलिक आबादीयों के सामान्य कार्प ने चयनात्मक प्रजनन के लिए नींव आबादी का गठन किया।

वैश्विक भूजल लवणीकरण को देखते हुए, लवण- सहिष्णु नस्लों का विकास महत्वपूर्ण है। सामान्य कार्प 12 पीपीटी तक की लवणता सहन कर सकती है, हालांकि 15 पीपीटी पर मृत्यु दर बढ़

जाती है, और यह उत्तर भारत की कठोर सर्दियों में जीवित रह सकती है। भा.कृ.अनु.प.-सीआईएफई ने आंतरिक कृषि के लिए तेजी से बढ़ने वाली, कम लवण सहिष्णु नस्ल के लिए एक चयनात्मक प्रजनन कार्यक्रम शुरू किया है, जिसमें मध्य प्रदेश, हरियाणा, त्रिपुरा, आंध्र प्रदेश, मणिपुर और महाराष्ट्र से विभिन्न जनसंख्याओं का उपयोग किया गया है। परिणाम मे ट्रस विश्लेषण स्टॉक में भिन्नता को दर्शाता है, जिसमें आंध्र प्रदेश का एक अलग समूह दिखता है और कॉमन कार्प में यौन द्विरूपता को प्रकट करता है। माइटोकोंड्रिया डीएनए डी-लूप विश्लेषण आंध्र प्रदेश को विशेष रूप से अलग बताते हुए इन निष्कर्षों का समर्थन करता है।

कार्प मछलियों की चयनात्मक प्रजनन में वांछनीय लक्षणों के साथ व्यक्तियों की इच्छानुरूप समागम करवाना शामिल है, ताकि भविष्य की पीढ़ियों में विशिष्ट विशेषताओं को बढ़ाया जा सके। इस अभ्यास का उद्देश्य विकास दर, रोग प्रतिरोधक क्षमता, आकार, रंग और प्रजनन प्रदर्शन जैसे पहलुओं में सुधार करना है। इन लक्षणों के आधार पर जनक मछलियों का सावधानीपूर्वक चयन करके, जल कृषि विशेषज्ञ ऐसे नस्लें बना सकते हैं जो वाणिज्यिक बाजारों और मनोरंजक मछली पकड़ने की मांगों को बेहतर ढंग से पूरा करती हैं। इस प्रक्रिया में अक्सर कठोर आनुवांशिक परीक्षण और मूल्यांकन शामिल होते हैं, जो प्रजनकों को उन विशेषता को बढ़ाने मे मदद करते हैं जो उपज बढ़ाते हैं और उत्पादन लागत को कम करते हैं, साथ ही साथ आनुवंशिक विविधता को बनाए रखते हैं। समय के साथ, चयनात्मक प्रजनन ने लोकप्रिय कार्प किस्मों के विकास की ओर अग्रसर किया है, जैसे कि कोइ और मिरर कार्प, जो अपनी सौंदर्य गुणों और जल कृषि में बेहतर प्रदर्शन के लिए सराहे जाते हैं। इसलिए भारत के कृषि परियोजनाओं के लिए मछलियों में चयनात्मक प्रजनन महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से स्थानीय पर्यावरण के अनुकूल तन्यक, उच्च-उत्पादक नस्लों के विकास के लिए। वृद्धि दर, रोग प्रतिरोध और लवण सहिष्णुता जैसी विशेषतायें को बढ़ाकर, भा.कृ.अनु.प. और अन्य अनुसंधान संस्थानों द्वारा संचालित वर्तमान चयनात्मक प्रजनन कार्यक्रम उत्पादकता और स्थिरता को बढ़ाने का लक्ष्य रखते हैं। ये परियोजनाएँ मछली के प्रोटीन की बढ़ती मांग को पूरा करने के साथ-साथ भूजल लवणीकरण और भिन्न जलवायु जैसे चुनौतियों का सामना करने के लिए महत्वपूर्ण हैं। चयनात्मक प्रजनन भारत के मछली पालन क्षेत्र को खाद्य सुरक्षा, आर्थिक विकास और विविध खेती की परिस्थितियों में सतत संसाधन उपयोग के माध्यम से सशक्त बनाता है।

*

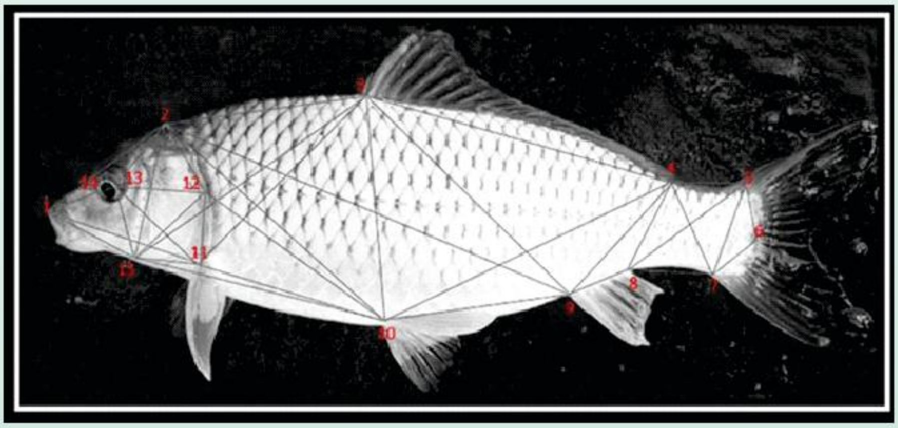

कॉमन कार्प (लालरामनुनसंगा आदि, 2024)

ब्लू कार्बन क्रेडिट: जलवायु परिवर्तन के लिए एक प्रकृति-आधारित समाधान

रंजना चौधरी, विनोद कुमार यादव एवं विद्या श्री भारती और अर्पिता शर्मा

परिचय

जलवायु परिवर्तन के प्रति वैश्विक जागरूकता में वृद्धि ने कार्बन क्रेडिट जैसी नवाचारी बाजार-आधारित समाधानों को जन्म दिया है, जो ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लिए आर्थिक उपकरण के रूप में काम करते हैं। सरल शब्दों में, एक कार्बन क्रेडिट एक टन कार्बन डाइऑक्साइड या इसके समकक्ष किसी अन्य ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन का अधिकार दर्शाता है। कार्बन क्रेडिट प्रणाली संगठनों, उद्योगों, और सरकारों को उनके कार्बन पदचिह्न कम करने के लिए प्रोत्साहित करती है। ये क्रेडिट प्रायः दो प्रकार के बाजारों में व्यापार किए जाते हैं: विनियमित बाजार (सरकार द्वारा नियंत्रित) और स्वैच्छिक बाजार (जहां कंपनियाँ नियामक आवश्यकताओं से परे उत्सर्जन की भरपाई का संकल्प करती हैं)। पारंपरिक रूप से, कार्बन क्रेडिट उत्पन्न करने वाले प्रोजेक्ट में नवीकरणीय ऊर्जा, वनीकरण और ऊर्जा दक्षता सुधार शामिल होते हैं। हालांकि, इस क्षेत्र में एक नया क्षेत्र सामने आ रहा है: ब्लू कार्बन क्रेडिट। ये पारिस्थितिकी तंत्र न केवल प्रकृति के संरक्षण के नए रास्ते खोलते हैं, बल्कि वित्तीय प्रोत्साहन भी प्रदान करते हैं, जिससे पर्यावरण और स्थानीय समुदायों के लिए एक लाभदायक स्थिति उत्पन्न होती है।

ब्लू कार्बन क्रेडिट

ब्लू कार्बन उन तटीय और समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों में संग्रहीत कार्बन को संदर्भित करता है, जैसे कि मैंग्रोव, समुद्री घास, और खारे दलदल। ये पारिस्थितिकी तंत्र बड़ी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर उसे जैविक सामग्री (पौधों) और तलछट में लंबे समय तक संग्रहीत करने में सक्षम होते हैं। उदाहरण के लिए, मैंग्रोव पारिस्थितिकी तंत्र प्रति हेक्टेयर चार से पाँच गुना अधिक कार्बन अवशोषित कर सकते हैं, जबकि स्थलीय वन इतने सक्षम नहीं होते। ब्लू कार्बन क्रेडिट विशेष रूप से इन तटीय और समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों के संरक्षण और पुनर्स्थापन से उत्पन्न होते हैं। इन क्रेडिटों से तटीय समुदायों और पर्यावरण संगठनों को आर्थिक लाभ मिलता है, साथ ही जलवायु शमन प्रयासों में योगदान करने का अवसर भी।

ब्लू कार्बन क्रेडिट कैसे काम करते हैं?

ब्लू कार्बन क्रेडिट उत्पन्न करने के लिए कई महत्वपूर्ण चरणों का पालन किया जाता है: सबसे पहले, तटीय पारिस्थितिकी तंत्र में पौधों और मिट्टी में संग्रहीत कार्बन का अनुमान लगाया जाता है। परियोजना को मान्य मानकों जैसे वेरिफाइड कार्बन स्टैंडर्ड (VCS) या गोल्ड स्टैंडर्ड का पालन करना अनिवार्य है। प्रमाणन के बाद, ये क्रेडिट स्वैच्छिक कार्बन बाजारों में व्यवसायों या सरकारों को बेचे जा सकते हैं। इंडोनेशिया और केन्या जैसे देशों ने सफलतापूर्वक ब्लू कार्बन परियोजनाएँ शुरू की हैं, जहाँ पुनर्स्थापित मैंग्रोव जंगल कार्बन क्रेडिट उत्पन्न करते हैं और जैव विविधता संरक्षण में सहायक होते हैं।

ब्लू कार्बन क्रेडिट का वैश्विक महत्व

पेरिस समझौते के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए ब्लू कार्बन क्रेडिट जलवायु कार्यनीतियों का एक अभिन्न हिस्सा बन रहे हैं। इंडोनेशिया, केन्या और कोलंबिया जैसे देशों ने पहले से ही मैंग्रोव और अन्य तटीय पारिस्थितिकी तंत्रों को पुनर्जीवित करने के लिए ब्लू कार्बन कार्यक्रमों की शुरुआत की है। संयुक्त राष्ट्र और विश्व बैंक जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठन ब्लू कार्बन को मुख्यधारा के कार्बन बाजारों में लाने के लिए ढांचे विकसित कर रहे हैं। बड़ी कंपनियाँ भी अपने उत्सर्जन की भरपाई के लिए ब्लू कार्बन क्रेडिट की ओर रुख कर रही हैं, जो पर्यावरणीय मूल्य और सार्वजनिक सद्भावना दोनों के लिए लाभकारी है। इसके अलावा, समुद्री पारिस्थितिक तंत्र से जुड़े कार्बन क्रेडिट टिकाऊ विकास लक्ष्यों (SDGs) के साथ मेल खाते हैं, विशेष रूप से जलवायु कार्रवाई (SDG 13) और समुद्री जीवन (SDG 14) के लक्ष्यों के साथ। जैसे-जैसे उच्च गुणवत्ता वाले कार्बन क्रेडिट की माँग बढ़ती है, ब्लू कार्बन परियोजनाएँ अपनी बहु-आयामी पारिस्थितिकीय और सामाजिक लाभों के कारण एक प्रीमियम मूल्य प्रदान करती हैं।

भारत में तटीय क्षमता को अनलॉक करना

भारत, जिसकी विस्तृत तटरेखा है और विश्व के 3.3% मैंग्रोव वनों का घर है, ब्लू कार्बन क्षेत्र में अग्रणी बनने की अच्छी स्थिति में है। सुंदरबन और गोदावरी डेल्टा जैसे तटीय क्षेत्र ब्लू कार्बन परियोजनाओं के लिए बड़े अवसर प्रस्तुत करते हैं। इन क्षेत्रों में मैंग्रोव संरक्षण से कार्बन क्रेडिट उत्पन्न कर जलवायु सहनशीलता और स्थानीय आजीविका को बढ़ावा दिया जा सकता है। भारत में ब्लू कार्बन पहल तटीय समुदायों और मछुआरों को कार्बन क्रेडिट व्यापार के माध्यम से पूरक आय प्रदान कर सकती है। राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (NAPCC) के तहत कार्बन बाजारों की शुरुआत से ब्लू कार्बन क्रेडिट को बढ़ावा मिल सकता है, जिससे संरक्षण को आर्थिक रूप से आकर्षक बनाया जा सकता है। उचित नीति समर्थन के साथ, भारत ब्लू कार्बन क्रेडिट का वैश्विक केंद्र बन सकता है, जहाँ संरक्षण प्रयासों को आर्थिक विकास के साथ जोड़ा जा सके।

चुनौतियाँ और अवसर

हालाँकि ब्लू कार्बन क्रेडिट कई लाभ प्रदान करते हैं, परंतु चुनौतियाँ भी हैं। सटीक निगरानी और प्रमाणन महंगा हो सकता है, और कुछ क्षेत्रों में तकनीकी विशेषज्ञता की कमी हो सकती है। इसके अतिरिक्त, ब्लू कार्बन क्रेडिट की आर्थिक और पर्यावरणीय क्षमता के बारे में जागरूकता सीमित है। फिर भी, संभावनाएँ अत्यधिक हैं। सरकारें ब्लू कार्बन को पेरिस समझौते के तहत अपने राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (NDCs) में शामिल कर रही हैं। जैसे-जैसे अधिक कंपनियाँ नेट-जीरो लक्ष्यों को पूरा करने का प्रयास करती हैं, कार्बन क्रेडिट की माँग बढ़ रही है। यह बड़े पैमाने पर संरक्षण प्रयासों के लिए धन जुटाने का मार्ग प्रदान करता है।

मछली पालन और तटीय समुदायों पर प्रभाव

स्वस्थ मैंग्रोव पारिस्थितिकी तंत्र मछली पालन को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। ये कई मछली प्रजातियों के लिए प्रजनन और पोषण स्थल के रूप में कार्य करते हैं, जो स्थानीय मछली पकड़ने वाले उद्योगों का समर्थन करते हैं। ब्लू कार्बन क्रेडिट उत्पन्न करने वाली परियोजनाएँ स्थानीय समुदायों के साथ राजस्व साझा कर सकती हैं, जिससे मछुआरों और अन्य हितधारकों को संरक्षण प्रयासों से लाभ होता है। मैंग्रोव पुनर्स्थापन के माध्यम से तटीय समुदाय न केवल अपनी आजीविका की रक्षा कर सकते हैं, बल्कि कार्बन क्रेडिट के माध्यम से नई आय के स्रोत भी खोल सकते हैं। यह दोहरा लाभ—मत्स्य उत्पादकता में वृद्धि और कार्बन क्रेडिट से आय—तटरेखा के साथ सतत विकास के लिए ब्लू कार्बन को एक आशाजनक समाधान बनाता है।

निष्कर्ष

ब्लू कार्बन क्रेडिट जलवायु परिवर्तन का सामना करने के साथ-साथ जैव विविधता और सतत आजीविका को बढ़ावा देने का एक शक्तिशाली साधन हैं। तटीय पारिस्थितिक तंत्रों का संरक्षण और पुनर्स्थापन करके, हम महत्वपूर्ण पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक लाभों को अनलॉक कर सकते हैं। जैसे-जैसे कार्बन ऑफ़सेट्स की माँग बढ़ रही है, यह समय है कि नीति-निर्माता, व्यवसाय और समुदाय ब्लू कार्बन परियोजनाओं में निवेश करें। इन पारिस्थितिक तंत्रों की रक्षा करना न केवल एक स्वस्थ ग्रह को सुनिश्चित करता है बल्कि तटीय समुदायों के लिए एक बेहतर भविष्य भी सुरक्षित करता है।

*

शाहपुरा झील, भोपाल, मध्य प्रदेश में अपशिष्ट-आहार द्वारा मत्स्य पालन की स्थिति

नीलम नरें, सुमन मन्ना, पूजा रोड़गे, स्वेता प्रधान, हंजाबम मन्दाकिनी देवी

परिचय

भारत दुनिया में सबसे अधिक पानी की समस्या वाले देशों में से एक है और प्रति व्यक्ति मीठे पानी की उपलब्धता के मामले में इसे पहले से ही पानी की कमी वाले देश के रूप में वर्गीकृत किया गया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन का अनुमान है कि 97 मिलियन भारतीयों को आभी तक सुरक्षित पानी पहुंचा नहीं है, और लगभग 600 मिलियन लोगों को सतही जल आपूर्ति में व्यवधान का अधिक खतरा है क्योंकि भारत के कुल क्षेत्र का 54% हिस्सा उच्च से अत्यधिक उच्च जल तनाव का सामना कर रहा है।

वैश्विक स्तर पर जलीय कृषि बढ़ रही है, और कुछ क्षेत्रों में अपशिष्ट जल का लाभकारी पुन: उपयोग महत्वपूर्ण होता जा रहा है। अपशिष्ट वस्तुतः सभी प्रकार की मानवीय गतिविधियों से उत्पन्न होते हैं। इन सामग्रियों के निपटान का सामान्य साधन उन्हें गाँव या शहर की सीमा के बाहर फेंक देना, जला देना या तालाबों और नदियों में बहा देना है। लेकिन हाल के दिनों में चीजें बदल गई हैं. उत्पादक उद्देश्यों के लिए कचरे के उपयोग ने अपशिष्ट प्रबंधन का एक नया विचार उत्पन्न किया है। अपशिष्ट प्रबंधन सैनिटरी सीवेज, घरेलू सीवेज और कारखानों और व्यापार परिसरों से निकलने वाले अपशिष्टों सहित सभी प्रकार के कचरे के उपयोग और पुनर्चक्रण के तरीकों से संबंधित है।

सीवेज को एक मूल्यवान जैविक उर्वरक माना जाता है क्योंकि इसमें प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व मौजूद होते हैं। मछली उत्पादकता बढ़ाने के लिए सीवेज अपशिष्टों के उपयोग को चीन, ताइवान, मलेशिया, थाईलैंड और इंडोनेशिया जैसे देशों में बहुत पहले ही मान्यता मिल गई थी, हालांकि भारत में सीवेज की इस संभावना को बहुत बाद में देखा गया। सीवेज से भरे तालाबों में मछली पालन आजकल पश्चिम बंगाल और उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक और बिहार जैसे अन्य राज्यों में बहुत लोकप्रिय हो गया है क्योंकि वे मछली पालन के लिए सीवेज अपशिष्ट का उपयोग कर रहे हैं।

अपशिष्ट- आधारित मछली पालन का इतिहास

सीवेज के पानी से उर्वरित तालाबों में मछली का उत्पादन एशिया के कई हिस्सों में एक आम बात है और इसे मध्ययुगीन यूरोप में भी जाना जाता था। आजकल, सीवेज-सिंचित-मत्स्य पालन अच्छी तरह से स्थापित हो गया है। इसे पहली बार जर्मनी में उन्नीसवीं सदी के अंत में और स्वतंत्र रूप से 1930 में कोलकाता में विकसित किया गया था। मछली पालन के लिए सीवेज का उपयोग अब भारतीय राज्यों और अन्य देशों में भी किया जाता है।

अपशिष्ट - आधारित मछली पालन की वर्तमान स्थिति:-

वर्तमान में सीवेज आधारित मछली पालन में अपशिष्ट जल का उपयोग.सबसे अधिक कोलकाता के पूर्वी आर्द्रभूमियों में सफलतापूर्वक किया गया हैअनुमान है कि वर्तमान में 130 से अधिक अपशिष्ट जल जलकृषि इकाइयाँ हैंभारत में लगभग 12,000 हेक्टेयर क्षेत्र शामिल है। इनमें से लगभग 80% पश्चिम बंगाल में स्थित हैं।

भोपाल, मध्य प्रदेश में सीवेज आधारित मछली पालन शाहपुरा झील, निचली झील और कुछ तालाबों में शुरू हुआ, जहां बारिश का पानी और सीवेज मछली पालन के लिए पानी का एक स्रोत है। भोपाल, मध्य प्रदेश में सीवेज-पोषित-मछली-पालन की वर्तमान स्थिति कोलकाता आर्द्रभूमि जितनी अच्छी नहीं है, लेकिन निकट भविष्य में एसटीपी की स्थापना और अन्य सीवेज उपचार विधियों को जलीय कृषि प्रथाओं में लागू किया जाएगा।

मध्य प्रदेश में उपलब्ध जल संसाधन:-

मध्य प्रदेश भारत का केंद्रीय राज्य है और देश के महत्वपूर्ण जलीय जैव विविधता वाले हॉट-स्पॉट में से एक है, जिसमें लोटिक और लेंटिक दोनों प्रकार के बड़ी संख्या में जल निकाय हैं, राज्य समृद्ध मछली जैव विविधता का दावा करता है। मध्य प्रदेश राज्य देश में छह प्रमुख नदी घाटियों, अर्थात् गंगा, नर्मदा, ताप्ती, महानदी, माही और गोदावरी के साथ है। राज्य की सभी नदियाँ प्रायद्वीपीय नदी घटक के अंतर्गत वर्षा आधारित हैं। मध्य प्रदेश विभिन्न जलीय पारिस्थितिकी तंत्र से समृद्ध है और राज्य में जलाशयों और तालाबों के रूप में 4.36 लाख हेक्टेयर जल क्षेत्र उपलब्ध है, जिसमें से 4.33 लाख हेक्टेयर क्षेत्र मछली पालन के अंतर्गत है।

शाहपुरा झील भोपाल शहर के पॉश इलाके में स्थित है। इलाके की सारी जल निकासी व्यवस्था झील में गिरती है। अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न स्थलों से नमूने एकत्र किये गये हैंअध्ययन के उद्देश्य को देखने के लिए कुछ प्रोफार्मा विकसित किए गए थे, जिसमें चार प्रमुख पहलू शामिल हैं: सीवेज आधारित मत्स्य पालन की स्थिति, सीवेज जल की गुणवत्ता और विशेषताएं, सहकारी समिति के सदस्यों की विभिन्न गतिविधियां (उत्पादित मछली की मात्रा और पूरक फ़ीड लागत) और विपणन के लिए रणनीति। उत्पादित मछलियों की संख्या और सहकारी समिति की सामाजिक-आर्थिक स्थिति। विधि का चयन तदनुसार किया गया, 5 अगस्त 2022 से 31 अगस्त 2022 के दौरान एक प्लास्टिक कंटेनर में पांच साइटों से मिट्टी और पानी के नमूने एकत्र किए गए। नमूनों का परीक्षण आईसीएआर-सीआईएफई, एक फील्ड गाइड बुक (2019) के अनुसार किया गया था और नमूना परीक्षण CIFE किट द्वारा किया गया था। मछुआरों द्वारा 10-100 मिमी तक के विभिन्न आकार के जालों की मदद से मछली के नमूने एकत्र किए गए। मछुआरों ने डाले गए जाल की मदद से मछलियाँ पकड़ीं।

कार्य का अधिकांश भाग प्राथमिक डेटा विश्लेषण पर आधारित है। लागत और उत्पादकता संबंधी जानकारी सीधे विशिष्ट लक्षित आबादी के साथ सर्वेक्षण द्वारा एकत्र की गई थी। भौतिक और रासायनिक पैरामीटरझील से नमूने एकत्र करके विश्लेषण किया गया। सर्वेक्षण संलग्नक के साथ तैयार की गई प्रश्नावली के अनुसार किया गया था।

डेटा विश्लेषण निम्नलिखित चरणों में किया गया है:-

ए) विवरण: – मध्य प्रदेश में मत्स्य पालन की स्थिति के बारे में विशिष्ट तथ्य मत्स्य पालन विभाग भोपाल (म.प्र.), मछुआरों की सहकारी समिति से एकत्र किए गए आंकड़ों के आधार पर व्यवस्थित किए गए थे।

बी) भोपाल जिले में शुरू हुए फील्डवर्क के प्रारंभिक चरण के दौरान एकत्र किए गए तथ्य और आंकड़े।

सी) डेटा का वर्गीकरण–डेटा को सार्थक समूहों में क्लस्टर करने के लिए, प्रमुख श्रेणियां थीं।

जलकृषि रिपोर्टों तथा प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों से भी इसकी पहचान की गई है। साहित्य समीक्षा, उपलब्ध दस्तावेज़ों और साक्षात्कार अनुसूचियों से डेटा के विश्लेषण के लिए प्रश्नावली विकसित की गईं।

डी) मात्रात्मक विश्लेषण –साक्षात्कार कार्यक्रम और प्रश्नावली के डेटा का विश्लेषण विभिन्न प्रतिक्रियाओं के प्रतिशत के संदर्भ में किया गया था। ऐसा उस नमूने का प्रतिशत उत्पन्न करने के लिए किया गया था जिसने एक विशेष तरीके से प्रतिक्रिया दी।

ई) संश्लेषण और सामान्यीकरण –डेटा का संकलन पूरा होने के बाद, केस स्टडी का समग्र मूल्यांकन किया गया। कुछ देखे गए रुझानों के लिए सामान्यीकृत निष्कर्ष निकाले गए जो इस अध्ययन के दायरे का हिस्सा थे।

नतीजे और चर्चाएं:-

अवलोकन: अनुपचारित सीवेज पानी झील में बहाया जाता है। झील का रंग गहरा भूरा और प्रवेश स्थल पर काला है। यह अपशिष्ट जल में मौजूद धातुओं के साथ प्रदूषकों की अधिकता के कारण होता है। नमूना संग्रह के दौरान भारी बारिश के कारण सीवेज केपानी में बारिश का पानी घुलने से सिवेज की सांद्रता कम हो गई थी। जिससेपानीकारंग गहरे काले-भूरे से हरे और साफ पानी में बदल गया।

अवलोकन में : ए) सीवेज जल का प्रवेश (कच्चा सीवेज), बी) शाहपुरा झील पर मूर्ति विसर्जन क्षेत्रए) झील के किनारे मैक्रोफाइट्सबी) स्थानीय लोगों द्वारा मछली पकड़ना, सी) झील का मनोरंजक महत्व (ऋषभदेव उद्यान)

सीवेज जल का भौतिक, रासायनिक और जैविक विश्लेषण:

जल की भौतिक विशेषताओं का पता लगाया गया। भौतिक लक्षण तापमान, रंग, गंध और ठोस हैं।

1. तापमान: संचालन के प्रकार के आधार पर अपशिष्ट जल का तापमान काफी भिन्न होता है। औद्योगिक सीवेज की उपस्थिति के कारण सीवेज जल का तापमान सामान्य पानी से थोड़ा अधिक होता है। मछली की वृद्धि के लिए तापमान 25 डिग्री सेल्सियस से 32 डिग्री सेल्सियस है। पानी के नमूने के दौरान झील के पानी का तापमान 27 डिग्री सेल्सियस और कच्चे सीवेज पानी का तापमान 30 डिग्री सेल्सियस है। जो मछली पालन के लिए आदर्श है।

2. रंग: ताजा मल पीले भूरे से हल्के भूरे रंग का होता है। जबकि सेप्टिक का रंग कार्बनिक पदार्थों के ऑक्सीकरण के कारण काला या गहरा होता है। सर्वेक्षण के दौरान भारी वर्षा के पानी में घुलने के कारण पानी के रंग में भिन्नता देखी गई।

3.गंध: कच्चे सीवेज की गंध तैलीय या साबुन जैसी होती है जबकि सेप्टिक सीवेज में आपत्तिजनक गंध विकसित होती है। साइट 1 पर H_2S गैस गंध का प्रमुख स्रोत है। झील के कुछ स्थानों पर पानी में कोई गंध नहीं है।

4.ठोस अपशिष्ट: पानी को छोड़कर सभी पदार्थ, ठोस अपशिष्ट केवल प्रवेश क्षेत्र और झील के किनारे पर हैं।

5.पारदर्शिता – झील के पानी में पौधे और शैवाल उगाने के लिए पानी की दृश्यता और सूर्य के प्रकाश के प्रवेश की गुणवत्ता या स्थिति। कच्चे सीवेज जल के प्रवेश क्षेत्र में पारदर्शिता शून्य है, विभिन्न स्थलों पर 10 सेमी- 50 सेमी पारदर्शिता देखी गई।

सीवेज जल का रासायनिक विश्लेषण:

पीएच, डीओ (घुलित ऑक्सीजन), नाइट्रेट, नाइट्राइट, अमोनिया और मुक्त कार्बन डाई ऑक्साइड का विश्लेषण किया गया।

1.पीएच: हाइड्रोजन आयन सांद्रता (पीएच) पानी की अम्लता या क्षारीयता को इंगित करता है। सीवेज का पीएच प्रारंभ में उच्च होता है और जब सीवेज सेप्टिक हो जाता है तो कम हो जाता है लेकिन उपचार प्रक्रियाओं के साथ फिर से बढ़ जाता है। अध्ययन के दौरान विभिन्न क्षेत्रों में पीएच 6-8 के बीच रहा। साइट 1 और 2 से, सीवेज पानी का पीएच 6.5 है और बारिश के पानी के साथ पतला होने के बाद साइट 3 पर पीएच रेंज 7 था और साइट 4 और 5 पर यह 7.5 था।

2. घुलित ऑक्सीजन (डीओ): अपशिष्ट जल जिसमें डीओ होता है उसे एरोबिक या ताज़ा कहा जाता है। ताजे पानी में ऑक्सीजन की घुलनशीलता 0°से. पर 14.6 मि.ग्रा./ली. से लेकर 35°से. पर लगभग 07 मि.ग्रा./ली. तक होती है। साइट 1 और 2 पर कच्चे सीवेज पानी के प्रवेश क्षेत्र में डीओ कम है, लेकिन पतला होने के बाद अन्य साइटों पर डीओ का स्तर बढ़ जाता है।

3. मुक्त कार्बन डाई ऑक्साइड: मुक्त कार्बन डाई ऑक्साइड बाइकार्बोनेट के सीधे आनुपातिक और कार्बोनेट के

व्युत्क्रमानुपाती होता है। प्राकृतिक सतही जल में मुक्त आबादी की उपलब्धता तापमान, पीएच और कार्बनिक पदार्थ की मात्रा पर निर्भर करती है। वर्तमान अध्ययन के दौरान सभी स्थलों पर मुक्त कार्बन डाई ऑक्साइड 0 मि.ग्रा./ली. दर्ज किया गया।

4. कुल क्षारीयता: कुल क्षारीयता कमजोर अम्लों के लवणों के कारण होती है और बाइकार्बोनेट से लेकर अत्यधिक क्षारीय पानी तक अपरिहार्य है। न्यूनतम कुल क्षारीयता साइट-4 और साइट 5 पर 300 मिलीग्राम/लीटर दर्ज की गई और अधिकतम कुल क्षारीयता 400 मिलीग्राम/लीटर साइट-1 और साइट 2 पर दर्ज की गई। प्रकृति में अत्यधिक उत्पादक

5. नाइट्रेट: पानी में फाइटोप्लांकटन और वनस्पति के विकास के लिए नाइट्रेट बहुत उपयोगी है। NH4 और NO3-N को उर्वरक के रूप में बाहर से तालाब में डाला जा सकता है। बारिश या बिजली गिरने से वायुमंडलीय नाइट्रोजन से नाइट्रोजन की कुछ मात्रा मिट्टी और पानी में मिल सकती है। नाइट्रेट महत्वपूर्ण प्रदूषण संकेतक मापदंडों में से एक है। अध्ययन में साइट 1 और साइट 2 पर इनलेट सीवेज पानी में नाइट्रेट की सांद्रता 0mg/L से 10.0 mg/L तक थी, साइट 3, साइट 4 और साइट 5 पर नाइट्रेट का न्यूनतम मान 0 mg/L देखा गया।

6. नाइट्राइट: जब तालाब में अमोनिया का स्तर अधिक होता है, तो इस बात की अधिक संभावना होती है कि नाइट्राइट का स्तर भी अधिक (>0.05 mg/L) होगा। जब मछलियों को जैविक रूप से प्रदूषित पानी (जिसमें कार्बनिक पदार्थों का भार अधिक होता है) में पाला जाता है, तो पानी में नाइट्राइट का स्तर उच्च (> 0.1 पीपीएम) होने की पूरी संभावना होती है। मछलियाँ (मुख्य रूप से बड़े आकार की मछलियाँ) हाइपोक्सिया से मर सकती हैं, भले ही तालाब के पानी में पर्याप्त मात्रा में घुलित ऑक्सीजन हो। अध्ययन में, साइट 1 और साइट 3 पर इनलेट सीवेज पानी में नाइट्राइट सांद्रता 1.0 मिलीग्राम/लीटर थी और साइट 2, साइट 4 और साइट 5 पर नाइट्राइट का न्यूनतम मूल्य 0 मिलीग्राम/लीटर देखा गया था।

7. अमोनिया: अमोनिया गैस मछली के लिए जहरीली होती है जब यह 0.1 मिलीग्राम/लीटर से ऊपर होती है और मछली के तालाबों में इसका पता नहीं चल पाता है। उच्च pH और तापमान पर अमोनिया गैस अधिक विषैला होता है। पानी और/या तली तलछट में कार्बनिक पदार्थ का उच्च भार। साइट 1 और साइट 2 पर इनलेट सीवेज पानी में अमोनिया की सांद्रता 1.0 मिलीग्राम/लीटर थी और साइट 3, साइट 4 और साइट 5 पर नाइट्राइट का न्यूनतम मान 0 मिलीग्राम/लीटर देखा गया था।

8. कुल कठोरता : मछलियों के प्रजनन और अंडे सेने के संचालन के लिए पानी की कठोरता की अवधारणा महत्वपूर्ण है। मछली पालन कठोर जल (>250 मिलीग्राम/लीटर) में किया जा सकता है क्योंकि फिंगरलिंग अवस्था के बाद मछली में शल्क विकसित हो जाते हैं और त्वचा मोटी हो जाती है। लेकिन हैचलिंग, स्पॉन या प्रारंभिक फ्राई चरण के दौरान, वे उच्च स्तर के लवण (कार्बोनेट, बाइकार्बोनेट, क्लोराइड और कैल्शियम, मैग्नीशियम और लौह के सल्फेट लवण) को सहन नहीं कर सकते हैं क्योंकि इन चरणों में उनकी त्वचा बहुत पतली होती है और स्केल गठन खराब होता है। बहुत कठोर पानी मछलियों के लिए ऑस्मोरगुलेटरी तनाव का कारण बनता है। मछली प्रजनन के लिए आदर्श कठोरता स्तर 30 से 200 मिलीग्राम/लीटर है, और संवर्धन 100 से 300 मिलीग्राम/लीटर है। साइट 4 और 5 पर देखी गई कुल कठोरता 300 मिलीग्राम/लीटर थी और साइट 2 पर यह 345 मिलीग्राम/लीटर थी और सीवेज पानी के प्रवेश पर यह साइट 1 और 3 पर 375 मिलीग्राम/लीटरथा।आंशिक रूप से या पूरी तरह से विघटित सीवेज में नाइट्रोजन, फास्फोरस,के आदि का उच्च प्रतिशत होता है। ये पोषक तत्व पर्याप्त क्षारीयता के साथ मिलकर सीवेज जल में उच्च उत्पादकता में योगदान करते हैं और इस कारण से कभी-कभी मछली के तालाब का निषेचन कच्चे सीवेज के साथ किया जाता है।

शाहपुरा झील के सतही जल के भौतिक रासायनिक मापदंडों में भिन्नता

1. नाइट्रेट यूट्रोफिकेशन की घटना को दर्शाता है। (उच्च सांद्रता से पता चलता है कि झील का पानी पोषक तत्वों से भरपूर है।
2. विश्लेषण से पता चलता है कि शाहपुरा झील का पानी कठोर है कठोर पानी अधिक उत्पादक है।
3. मैग्नीशियम की सांद्रता 30-36 मि.ग्रा./ली. थी। क्लोरीन और फास्फोरस की सांद्रता कम पाई गई।
4. लौह की सांद्रता पर्याप्त रूप से कम, लगभग शून्य पाई गई है।

झील की मिट्टी का विश्लेषण:

1. झील में मिट्टी पीएच 5.5-6.0 500 किग्रा/हेक्टेयर चूना उपचार की आवश्यकता है।
2. मिट्टी की बनावट 68% रेत, 22% गाद और 10% मिट्टी।झील की मिट्टी रेतीली दोमट थी और गहरा काला रंग तालाब के सीवेज पानी का प्रतिनिधित्व करता है। हाइड्रोमीटर का उपयोग आमतौर पर मिट्टी के यांत्रिक विश्लेषण के लिए किया जाता है, जिसमें मिट्टी में मौजूद विभिन्न आकारों (यानी रेत, गाद और मिट्टी) के कणों का प्रतिशत निर्धारित किया जाता है।
3. कार्बनिक कार्बन> 1.5% कार्बन का उच्च%, उर्वरक की कोई आवश्यकता नहीहै।

i. मिट्टी के नमूने के यांत्रिक विश्लेषण के बाद यह पाया गया कि मिट्टी के नमूने में 68% रेत, 22% गाद और 10% मिट्टी है। इसलिए तालाब की मिट्टी की बनावट रेतीली दोमट थी और इसका रंग गहरा काला था क्योंकि यह तालाब के सीवेज पानी का प्रतिनिधित्व करता है।

ii. जैविक कार्बन जलीय कृषि में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कार्बन कार्बनिक पदार्थ का मुख्य घटक है। यह प्रकाश संश्लेषण नामक एक अत्यंत महत्वपूर्ण जीवन प्रक्रिया के माध्यम से वायुमंडल से जीवित शरीर में स्थिर होता है। विश्लेषण के बाद यह अनुमान लगाया गया कि झील की मिट्टी कार्बनिक कार्बन से समृद्ध थी।

मैक्रोफाइट्स:

अध्ययन अवधि के दौरान मैक्रोफाइट्स की कुल 11 प्रजातियाँ बताई गई । 1.जलमग्न की 2 प्रजातियाँ थीं:- नजस माइनर, हाइड्रिला वर्टिसिलटा, 2.2 मुक्त रूप से तैरने वाली प्रजातियाँ: पिस्टिया स्ट्रैटियोट्स, इचोर्निया क्रैसिप्स और 3.7 तटरेखा प्रजातियाँ अर्थात्: पॉलीगोनम ग्लैब्रम, साइपरस आर्टिकुलैटस, सैजिटारिया सैगिटिफोलिया, बेग्रगिया कैपेंसिस, निम्फिया नौचाली, फ्रैगमाइट्स कार्का, टायफा एसपी दर्ज किए गए। 4. देखी गई अन्य तटरेखा प्रजाति कोलोकेसिया है।अध्ययन के दौरान विभिन्न स्थानों से नमूना पानी में केवल 14 फाइटोप्लांकटन की पहचान की गई, जो क्लोरोफाइसी समूह के हैं (क्लैमाइडोमोनस, क्लोरेला, माइक्रोस्पोरा, स्पाइरोगाइरा, वॉल्वॉक्स, क्लोस्टिडियम, उलोथ्रिक्स) सायनोफाइसी: (एनाबेना, नोस्टॉक, ऑसिलेटोरिया, स्पाइरुलिना) यूग्लेनोफाइसी: (यूग्लेना)) बैसिलरियोफाइसी (पिनुलेरिया, डायटोमा) अध्ययन के दौरान केवल 10 ज़ोप्लांकटन देखे गए हैं जो रोटिफ़ेरा (ब्रैचियोनस, लेकेन, केराटेला) क्रस्टेशिया (डैफ़निया, मोइना, सेरियोडेफ़निया) कोपेपोडा (साइक्लोप्स, डायप्टोमस) ओस्ट्राकोडा (साइप्रिस) समूह के हैं।बेन्थोस: अध्ययन के दौरान, मोलस्का (समूह गैस्ट्रोपोडा) की सबसे प्रमुख बेन्थिक प्रजातियों की पहचान की गई है।

मछली - विविधता:

शाहपुरा झील में दो परिवारों की छह मछली प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इन सभी प्रजातियों में से, ओरियोक्रोमिस मोसाम्बिकस (तिलापिया) अच्छी तरह से फल-फूल रही है क्योंकि यह हर तीन महीने में प्रजनन करती है, सीवेज प्रदूषित पानी में अच्छी तरह से बढ़ती है और प्रकृति में शिकारी होने के कारण इस झील में सबसे प्रमुख प्रजाति है। सिरहिनस मृगाला (नरेन) अन्य प्रजातियों की तुलना में कम संख्या में पाया जाता है।

सहकारी समिति कालका मत्स्योद्योग सहकारी संस्था मर्यादित, भोपाल और समिति के फिश लैंडिंग सेंटर और वॉच हाउस के सदस्यों और सचिव (श्री सोनू बाथम) के साथ बातचीत अनुसार शाहपुरा झील में बीज भंडारण: (मछली प्रजाति के अनुसार) प्रजाति स्टॉकिंग(लाख में) स्टॉकिंग (%) कतला कतला 20%, लेबियो रोहिता 25 %, सिरहिनस मृगला 20 %, हाइपोथाइलमचथिस मोलिट्रिक्स 15 %, साइप्रिनस कार्पियो 5%, ओरियोक्रोमिस मोसाम्बिकस 10%, हाइपोथाल्मस पुंगसियानोडोन 05%, हावड़ा कोलकाता,उत्तर प्रदेश से मत्स्य बीज क्रय कर संचयन किया जाता है।

चित्र : सहकारी समिति काल का मत्स्योद्योग सहकारी संस्था मर्यादित, भोपाल समिति के फिश लैंडिंग सेंटर और वॉच हाउस के सदस्यों और सचिव (श्रीसोनूबाथम) के साथ बातचीत और मछली पकड़ते हुए समिति का सदस्य।

1. उन्होंने झील के किनारे वॉच हाउस, स्टोर रूम और एक लैंडिंग सेंटर बनाया था।
2. पंगेशियस के लिए सोसायटी ने वर्ष 2020 में पीएमएमएसवाई की योजना से शाहपुरा झील में पिंजरे(केज)लगाए।
3. सीवेज में पोषण की अधिकता के कारण मछली किसान किसी कृत्रिम आहार का उपयोग नहीं कर रहे हैं। वे सीवेज के पानी से सूक्ष्म जीवों को मारने या खत्म करने के लिए कीटाणुनाशक के रूप में वॉटर सैनिटाइजर का उपयोग करते हैं।
4. लाईमिंग, प्रबंधन का एक अभिन्न अंग माना जाता है। वे प्रति वर्ष 10-15 क्विंटल चूने का उपयोग करते हैं।
5. हाइपोक्लोराइट का उपयोग झील में आने वाले (इनलेट सीवेज) पानी को कीटाणुरहित करने के लिए किया जाता है।
6. पोविडोन -आयोडीन माइक्रोफ्लोरा और वायरस के लिए घातक है, जो 50 पीपीएम घोल में 15 मिनट के भीतर मर जाते हैं।
7. जिओलाइट का उपयोग अक्सर तालाब के तल की स्थिति में सुधार के लिए किया जाता है; यह पानी से अमोनिया और मेटाबोलाइट्स को अवशोषित करने की इसकी क्षमता से संबंधित है।उन्होंने पानी में ऑक्सीजन का स्तर बढ़ाने के लिए झील के विभिन्न स्थानों पर पंप और एरेटर लगाए।
8. पोटेशियम परमैंगनेट एक ऑक्सीकरण एजेंट है और इसका उपयोग आम मछली रोगजनकों के इलाज और अन्य दवाओं के उपयोग के लिए भी किया जाता है।
9. एक्रिफ्लेविन को ट्रिपाफ्लेविन (खरपतवार उन्मूलन के लिए) के रूप में भी जाना जाता है।
10. सोसायटी के सदस्य मछली पकड़ने के लिए गिल नेट और कास्ट नेट का उपयोग करते है। उनके पास एक सोसायटी में 10 किलो प्रति व्यक्ति के हिसाब से जाल होते हैं।उनके पास 20 नावें थीं जिनमें 1-2 व्यक्ति बैठकर मछलियाँ पकड़ते है।सोसायटी की मछली पकड़ने की क्षमता 110-150 किलोग्राम/दिन है।वर्ष 2020-21 में कुल मछली उत्पादन औसतन 26.25 टन रहा। वर्ष 2019-20 में कोविड-19 के कारण उत्पादन कम है।वे बरसात के मौसम के बाद मछली पकड़ना शुरू करते हैं।

मध्य प्रदेश मत्स्य नदी अधिनियम 1971 एवं मत्स्य अधिनियम 1981 के अनुसार क्लोज सीजन 15 जून से 16 अगस्त के दौरान मछली पकड़ने के लिए प्रतिबंधित अवधि है। समापन अवधि के इन 2 महीनों के लिए, समाज को पीएमएमएसवाई के तहत बचत-सह-राहत की केंद्र प्रायोजित योजना से लाभ मिलता है। सोसायटी का जिला मत्स्य पदाधिकारी के साथ संयुक्त खाता है। प्रत्येक सदस्य रुपये जमा करता है। सितंबर से जून तक 10 महीनों में 1500 रुपये और केंद्र और राज्य सरकारों से 50:50 की हिस्सेदारी से 3000 रुपये प्राप्त करेंतहै। समाज के सदस्यों को मछली पालन का प्रशिक्षण मत्स्य पालन विभाग भोपाल से प्राप्त हुआ।

सोसाइटी के सदस्यों ने खुदरा बाजार में मछली को 50-100 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से बेचा। मछली के विपणन के लिए उनके पास 10 दुकानें हैं। उन्हें मछली की बिक्री से नकद राशि मिलती है। सोसायटी के सदस्यों ने बताया कि, सीवेज जल से मछली

के सेवन के बाद किसी भी मानव रोग या स्वास्थ्य संबंधी समस्या की रिपोर्ट नहीं मिली है.वे विपणन से एक दिन पहले मछली निकलते हैं और एक टैंक में रखते हैं, अगले दिन वे मछलियों को बेच देते हैं।

उनके लिए सीवेज आधारित मत्स्य पालन का एकमात्रलाभ हैंकिमछलियों के लिए कृत्रिम भोजनखरीदना आवश्यक नहींहोता। सीवेज अत्यधिक पौष्टिक होता है, प्लवक के उत्पादन के लिए उपयोग किया जाता है, मछलियों के लिए भोजनके रूप में उपयोग किया जाता है। सीवेज जल में किसी पूरक आहार की आवश्यकता नहीं होती है।

प्रतिबंध:

मछुआरों की सामाजिक-आर्थिक बाधाएँ: - अध्ययन क्षेत्र में पाया गया कि अधिकांश मछुआरों को विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। मछुआरों के सामने आने वाली मुख्य समस्याएँ इस प्रकार हैं:

1. मछली के भंडार और पकड़ में कमी, मछली की कम कीमत आदि।
2. तिलापिया के कारण आईएमसी मछलियों की वृद्धि दर कम थी। सोसायटी के सचिव ने बताया कि कतला की ग्रोथ 1-2 साल में 200 ग्राम और रोहू की 2 साल में 500 ग्राम तक होती है।
3. वित्तीय स्थिरता का अभाव, अपर्याप्त ऋण सुविधाएं और वित्तीय सहायता,बर्बरता, नाव, जाल आदि की चोरी।
4. शाहपुरा झील में तिलापिया का आकार बड़ा होना जो एक वर्ष में आधा किलो से अधिक होना जलीय तंत्र के लिए हानिकारक है। सीवेज और तिलापिया की प्रचुरता आईएमसी और झील की स्थानीय मछलियों के लिए हानिकारक बन रही है।

सुझाव

चूना भट्टी के पड़ोसी क्षेत्र में कई लोग पीने के पानी की आपूर्ति का लाभ उठाने के लिए बोरवेल पर निर्भर हैं, जो झील और बहिर्वाह नालों के रिसाव से प्रदूषित हो रहा है जो इसे शहरों के अन्य प्रमुख जल निकायों से जोड़ता है। विभिन्न नीतियों के कार्यान्वयन के माध्यम से शाहपुरा झील को संरक्षित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है जो इसके संरक्षण के लिए वैज्ञानिक तरीकों के अनुप्रयोग की अनुमति देता है। इनमें से कुछ हैं:

1. जल की गुणवत्ता में सुधार के लिए जलग्रहण क्षेत्र का उपचार, ड्रेजिंग और डीसिल्टिंग की आवश्यकता है।
2. सीवेज जल से भारी धातुओं के अवशोषण के लिए नियंत्रित विकास के तहत झील के किनारे एक्होर्निया क्रैसिप्स (जलकुंभी), पिस्टिया स्ट्रैटिओट्स (वाटर लेट्यूस), लेम्ना माइनर (डकवीड) और कोलोकैसिया को लगाया जाना चाहिए।
3. सरकार को सीवेज को झीलों में प्रवेश करने से रोकने के लिए एक सीवेज उपचार प्रबंधन योजना विकसित करने की आवश्यकता है, और फ्लोटिंग फव्वारे लगाने की भी जरूरत है।

बाहरी इलाकों में विभिन्न उद्योगों की जल निकासी प्रणालियों की जाँच की जानी चाहिए।घरेलू सीवरेज के संग्रहण के लिए प्रस्तावित किसी भी वाटरशेड में एक जलग्रहण क्षेत्र के निर्माण के लिए जलीय (गैर पारगम्य) भूवैज्ञानिक स्तर को खोजने के लिए क्षेत्र का विस्तृत अध्ययन किया जाए। यह जलभृत को उसके जलग्रहण क्षेत्र में प्रदूषकों के निक्षालन से बचाएगा।किसी भी जल निकाय में शामिल होने से पहले सीवेज जल का उपचार अनिवार्य किया जाए।शाहपुरा झील के विभिन्न स्थानों पर जल निकाय के भीतर और सीवेज जल के प्रवेश द्वार पर जल संसाधनों की गुणवत्ता में सुधार के लिए बजरी बिस्तर उपचार या रूट जोन उपचार जैसे उपचार संयंत्र की स्थापना करना। झील के ऊपरी प्रवाह में धुलाई क्षेत्र को अपशिष्ट जल के बाहर नीचे की ओर स्थानांतरित किया जाना चाहिए।

मछली उत्पादकता बढ़ाने के लिए झील में वातन(एयरेटर) की आवश्यकता है। तिलापिया मछली को प्राकृतिक तालाब पारिस्थितिकी तंत्र के लिए हानिकारक माना जाता है और भारत में संस्कृति के लिए प्रतिबंधित है। इसलिए खेती योग्य प्रजातियों के भंडार की उत्पादकता में सुधार के लिए तिलापिया को जल निकाय से हटा दिया जाए।

इन-लेक उपचार: दूर करने के लिए निम्नलिखित कई उपशामक उपाय किए गए हैं,सुपोषण और झील के पानी की गुणवत्ता में सुधार। जल और इसकी जैव विविधता के संरक्षण के लिए नीतियों का कार्यान्वियन। वातन प्रणाली की स्थापना । वातन की प्रक्रिया से झील की पुनर्स्थापना क्षमता से संबंधित कई मुद्दों से राहत मिलने की संभावना है और कम घुलनशील ऑक्सीजन की स्थिति के कारण उत्पन्न होने वाले मुद्दों को हल करने के लिए इसे अक्सर प्रभावी ढंग से लागू किया गया है।

निष्कर्ष

वर्तमान अध्ययनों के माध्यम से उत्पन्न जानकारी अत्यधिक मूल्यवान पाई गई है।

1. वर्तमान अध्ययन भोपाल, मध्य प्रदेश की शाहपुरा झील की सीवेज-सिंचित-मत्स्य पालन की वर्तमान स्थिति की जांच के लिए अगस्त 2022 में एक महीने की अवधि के लिए आयोजित किया गया था।
2. वर्तमान स्थिति की यह आधार रेखा जानकारी सीवेज-पोषित-मत्स्य पालन के रूप में मछली पालन के लिए अपशिष्ट जल या सीवेज जल के पुनर्चक्रण के विकास का आधार बन सकती है।
3. इसमें यह भी विश्लेषण किया गया कि आईएमसी प्रजातियों के लिए संरक्षण रणनीतियाँ भी आवश्यक हैं।
4. राज्य में मछली खाने वाली आबादी कम है क्योंकि अधिकांश आबादी अपनी खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए फसलों, सब्जियों पर निर्भर है।
5. मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या लगभग है।145.00 लाख. राज्य की मछली खाने वाली (मांसाहारी) आबादी 47.00 लाख है और प्रति व्यक्ति मछली की उपलब्धता 0.6 किलोग्राम है। भोपाल जिले की कुल जनसंख्या लगभग है।17.00 लाख, मछली खाने वाली आबादी औसत 0.90 लाख है और प्रति व्यक्ति मछली की उपलब्धता 0.8 किलोग्राम है।तो, हम कह सकते हैं कि भोपाल में मछलियों की खरीद/बिक्री के लिए मांग और आपूर्ति के बीच कोई अंतर नहीं है।
6. भौतिक रासायनिक पर्यावरण मुख्य रूप से जैविक विविधता

को नियंत्रित करता है। अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि झील में प्रवेश करने वाले कच्चे सीवेज के कारण झील का यूट्रोफिकेशन होता है। समाज सीवेज जल के उपचार के लिए चूना, जल प्रक्षालक और (एसटीपी) रसायनों का उपयोग करता है।

6. शाहपुरा झील मछली पालन के लिए आईएमसी और विदेशी कार्प से भरी हुई है। शाहपुरा झील में तिलापिया बहुतायत में पाई जाती है, जो एक विदेशी मछली है और वर्ष 2020 तक इसका स्टॉक नहीं किया गया था। लेकिन, वर्ष 2021 में सोसाइटी ने नैहाटी, कोलकाता से परिवहन की गई नील तिलापिया का स्टॉक करना शुरू कर दिया था।
7. कतला अन्य मछली प्रजातियों की तुलना में कम संख्या में पाई जाती है।
8. स्थानीय अवलोकन एवं बाजार सर्वेक्षण के दौरान जिले के अन्य किसी भी स्थान पर आधा किलो से अधिक आकार की तिलापिया नहीं पाई गई।शाहपुरा झील की शाहपुरा मत्स्य पालन सोसायटी के अनुसार कुल मछली उत्पादन 70% तिलापिया और 30% भारतीय प्रमुख कार्प का है।
9. सोसायटी मछली पालन की आधुनिक तकनीक को अपनाने की पहल की है।उन्होंने झील में पिंजरे (केज)लगा दियेहैं।
10. सोसायटी को मत्स्य पालन विभाग भोपाल, मध्य प्रदेश द्वारा संचालित योजनाओं से लाभान्वित किया गया है।
11. उच्च रासायनिक स्तर मछली पालन और उसकी वृद्धि और जल निकाय को यूट्रोफिक बनाने के लिए भी हानिकारक है।संरक्षण उपायों में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए समुदाय के बीच जागरूकता पैदा करने की भी आवश्यकता है।

शाहपुरा झील में विभिन्न मछलियों के प्रजनन स्थल की उपलब्धता की पहचान करने के लिए अध्ययन करना आवश्यक है। ताकि, मछली प्रजनकों और किशोरों के लिए सुरक्षा की आवश्यकता वाले क्षेत्रों की पहचान की जा सके। पारंपरिक मछली संचयन तकनीक का सर्वाधिक उपयोग भोपाल जिले में किया जाता है। वे पारंपरिक शिल्प जैसे लकड़ी की तख्ती वाली नाव और गिल नेट और कास्ट नेट जैसे गियर का उपयोग करते हैं।

*

पर्यावरणीय स्वास्थ्य और वैश्विक खाद्य सुरक्षा के लिए माइक्रोप्लास्टिक एक उभरता हुआ ख़तरा

श्याम दत्ता वाघमारे

पिछले कुछ दशकों में, समुद्री मलबे की संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है, जिसमें समुद्री शैवाल, सीप और लकड़ी जैसी प्राकृतिक सामग्रियों के स्थान पर प्लास्टिक प्रमुख घटक बन गया है। अध्ययन बताते हैं कि समुद्री मलबे का 60–80% हिस्सा प्लास्टिक का होता है, जो समुद्र तटों, समुद्र की सतह और महासागरों में तैरते हुए पाया जाता है। समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों में प्लास्टिक की व्यापक उपस्थिति मानव गतिविधियों, चाहे वे स्थलीय हों या समुद्री, का प्रत्यक्ष परिणाम है। सबसे चिंताजनक प्रकार के प्लास्टिक प्रदूषण में माइक्रोप्लास्टिक शामिल हैं—ये 5000 माइक्रोमीटर से छोटे कण होते हैं—जो समुद्री जीवन, जलीय जीव-जन्तु और अंततः मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा पैदा करते हैं।

यह लेख मछलियों और मछली आहार में माइक्रोप्लास्टिक की बढ़ती उपस्थिति, उनके खाद्य श्रृंखला में प्रवेश की संभावनाओं, और पर्यावरणीय स्थिरता एवं खाद्य सुरक्षा पर उनके प्रभावों की गंभीर प्रभाव को प्रदर्शित करता है।

माइक्रोप्लास्टिक क्या हैं?

माइक्रोप्लास्टिक को उनके उत्पत्ति के आधार पर दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है:

1. प्राथमिक माइक्रोप्लास्टिक: ये मानव जनित निर्मित छोटे कण होते हैं, जैसे प्लास्टिक उत्पादन में उपयोग किए जाने वाले रेजिन पेलेट या सौंदर्य प्रसाधनों और औद्योगिक उत्पादों में पाए जाने वाले माइक्रोबीड्स।

2. द्वितीयक माइक्रोप्लास्टिक: ये प्राकृतिक व कृत्रिम रूप से बड़े प्लास्टिक वस्तुओं के टूटने से उत्पन्न टुकड़े होते हैं, जो मौसम, विघटन और अपघटन जैसी प्रक्रियाओं से बनते हैं। इसके सामान्य स्रोतों में समुद्री पेंट के टुकड़े, टूटे हुए प्लास्टिक कचरे और कपड़े धोने से निकलने वाले सिंथेटिक रेशे शामिल हैं।

ये कण समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के सभी घटकों, जैसे पानी, तलछट और जीवों में पाए गए हैं। इसके अलावा, तथ्यों से यह प्रमाण मिलता हैं कि माइक्रोप्लास्टिक का ट्रॉफिक ट्रांसफर भी होता है, जहां ये द्वितीय व तृतीय ट्राफिक जीवों द्वारा ग्रहण किए जाने के माध्यम से खाद्य श्रृंखला में ऊपर की ओर जाते हैं और उच्च श्रेणी के जीवों, जिनमें मछलियां और मनुष्य हैं, में जमा हो जाते हैं।

मछलियों में माइक्रोप्लास्टिक और उनके प्रभाव

मछलियों और अन्य समुद्री जीवों, चाहे वे प्राकृतिक जल निकायों से पकड़े गए हों या जलीय कृषि में उत्पादित, में माइक्रोप्लास्टिक की मौजूदगी तेजी से बढ़ रही है। ये कण सीधे निगलने या उन खाद्य जीवों को खाने से जीवों में प्रवेश कर सकते हैं, जिन्होंने पहले ही माइक्रोप्लास्टिक का सेवन किया हो। अध्ययनों में मछलियों के जठरांत्र पथ, गलफड़ों और यहां तक कि मांसपेशी ऊतकों में माइक्रोप्लास्टिक पाया गया है।

नियंत्रित प्रयोगशाला अध्ययनों ने मछलियों पर माइक्रोप्लास्टिक के सेवन के प्रभावों की जांच की है, जिससे यकृत पर तनाव, अंतःस्रावी व्यवधान, व्यवहार में परिवर्तन और रासायनिक विषाक्तता जैसे नकारात्मक परिणाम सामने आए हैं। हालांकि, कुछ अध्ययन यह तर्क देते हैं कि इन प्रयोगों में अक्सर माइक्रोप्लास्टिक की सांद्रता प्राकृतिक पर्यावरण की तुलना में बहुत अधिक होती है, जिससे उनके वास्तविक दुनिया में उपयोग को लेकर आलोचना होती है। जंगली जीवों और मनुष्यों में माइक्रोप्लास्टिक के दीर्घकालिक प्रभाव काफी हद तक अज्ञात हैं, लेकिन जैव विविधता, पारिस्थितिक तंत्र के स्वास्थ्य और खाद्य सुरक्षा के लिए जोखिम स्पष्ट हैं।

मछली आहार में माइक्रोप्लास्टिक

मछली आहार, जो जलीय कृषि के चारे और पशुधन आहार का प्रमुख घटक है, मुख्य रूप से छोटी पेलैजिक मछलियों, बायकैच और मछली प्रसंस्करण उप-उत्पादों से प्राप्त होता है। वैश्विक समुद्री मछली की लगभग 25% लैंडिंग मछली आहार और मछली तेल उत्पादन के लिए उपयोग की जाती है। मछली आहार में माइक्रोप्लास्टिक की मौजूदगी पर हाल ही में ध्यान दिया गया है, लेकिन प्रारंभिक अध्ययन चिंताजनक निष्कर्षों की ओर इशारा करते हैं।

मछली आहार उत्पादन में सामान्यतः उपयोग की जाने वाली मछलियों पर 29 अध्ययनों की समीक्षा में शोधकर्ताओं ने विभिन्न सांद्रता में माइक्रोप्लास्टिक संदूषण पाया। औसतन, मछली आहार उत्पादन के लिए उपयोग की जाने वाली मछलियों में प्रति मछली 0.72 माइक्रोप्लास्टिक कण पाए गए, जबकि उप-उत्पाद से प्राप्त मछली आहार में समान सांद्रता दर्ज की गई। छोटे कण (<100 माइक्रोमीटर) विशेष रूप से प्रचुर मात्रा में थे, जिससे यह चिंता बढ़ गई कि ये अन्य ऊतकों में स्थानांतरित हो सकते हैं और खाद्य श्रृंखला में उनकी जैव उपलब्धता बढ़ा सकते हैं।

माइक्रोप्लास्टिक अनुसंधान में चुनौतियां

माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण की पूरी सीमा को समझने में सबसे बड़ी बाधाओं में से एक अनुसंधान पद्धतियों में विविधता है। निष्कर्षण तकनीकों, पॉलिमर पहचान विधियों और संदूषण नियंत्रण में अंतर अध्ययनों के बीच तुलना को जटिल बनाता है। उदाहरण के लिए, शोधकर्ता आमतौर पर मछली के ऊतकों से माइक्रोप्लास्टिक को अलग करने के लिए पोटेशियम हाइड्रॉक्साइड पाचन का उपयोग करते हैं, लेकिन यह विधि 150 माइक्रोमीटर से छोटे कणों को पुनः प्राप्त करने में संघर्ष करती है। फूरियर-ट्रांसफॉर्म इन्फ्रारेड (FTIR) स्पेक्ट्रोस्कोपी पॉलिमर पहचान के लिए सबसे व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली तकनीक है, फिर भी असंगत मेल स्कोर और भिन्न स्पेक्ट्रल लाइब्रेरी के उपयोग से मानकीकरण में बाधा आती है।इसके अलावा, माइक्रोप्लास्टिक का आकलन करते समय संदूषण नियंत्रण महत्वपूर्ण है, क्योंकि हवाई रेशे आसानी से परिणामों को प्रभावित कर सकते हैं। सख्त नियंत्रण का उपयोग

करने वाले अध्ययनों, जैसे लैमिनार फ्लो कैबिनेट, ने काफी कम संदूषण दरें दर्ज की हैं, जो कठोर प्रोटोकॉल के महत्व को उजागर करती हैं।

वाणिज्यिक मछली आहार में माइक्रोप्लास्टिक

मछली आहार में माइक्रोप्लास्टिक का पता लगाने के लिए हाल के अध्ययनों ने सामान्य नमक घोल में फ्लोटेशन और रमन स्पेक्ट्रोस्कोपी जैसी बेहतर तकनीकों का विकास किया है। इन विधियों ने मछली आहार में 71.9 वस्तुओं/किलोग्राम तक माइक्रोप्लास्टिक सांद्रता का पता लगाया है, जिसमें अतिरिक्त 52 फाइबर/किलोग्राम भी शामिल हैं। गैर-रेशेदार माइक्रोप्लास्टिक, मुख्य रूप से पॉलीइथाइलीन, सबसे प्रचलित थे, जबकि माइक्रोफाइबर मुख्य रूप से रेयान और पॉलिएस्टर थे।

निष्कर्ष

मछलियों और मछली आहार में माइक्रोप्लास्टिक की मौजूदगी पर्यावरणीय स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा और स्थिरता के लिए एक बड़ी चुनौती पेश करती है। जबकि मनुष्यों पर प्रत्यक्ष स्वास्थ्य प्रभाव अनिश्चित बने हुए हैं, खाद्य श्रृंखला के माध्यम से जैव संचय और जैव प्रवर्धन की संभावना को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।माइक्रोप्लास्टिक से जुड़े जोखिमों को कम करने के लिए एक बहु-आयामी दृष्टिकोण आवश्यक है:

1. कचरा प्रबंधन में सुधार: बेहतर पुनर्चक्रण, कचरे के पृथक्करण और एकल-उपयोग वाले प्लास्टिक के विकल्पों के माध्यम से प्लास्टिक कचरे को स्रोत पर कम करना।

2. कड़े नियम: प्लास्टिक उत्पादन, निपटान और समुद्री पर्यावरण में माइक्रोप्लास्टिक निर्वहन के लिए सख्त दिशानिर्देश स्थापित करना।

3. अनुसंधान को बढ़ावा देना: माइक्रोप्लास्टिक निष्कर्षण और पॉलिमर पहचान के लिए पद्धतियों का मानकीकरण करना ताकि अध्ययनों की तुलनात्मकता और विश्वसनीयता में सुधार हो सके।

4. जागरूकता और वकालत: नीति निर्माताओं, उद्योगों और उपभोक्ताओं को माइक्रोप्लास्टिक के पर्यावरणीय और स्वास्थ्य प्रभावों के बारे में शिक्षित करना।

इस समीक्षा में प्रस्तुत निष्कर्ष माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण की व्यापक प्रकृति और वैश्विक खाद्य आपूर्ति के महत्वपूर्ण घटकों में इसके प्रवेश को उजागर करते हैं। इस चुनौती का समाधान करना समुद्री पारिस्थितिक तंत्र की रक्षा, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और बढ़ते पर्यावरणीय खतरों के सामने मानव स्वास्थ्य की रक्षा के लिए आवश्यक है।यह व्यापक विश्लेषण माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण के खिलाफ कार्रवाई को प्राथमिकता देने के लिए एक चेतावनी के रूप में कार्य करता है। सतत प्रथाओं और नवीन समाधानों को अपनाकर, हम अपनी अंतर्देशीय और समुद्री जल निकायों और स्वयं के लिए एक स्वच्छ, स्वस्थ भविष्य की दिशा में काम कर सकते हैं।

*

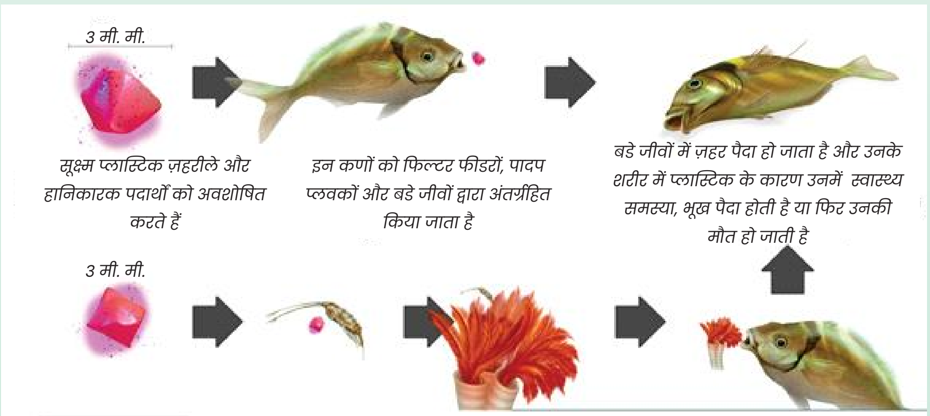

चित्र 1. माइक्रोप्लास्टिक भोजन श्रृंखला में ऊपर की ओर बढ़ते

चित्र 2. मछली में माइक्रोप्लास्टिक कण

आर्द्रभूमि संरक्षण और इसका महत्व

भारती साहू, राजेश कुमार, विपुल सिंह बड़गुजर

रामसर सम्मेलन सचिवालय (2013) ने आर्द्रभूमियों को विशेष रूप से परिभाषित किया है: "आर्द्रभूमियों में विभिन्न प्रकार के आवास शामिल हैं, जैसे दलदल, पीटलैंड्स, बाढ़ के मैदान, नदियाँ, झीलें और तटीय क्षेत्र जैसे नमक दलदल, मैंग्रोव और समुद्री घास के मैदान। इनमें प्रवाल भित्तियाँ और अन्य समुद्री क्षेत्र भी शामिल हैं, जिनकी गहराई कम ज्वार के समय छह मीटर से अधिक नहीं होती है, साथ ही मानव-निर्मित आर्द्रभूमियाँ जैसे अपशिष्ट जल उपचार तालाब और जलाशय।"

मिट्स और गॉसेलिंक (2000) के अनुसार, आर्द्रभूमियाँ पृथ्वी की सतह का अनुमानित 4 से 6% क्षेत्र को आच्छादन करती हैं। ये पारिस्थितिकी तंत्र आमतौर पर समतल इलाकों, जैसे नदी घाटियों में पाए जाते हैं, लेकिन खड़ी भूदृश्यों में भी भूजल स्रोतों के रूप में विकसित हो सकते हैं।

आर्द्रभूमियों से मानव द्वारा उपयोग किए जाने वाले अधिकांश स्वच्छ एवं पेय पानी की आपूर्ति होती है। इसलिए, आर्द्रभूमियाँ न केवल ताजे पानी की मात्रा बल्कि गुणवत्ता निर्धारित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

चित्र : कंवर झील आर्द्रभूमि

आर्द्र भूमियों का महत्व

आर्द्र भूमियाँ मानव समाज को निम्नलिखित मुख्य श्रेणियों में अनेक लाभ प्रदान करती हैं: प्रदायन, विनियमन), समर्थनऔर सांस्कृतिक सेवाएँ। इन सेवाओं में शामिल हैं:

1. कार्बन संग्रहण, बाढ़ नियंत्रण, जैव विविधता संरक्षण, मत्स्य उत्पादन और भूजल पुनर्भरण; जिनका वैश्विक महत्व है।
2. तटरेखाओं को स्थिर बनाना, जिससे कटाव कम होता है।
3. प्राकृतिक निस्पंदन के रूप में कार्य करते हुए जल की गुणवत्ता में सुधार।
4. कार्बन सिंक के रूप में कार्य करना, जो जलवायु परिवर्तन को कम करने में महत्वपूर्ण हो जाती है।
5. पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण हैं।
6. बाढ़ नियंत्रण में भूमिका निभाना।
7. जैव विविधता बनाए रखना।
8. लंबे समय तक स्थायी पारिस्थितिकीय कार्य प्रदान करना।
9. उत्पादक पारिस्थितिकी तंत्र होने के कारण मत्स्य पालन, चावल, लकड़ी और औषधीय पौधों जैसी उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन करना।

इन सेवाओं और कार्यों को देखते हुए आर्द्रभूमियों के संरक्षण की आवश्यकता अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

प्रमुख संकट

a) मानव-जनित प्रभाव

1. बढ़ती जनसंख्या और आर्द्रभूमि संसाधनों के व्यावसायिक उपयोग ने इन पारिस्थितिक तंत्रों पर दबाव बढ़ा दिया है।
2 . शहरीकरण और अन्य मानवीय गतिविधियों के कारण आर्द्रभूमियों का नुकसान हो रहा है।

b) विकास और संसाधनों का दोहन

1. शहरीकरण और औद्योगिकीकरण से आर्द्रभूमियों पर पर्यावरणीय दबाव बढ़ा है।
2. सरकारों द्वारा भी आर्द्रभूमि क्षरण को "विकास" के रूप में देखा जाता है।

c) अन्य कारक

1. नदियों के प्रवाह में अवरोध, पोषक तत्वों की अधिकता सुपोषण और आक्रामक प्रजातियों ए के जीवों का प्रभाव।
2 . शुष्क क्षेत्रों में सिंचित कृषि के लिए जल संसाधनों का प्रतिस्पर्धात्मक उपयोग।

आर्द्रभूमियों का संरक्षण

1. आर्द्रभूमि संरक्षण के लिए उनके महत्व को पहचानना और उन्हें कानूनी सुरक्षा प्रदान करना आवश्यक है।
2. रामसर सूचीबद्धता जैसे कदम आर्द्रभूमि संरक्षण में मदद कर सकते हैं।
3. जैव विविधता हॉटस्पॉट के रूप में आर्द्रभूमियों को संरक्षित करने के प्रयास तेज़ करने चाहिए।
4. जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में आर्द्रभूमियाँ सहायक हो सकती हैं।
5 . स्थानीय समुदायों की भागीदारी और जागरुकता बढ़ाना महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष

आर्द्रभूमियाँ पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता और मानव समाज के लिए अत्यंत मूल्यवान हैं। उनका संरक्षण जैव विविधता बनाए रखने और सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान कर सकता है। आर्द्रभूमि हानि को रोकने और पुनर्स्थापना के प्रयासों को प्राथमिकता देना आवश्यक है।

संदर्भ

- केड्डी, पी.ए., फ्रेजर, एल.एच., सोलोमेश्च, ए.आई., जंक, डब्ल्यू.जे., कैंपबेल, डी.आर., अरोयो, एम.टी., और आल्हो, सी.जे., 2009। वेट एंड वंडरफुल: द वर्ल्ड्स लार्जेस्ट वेटलैंड्स आर कंजरवेशन प्रायोरिटीज। बायोसाइंस, 59(1):39-51।
- किंग्सफोर्ड, आर.टी., बासेट, ए., और जैक्सन, एल., 2016। वेटलैंड्स: कंजरवेशनस पूअर कजन्स। एक्वाटिक कंजरवेशन: मरीन एंड फ्रेशवॉटर इकोसिस्टम्स, 26(5):892-916।
- ली, एल.एच., 2017। पर्सपेक्टिव्स ऑन लैंडस्केप एस्थेटिक्स फॉर द इकोलॉजिकल कंजरवेशन ऑफ वेटलैंड्स। वेटलैंड्स, 37(2):381-389।
- मिच, डब्ल्यू.जे., और गोसेलिंक, जे.जी., 2000। द वैल्यू ऑफ वेटलैंड्स: इम्पोर्टेंस ऑफ स्केल एंड लैंडस्केप सेटिंग।इकोलॉजिकल इकोनॉमिक्स, 35(1):25-33।
- मूर डी.आर., केड्डी पी.ए., गॉडेट सी.एल., और विश्यू आई.सी. (1989)। कंजरवेशन ऑफ वेटलैंड्स: डू इंफर्टाइल वेटलैंड्स डिजर्व ए हायर प्रायोरिटी।बायोलॉजिकल कंजरवेशन, 47(3):203-217।
- प्रसाद, एस.एन., रामचंद्र, टी.वी., अहल्या, एन., सेनगुप्ता, टी., कुमार, ए., तिवारी, ए.के., विजयन, वी.एस., और विजयन, एल., 2002। कंजरवेशन ऑफ वेटलैंड्स ऑफ इंडिया-ए रिव्यू। ट्रॉपिकल इकोलॉजी, 43(1):173-186।
- रामचंद्र, टी.वी., ऐथल, बी.एच., और कुमार, यू., 2012। कंजरवेशन ऑफ वेटलैंड्स टू मिटिगेट अर्बन फ्लड्स।जर्नल ऑफ रिसोर्सेज, एनर्जी एंड डेवलपमेंट, 9(1):1-22।
- सटन-ग्रियर ए.ई., और सैंडिफर, पी.ए., 2019। कंजरवेशन ऑफ वेटलैंड्स एंड अदर कोस्टल इकोसिस्टम्स: ए कमेंट्री ऑन देयर वैल्यू टू प्रोटेक्ट बायोडायवर्सिटी, रिड्यूस डिजास्टर इम्पैक्ट्स, एंड प्रमोट ह्यूमन हेल्थ एंड वेल-बीइंग। वेटलैंड्स, 39(6):1295-1302।
- टुलुआब, एफ.डी., और डेस्टाब, एम.ए., 2015। ह्यूमन डेवलपमेंट एंड वेटलैंड कंजरवेशन पॉलिसी। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एनवायरनमेंटल साइंसेज, 4(3):126-138।
- वालीज़ादेह, एन., एसफंदीयारी बयात, एस., बिजानी, एम., हयाती, डी., वीरा, एच.एच., तनस्कोविक, वी., कुर्बान, ए., और अज़ादी, एच., 2021। फार्मर्स इंटेंशन टुवर्ड्स द मैनेजमेंट एंड कंजरवेशन ऑफ वेटलैंड्स को समझना। लैंड, 10(8), पृ. 860।

*

ट्रॉलिंग द्वारा मछली पकड़ना और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र पर इसका नकारात्मक प्रभाव

शीतल कनुभाई भरड़ा, करणकुमार रामटेके, मुकेशकुमार भेंडारकर, राजेश कुमार, मुज़म्मल हक, और साहिना अख्तर

परिचय

ट्रॉलिंग विश्वभर में प्रचलित मछली पकड़ने की एक व्यापक और प्रभावी विधि है। इस पद्धति में बड़े जालों को समुद्र तल अथवा जलस्तंभ के मध्य भाग में खींचकर बड़ी मात्रा में मछलियों तथा अन्य समुद्री जीवों को पकड़ा जाता है। अपनी उच्च दक्षता के कारण ट्रॉलिंग मत्स्य उद्योग में महत्वपूर्ण स्थान रखती है और बढ़ती वैश्विक खाद्य मांग की पूर्ति तथा मत्स्य उद्योग के विकास में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। हालाँकि, इस विधि की उपयोगिता के साथ अनेक गंभीर पर्यावरणीय, पारिस्थितिक तथा सामाजिक-आर्थिक समस्याएँ भी जुड़ी हुई हैं। ट्रॉलिंग समुद्री आवासों को क्षति पहुँचाती है, जैव विविधता को प्रभावित करती है, गैर-लक्ष्य प्रजातियों की मृत्यु का कारण बनती है तथा पारंपरिक मछुआरा समुदायों की आजीविका पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। अतः सतत मत्स्य प्रबंधन के संदर्भ में ट्रॉलिंग के दुष्प्रभावों का गंभीर मूल्यांकन अत्यंत आवश्यक है।

ट्रॉलिंग क्या है?

ट्रॉलिंग मुख्यतः दो प्रकार की होती है, और दोनों का समुद्री पर्यावरण पर प्रभाव अलग-अलग होता है।

1. बॉटम ट्रॉलिंग

इस विधि में जाल समुद्र तल पर घसीटे जाते हैं, जिससे तलहटी पर रहने वाली मछलियाँ, जैसे झींगे और फ्लैटफ़िश, पकड़ी जाती हैं।

- **समुद्र तल को नुकसान:** यह विधि कोरल रीफ, समुद्री घास के मैदान और स्पंज क्षेत्रों जैसे संवेदनशील आवासों को गंभीर रूप से नुकसान पहुँचाती है।
- **तलछट में गड़बड़ी:** तलछट के हिलने से उसमें संचित कार्बन पुनः जलस्तंभ में आ सकता है, जो जलवायु परिवर्तन की समस्या को बढ़ा सकता है।

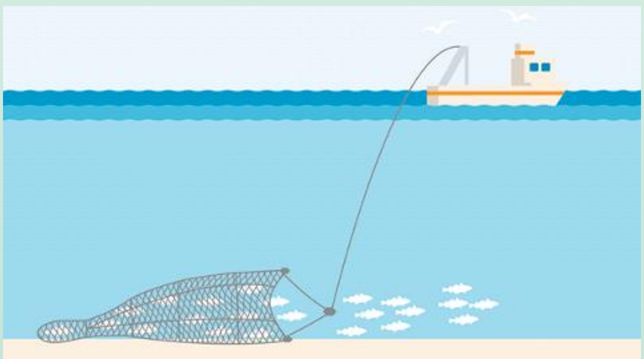

चित्र 1: ट्रॉलिंग द्वारा समुद्र के तल (बॉटम ट्रॉलिंग) में मछली पकड़ना

2. पेलाजिक ट्रॉलिंग

यह विधि जलस्तंभ के मध्य भाग में जाल खींचकर की जाती है, जहाँ मैकेरल, और टूना जैसी प्रजातियाँ पकड़ी जाती हैं।

- **गैर-लक्ष्य की समस्या:** यद्यपि यह समुद्र तल को कम प्रभावित करती है, फिर भी बड़ी मात्रा में गैर-लक्ष्य प्रजातियाँ जाल में फँस जाती हैं।
- **पारिस्थितिक असंतुलन:** जलस्तंभ में रहने वाले जीवों की संख्या घटने से खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक संतुलन प्रभावित हो सकता है।

ट्रॉलिंग के नकारात्मक प्रभाव

1. आवास विनाश

बॉटम ट्रॉलिंग समुद्र तल के जटिल और संवेदनशील आवासों को नष्ट कर देती है। कोरल रीफ, समुद्री घास और अन्य तलहटी संरचनाएँ अनेक समुद्री जीवों के प्रजनन, भोजन और आश्रय के लिए आवश्यक होती हैं। जब ये आवास नष्ट होते हैं, तो समुद्री जैव विविधता में गिरावट आती है और पूरा पारिस्थितिकी तंत्र असंतुलित हो सकता है।

2. बायकैच और गैर-लक्ष्य प्रजातियों की मृत्यु

ट्रॉलिंग का एक प्रमुख दुष्प्रभाव बायकैच है। ट्रॉल जालों में लक्षित प्रजातियों के साथ कछुए, डॉल्फ़िन, शार्क तथा अन्य गैर-लक्ष्य जीव भी फँस जाते हैं। इनमें से कई जीव समुद्र में वापस फेंक दिए जाते हैं, परंतु वे प्रायः जीवित नहीं बचते। इससे समुद्री जीव समुदायों पर दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

3. अत्यधिक मछली पकड़ना

ट्रॉलिंग की उच्च दक्षता कई क्षेत्रों में अत्यधिक दोहन को बढ़ावा देती है। लगातार और बड़े पैमाने पर मछली पकड़ने से मछली भंडार तेजी से घटते हैं। इससे कुछ प्रजातियाँ संकटग्रस्त हो सकती हैं और पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ सकता है। बड़े शिकारी जीवों की संख्या में कमी से खाद्य जाल की संरचना भी प्रभावित होती है।

4. कार्बन उत्सर्जन और प्रदूषण

ट्रॉलिंग पोतों का संचालन ईंधन-गहन होता है, जिससे ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बढ़ता है। इसके अतिरिक्त, विशेषकर बॉटम ट्रॉलिंग के दौरान तलछट में संग्रहित कार्बन पुनः जलस्तंभ में आ सकता है। यह प्रक्रिया समुद्री कार्बन भंडारण क्षमता को प्रभावित कर जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध प्राकृतिक संतुलन को कमजोर कर सकती है।

5. सामाजिक-आर्थिक प्रभाव

औद्योगिक ट्रॉलिंग का प्रभाव केवल समुद्री पारिस्थितिकी तक सीमित नहीं है, बल्कि यह तटीय समुदायों और छोटे मछुआरों की आजीविका को भी गंभीर रूप से प्रभावित करता है। बड़े ट्रॉलर अत्यधिक मात्रा में मछलियों की पकड़ करते हैं, जिसके कारण पारंपरिक मछुआरों के लिए उपलब्ध संसाधनों में कमी आती है। इससे उनकी मछली पकड़ने की क्षमता तथा आय, दोनों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। साथ ही, समुद्री खाद्य बाजारों पर बड़े व्यावसायिक समूहों का प्रभुत्व बढ़ने से छोटे और कारीगर मछुआरे

प्रतिस्पर्धा में कमजोर पड़ जाते हैं तथा आर्थिक रूप से हाशिए पर चले जाते हैं।

संरक्षण प्रयास और टिकाऊ विकल्प

ट्रॉलिंग के नकारात्मक प्रभावों को कम करने तथा समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न संरक्षण उपाय और टिकाऊ विकल्प अपनाए जा रहे हैं। इनका उद्देश्य समुद्री जैव विविधता का संरक्षण, गैर-लक्ष्य प्रजातियों की सुरक्षा, तथा मत्स्य संसाधनों का संतुलित और दीर्घकालिक उपयोग सुनिश्चित करना है।

1. **समुद्री संरक्षित क्षेत्र :** संवेदनशील समुद्री क्षेत्रों में ट्रॉलिंग पर प्रतिबंध लगाकर कोरल रीफ, समुद्री घास और अन्य महत्वपूर्ण आवासों की रक्षा की जा सकती है। इससे समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र को पुनर्जीवित होने का अवसर मिलता है।

2. **बायकैच रिडक्शन डिवाइस:** ट्रॉलिंग उपकरणों में तकनीकी सुधार कर गैर-लक्ष्य प्रजातियों, जैसे कछुए, डॉल्फिन और अन्य समुद्री जीवों, के अनावश्यक फँसने को कम किया जा सकता है। इससे समुद्री जैव विविधता के संरक्षण में सहायता मिलती है।
3. **मौसमी प्रतिबंध:** मछलियों और अन्य समुद्री जीवों के प्रजनन काल में ट्रॉलिंग पर अस्थायी रोक लगाना एक प्रभावी उपाय है। इससे कमजोर और संवेदनशील प्रजातियों को संरक्षण मिलता है तथा उनके प्राकृतिक पुनरुत्पादन को बढ़ावा मिलता है।
4. **चयनात्मक ट्रॉलिंग:** ऐसी ट्रॉलिंग तकनीकों को बढ़ावा देना आवश्यक है जिनसे केवल लक्षित प्रजातियों की ही पकड़ हो और समुद्र तल के आवासों को न्यूनतम क्षति पहुँचे। इस संदर्भ में मध्य-जल ट्रॉलिंग को अपेक्षाकृत बेहतर विकल्प माना जाता है।
5. **सामुदायिक सहभागिता:** स्थानीय मछुआरों और तटीय समुदायों को संरक्षण कार्यक्रमों तथा संसाधन प्रबंधन में शामिल करना अत्यंत आवश्यक है। इससे संसाधनों का न्यायसंगत, संतुलित और टिकाऊ उपयोग सुनिश्चित किया जा सकता है।

निष्कर्ष

ट्रॉलिंग मछली पकड़ने की एक प्रभावी और व्यापक तकनीक है, किंतु इसके साथ गंभीर पर्यावरणीय, पारिस्थितिक तथा सामाजिक-आर्थिक चुनौतियाँ भी जुड़ी हुई हैं। यह समुद्री आवासों को क्षति पहुँचाती है, जैव विविधता को प्रभावित करती है और तटीय समुदायों की आजीविका पर भी प्रतिकूल असर डालती है। इसलिए इसके दुष्प्रभावों को कम करने के लिए सख्त नियमों, उन्नत तकनीकों तथा टिकाऊ मत्स्यन प्रथाओं को अपनाना अत्यंत आवश्यक है। इसके साथ ही, वैश्विक सहयोग, स्थानीय समुदायों की सक्रिय भागीदारी तथा प्रभावी संरक्षण उपायों को बढ़ावा देकर ट्रॉलिंग से उत्पन्न जोखिमों को काफी हद तक कम किया जा सकता है। यह केवल समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन और स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए ही आवश्यक नहीं है, बल्कि उन लाखों लोगों के जीवन, आजीविका और खाद्य सुरक्षा की रक्षा के लिए भी अनिवार्य है, जो महासागरों और समुद्री संसाधनों पर निर्भर हैं।

*

पर्यावरणीय डीएनए : जैव विविधता की खोज का नया युग

संजीव कुमार सिंह, मुकुंदा गोस्वामी, बी .के. दास, म.यशवंत बाबू, निदर्शन एन.सी.

परिचय

हमारी धरती पर लाखों प्रजातियाँ निवास करती हैं, लेकिन इनमें से कई प्रजातियों को देख पाना या पहचान पाना बेहद मुश्किल है। खासकर दुर्लभ, लुप्तप्राय, या छोटे आकार के जीवों का पता लगाना पारंपरिक तरीकों से कठिन और समय-साध्य है। ऐसे में पर्यावरणीय डीएनए ने जैव विविधता की पहचान और संरक्षण के लिए एक नई राह खोली है। यह एक सरल, सटीक और प्रभावी तकनीक है, जो प्रजातियों के अस्तित्व और पारिस्थितिक तंत्र में उनकी भूमिका का अध्ययन करने में मदद करती है।

पर्यावरणीय डीएनए (ईडीएनए) क्या है? एवं विशेषताएँ

पर्यावरणीय डीएनए (ईडीएनए) एक आधुनिक तकनीक है, जिसके तहत किसी पर्यावरणीय नमूने (जैसे पानी, मिट्टी, हवा आदि) से जीवों के डीएनए का पता लगाया जाता है। इसमें जीवों के शरीर से छोड़े गए कोशिकाएँ, बाल, त्वचा, म्यूकस, मल, या अन्य जैविक सामग्री से प्राप्त डीएनए का विश्लेषण किया जाता है। ईडीएनए की विशेषता यह है कि यह सूक्ष्म डीएनए अंशों को भी पहचान कर सकता है। वैज्ञानिक इन अंशों को पानी, मिट्टी या हवा से इकट्ठा कर लैब में विश्लेषण करते हैं और यह पता लगाते हैं कि यह डीएनए किस प्रजाति का है। उदाहरण के लिए, किसी नदी के पानी का नमूना लेकर उसमें मौजूद मछलियों, पौधों और सूक्ष्मजीवों की पहचान की जा सकती है।

ईडीएनए का सैंपलिंग और विश्लेषण

ईडीएनए के अध्ययन की शुरुआत नमूनों को इकट्ठा करने से होती है। पानी, मिट्टी, या हवा का छोटा सा नमूना लेते हैं। उदाहरण के लिए, किसी झील से पानी का सैंपल लेकर उसमें मौजूद मछलियों, जलीय पौधों और सूक्ष्म जीवों का विश्लेषण किया जा सकता है। इसके बाद, इन नमूनों में मौजूद डीएनए को अलग किया जाता है। यह प्रक्रिया लैब में विशेष उपकरणों और तकनीकों की मदद से की जाती है।

ईडीएनए विश्लेषण की प्रक्रिया

ईडीएनए का विश्लेषण तीन मुख्य चरणों में होता है:

1. नमूने एकत्र करना :

इसमें पहले नमूना स्थल का चयन करते है जिस जगह पर अध्ययन करना हो, फिर पानी, मिट्टी, या हवा से नमूने एकत्र किए जाते हैं। इसमें दूषण का विशेष रूप से धयान रखा जाता हैं ,इसमें दूषण मुक्त संग्रह ट्यूब का उपयोग किया जाता है , जो पहले से एथेनॉल धूलि हुई होती है, पानी से नमूने (ईडीएनए) इकट्ठा करने के लिए फ़िल्टर का उपयोग किया जाता है, (फिल्टर पेपर का छिद्र आकार 0.22 माइक्रोमीटर या 0.45 माइक्रोमीटर का होता हैं /) जो पानी में घुले डीएनए को पकड़ लेता है।

मिट्टी के लिए, मिट्टी को खास उपकरणों से निकालकर उसमें से डीएनए अलग किया जाता है। इसमें साफ़ ट्रॉवेल्स या स्कूप्स, ऑगर्स, बाँझ सीरिंज (बड़ी क्षमता) इत्यादि की मदद से कर सकते है, नमूना लेने के समय हाँथ में साफ दस्ताने अनिवार्य रुप से होने चाहिए इससे दूषण से बचाव होता है

हवा से डीएनए एकत्र करने के लिए फिल्टरिंग उपकरण का इस्तेमाल होता है एवं संग्रह के लिए फिल्टर पेपर के आकार का चुनाव वास्तव में लक्ष्य कणों और पर्यावरणीय स्थितियों के आधार पर भिन्न होता है।

कुछ वायु फ़िल्टर पेपर एंड लक्षित कण के उदाहरण

फ़िल्टर पेपर का छिद्र आकार	हवा से लक्षित कण	उदाहरण
<0.22 माइक्रोमीटर	वायरल कण और मुक्त-फ़्लोटिंग डीएनए के लिए	अत्यंत स्वच्छ वायु वातावरण में बहुत छोटे वायुजनित रोगाणुओं या डीएनए को कैप्चर करना।
0.22–0.45 माइक्रोमीटर	बैक्टीरिया, छोटे कवक बीजाणु, मुक्त डीएनए के लिए	माइक्रोबियल ईडीएनए अध्ययन या सूक्ष्म कणों वाले वातावरण के लिए आदर्श।
0.45–1.2 माइक्रोमीटर	मिश्रित माइक्रोबियल कोशिकाएं, कवक बीजाणु, धूल के लिए	सामान्य वायुजनित ईडीएनए अध्ययन के लिए सामान्य, कण कैप्चर और वायुप्रवाह को संतुलित करना।
1.2–3.0 माइक्रोमीटर	बड़े कवक बीजाणु, परागकण, एकत्रित डीएनए के लिए	यूकेरियोटिक डीएनए, पराग अध्ययन और मलबे से बंधे कणों के लिए उपयुक्त।
>5.0 माइक्रोमीटर	पराग, बड़े कण के लिए	उच्च-धूल या पराग-भारी वातावरण में प्री-फ़िल्टर के रूप में उपयोग किया जाता है।

2. डीएनए पृथीकरण:

नमूनों में मौजूद डीएनए को अलग करने के लिए लैब में विशेष रसायनों का उपयोग किया जाता है। विभिन्न प्रकार के ई-डीएनए किट जो बाजार में उपलब्ध हैं या फिर पारंपरिक तरीका का उपयोग कर सकते है , जैसे कि फिनॉल -क्लोरोफॉर्म मेथड ,साल्टिंग- आउट,सी- टैब पद्धति इत्यादि / इसमें से वनस्पति ईडीएनए के लिए सी टैब, और जिव जंतु ईडीएनए के लिए साल्टिंग आउट और फिनॉल क्लोरोफॉर्म मेथड का उपयोग किया है यह प्रक्रिया सूक्ष्म डीएनए अंशों को साफ और शुद्ध बनाती है, ताकि उनका सही तरीके से विश्लेषण किया जा सके।

3. डीएनए की पहचान करना

प्रजाति विशिष्ट या सार्वभौमिक प्राइमर का उपयोग करके शुद्ध डीएनए का विश्लेषण करने के लिए पॉलिमरेज़ चेन रिएक्शन तकनीक का उपयोग किया जाता है। यह तकनीक डीएनए के छोटे-छोटे हिस्सों को बढ़ाकर उनका अध्ययन करने में मदद करती है। मछलियों एवं अन्य जलीय जीवों की पहचान के लिए सामान्य तौर पर सीओई प्राइमर का प्रयोग करते है,जिसका जीन कोशिका के माइटोकांड्रिया में पाया जाता है, जलीय वनस्पति की पहचान हेतु आरबीसीएल प्राइमर का उपयोग करते है, जिसका जीन क्लोरोप्लास्ट में पाया जाता है , और सूछम जीवो जैसे की बैक्टीरिया ,फफूंद, इत्यादि की पहचान के लिए 16एस राइबोसोमल आरएनए प्राइमर का प्रयोग करते है जिसका जीन उनके जीनोम में उपस्थित होता है / आमतौर पर मछलियों की सही पहचान के लिए एक सार्वभौमिक प्राइमर का उपयोग करते है ,जिसका अनुक्रम कुछ इस प्रकारहै-FISHF1 5'TCAACCAACCACACCGACATTGGCAC

यह प्राइमर सीओई जीन पर आधरित है / उच्च संवेदनशीलता ,एकाधिक प्रजातियों का एक साथ पता लगाना, जैव विविधता अध्ययन या मिश्रित डीएनए का कुशल विश्लेषण इत्यादि में नेक्स्ट-जनरेशन सीक्वेंसिंग उन्नत तकनीकों का उपयोग कर पता लगाया जाता है इसके बाद वैज्ञानिक प्रजातियों से ज्ञात जीनोम डेटा (एनसीबीआई एवं बोल्ड इत्यादि) से तुलना कर यह सुनिश्चित करते हैं कि नमूने में मौजूद डीएनए किससे मेल खाता है। कुछ उपयोग की जाने वाली प्राइमर के नाम निम्नलिखित है/

मछली के ऊतकों से जुड़े कुल बैक्टीरिया का पता लगाने के लिए सार्वभौमिक प्राइमर

टार्गेट गेने	प्राइमर का नाम	सीक्रेंस	रीफरेंस
16S rRNA	DG74/ RW01	AGGAGGTGATCCAACCGAA AACTGGAGGAAGAAGGTGGGGAT	Greisen et al. (1994)
16S rRNA	PLK1/ PLK2	TACGGGAGGCAGCAG TATTACCGCGGCGGCTGCT	Klaschik et al. (2002)
23S rRNA	PF/PR	AAGCTTGCTGGAGGTATCAGAAGTG CTCCGCCCCTCCATCGCAGT	Venkitanarayanan et al. (1996)
16S rRNA	DG74/ 68D	AGGAGGTGATCCAACCGCA AYGACGTCAAGTCMTCATGG	Klausegger et al. (1999)
16S rRNA	P11p/ P13p	ACGTCATCCCCACCTTCCTC	Chen et al. (1989)

पीसीआर यंत्र

क्रेडिट – एफजीबी डिवीज़न भा.कृ.अनु.प.-सिफे भा.कृ.अनु.प.- सिफे

रियल टाइम पीसीआर

क्रेडिट - एफजीबी डिवीज़न

ईडीएनए का नमूना संग्रह
क्रेडिट - मैथ्यु बी. लारामी/यूएसजीएस

वैक्युम फिल्टर
क्रेडिट - एफआरम विभाग, भा.कृ.अनु.प.-सी.आईएफ.ई

भारत में मत्स्य पालन में ईडीएनए का भविष्य

- जलीय जैव विविधता का संरक्षण भारत में कई लुप्तप्राय मछली प्रजातियाँ (महसीर, हिल्सा, टॉरपीडो मछली आदि) हैं।
- जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में मछलियों की प्रजातियों की संरचना और उनके प्रजनन पैटर्न की निगरानी में ईडीएनए सहायक है। जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में मछलियों की प्रजातियों की संरचना और उनके प्रजनन पैटर्न की निगरानी में ईडीएनए सहायक है।
- ईडीएनए तकनीक इन प्रजातियों का पता लगाने और उनके वितरण का अध्ययन करने में मदद कर सकती है। इसे गंगा, ब्रह्मपुत्र, और गोदावरी जैसी नदियों में मछलियों की आबादी के संरक्षण के लिए उपयोग किया जा सकता है।
- ईडीएनए का उपयोग पानी में उपस्थित रोगजनकों और प्रदूषण के स्तर का पता लगाने के लिए किया जा सकता है। यह जलीय प्रजातियों के स्वास्थ्य और उनके आवास की गुणवत्ता सुनिश्चित करने में मदद करेगा।
- जलवायु परिवर्तन के कारण मछलियों के वितरण में हो रहे बदलावों को ईडीएनए तकनीक से ट्रैक किया जा सकता है। इससे पारिस्थितिकी तंत्र में नई प्रजातियों के प्रवेश और विलुप्त होने वाली प्रजातियों की पहचान संभव है।
- भारत में जलीय अनुसंधान संस्थानों (जैसे, भा.कृ.अनु.प.- के.मा.शि.सं., भा.कृ.अनु.प.- के.स.म.अ.स.) द्वारा ईडीएनए आधारित अध्ययन बढ़ रहे हैं। भविष्य में, ईडीएनए का उपयोग अधिक जटिल अध्ययन जैसे जीनोम स्तर पर प्रजातियों की पहचान और पारिस्थितिकी तंत्र मॉडलिंग में किया जाएगा।

जैव विविधता संरक्षण में ईडीएनए का महत्व और निष्कर्ष

आज जैव विविधता पर कई तरह के संकट हैं, जैसे वनों की कटाई, जलवायु परिवर्तन, और प्रदूषण। इन समस्याओं से निपटने के लिए यह समझना जरूरी है कि किस क्षेत्र में कौन-कौन सी प्रजातियाँ मौजूद हैं। ईडीएनए इस कार्य में बेहद कारगर साबित हो रहा है। पारंपरिक तकनीक जैसे जाल लगाना, जीवों को पकड़ना, और उन्हें सीधा देखना समय, श्रम और लागत की दृष्टि से चुनौतीपूर्ण हो सकता है। इसके अलावा, इनमें जीवों को उनके प्राकृतिक पर्यावरण से बाहर निकालने की आवश्यकता होती है, जिससे उनके आवास को नुकसान हो सकता है। ईडीएनए न केवल प्रजातियों की उपस्थिति की जानकारी देता है, बल्कि यह भी बताता है कि किसी क्षेत्र का पारिस्थितिक संतुलन कैसा है। एवं जैसे-जैसे विज्ञान और तकनीकी ज्ञान बढ़ेगा, ईडीएनए का उपयोग न केवल संरक्षण में बल्कि पारिस्थितिकी तंत्र प्रबंधन और पुनर्स्थापना में भी नए आयाम स्थापित करेगा।

*

भारत में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ाने के लिए ब्लू इकोनॉमी (नीली अर्थव्यवस्था) की क्षमता

मुजाम्मल हक, आशा लांडगे, करणकुमार रामटेके, केशम गेनिता और भरदा शीतल कनुभाई

परिचय

ब्लू इकोनॉमी (नीली अर्थव्यवस्था) महासागर संसाधनों का स्थायी उपयोग करते हुए आर्थिक विकास को बढ़ावा देने का एक आधुनिक तरीका है। यह पर्यावरण की रक्षा के साथ-साथ सामाजिक समानता को भी सुनिश्चित करता है। भारत की 7,500 किलोमीटर लंबी तटरेखा, 1,382 द्वीप और 2.37 मिलियन वर्ग किलोमीटर के विशाल आर्थिक क्षेत्र इसे ब्लू इकोनॉमी के लिए एक विशेष स्थान प्रदान करते हैं। यह अवधारणा न केवल आर्थिक स्थिरता को बढ़ावा देती है बल्कि वैश्विक व्यापार और साझेदारी को मजबूत करने का भी एक माध्यम बन सकती है।

ब्लू इकोनॉमी (नीली अर्थव्यवस्था)

ब्लू इकोनॉमी उन गतिविधियों का समूह है जो समुद्री संसाधनों पर आधारित हैं, जैसे:

1. मत्स्य पालन और जलीय कृषि
2. समुद्री व्यापार और परिवहन
3. तटीय पर्यटन
4. नवीकरणीय ऊर्जा (जैसे पवन और ज्वारीय ऊर्जा)
5. समुद्री जैव प्रौद्योगिकी

इसका उद्देश्य आर्थिक विकास को पारिस्थितिक संतुलन और सामाजिक लाभ के साथ जोड़ना है।

नीली अर्थव्यवस्था में भारत का विशेष लाभ

1. भौगोलिक स्थिति

भारत की स्थिति हिंद महासागर क्षेत्र में केंद्रीय है, जो एशिया, अफ्रीका और यूरोप को जोड़ने वाले समुद्री व्यापार मार्गों के लिए एक रणनीतिक लाभ प्रदान करती है।

2. समृद्ध जैव विविधता

भारत के समुद्री जल में कई प्रजातियाँ पाई जाती हैं जो मत्स्य पालन, जलीय कृषि और जैव प्रौद्योगिकी के लिए एक अमूल्य संपत्ति हैं।

3. मजबूत बंदरगाह और परिवहन ढाँचा

भारत में 13 बड़े और 200 से अधिक छोटे बंदरगाह हैं, जो अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा देने में मदद करते हैं।

4. सरकारी योजनाएँ

सागरमाला योजना और मत्स्य संपदा योजना जैसे कार्यक्रम भारत के समुद्री ढाँचे को आधुनिक बनाने और पर्यावरण के अनुकूल मत्स्य पालन को बढ़ावा देने में मदद कर रहे हैं।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ाने के अवसर

1. समुद्री व्यापार और बंदरगाहों का विकास

- भारत के बंदरगाह बाहरी व्यापार का लगभग 90% संभालते हैं।
- सागरमाला परियोजना के तहत बंदरगाहों का आधुनिकीकरण और विस्तार वैश्विक व्यापार में भारत की प्रतिस्पर्धा को मजबूत कर सकता है।
-

2. समुद्री नवीकरणीय ऊर्जा

- पवन और ज्वारीय ऊर्जा परियोजनाएँ अंतर्राष्ट्रीय निवेश आकर्षित कर सकती हैं।
- स्वच्छ ऊर्जा के क्षेत्र में भारत का सहयोग इसे वैश्विक अग्रणी बना सकता है।

3. मत्स्य पालन और जलीय कृषि

- भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा मछली उत्पादक देश है।
- टिकाऊ मत्स्य पालन और उच्च गुणवत्ता वाले समुद्री उत्पाद निर्यात को बढ़ावा दे सकते हैं।

4. तटीय पर्यटन

- गणपतिपुले, तारकरली और मुरुद-जंजीरा जैसे समुद्र तट अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।
- स्नॉर्कलिंग, स्कूबा डाइविंग जैसी गतिविधियाँ इको-पर्यटन को बढ़ावा देती हैं।

5. समुद्री सुरक्षा और आधुनिक लॉजिस्टिक्स

- नौसैनिक सुरक्षा को मजबूत करने से व्यापार मार्ग सुरक्षित होंगे।
- शिपिंग तकनीक में सुधार व्यापार लागत को कम करेगा और दक्षता बढ़ाएगा।

चुनौतियाँ

1. पर्यावरणीय जोखिम

- अधिक मछली पकड़ना, समुद्री प्रदूषण और तटीय आवासों का विनाश समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र को प्रभावित करते हैं।

2. असमान बुनियादी ढाँचा

- कुछ क्षेत्रों में अवसंरचना की कमी विकास को बाधित करती है।

3. नीतियों में असंगति

- विभिन्न राज्यों में अलग-अलग नियम और कानून निवेशकों के लिए चुनौतीपूर्ण हैं।

4. वैश्विक प्रतिस्पर्धा

- अन्य समुद्री राष्ट्रों के साथ प्रतिस्पर्धा के लिए बेहतर योजना और निवेश की आवश्यकता है।

सफलता के लिए रणनीति

1. अंतर्राष्ट्रीय सहयोग

- आईओआरए और आईएमओ जैसे संगठनों के साथ साझेदारी

करना।

2. नवाचार और अनुसंधान

- जैव प्रौद्योगिकी और स्वच्छ ऊर्जा के क्षेत्र में अनुसंधान बढ़ाना।

3. कौशल विकास

- तटीय समुदायों को आधुनिक समुद्री प्रौद्योगिकी में प्रशिक्षित करना।

4. पर्यावरण संरक्षण

- हरित प्रथाओं को बढ़ावा देना।

5. एकीकृत नीति

- ब्लू इकोनॉमी के लिए एक सुसंगत राष्ट्रीय नीति बनाना।

निष्कर्ष

भारत की ब्लू इकोनॉमी आर्थिक और पर्यावरणीय स्थिरता का संगम है। इसका प्रभावी उपयोग न केवल भारत को एक वैश्विक व्यापार केंद्र में बदल सकता है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण को भी सुनिश्चित करेगा। भारत की तटीय शक्ति का सही प्रबंधन और सतत विकास से भविष्य के लिए असीम संभावनाएँ पैदा होंगी।

*

कॉमेट परीक्षण : पर्यावरणीय आनुवांशिक विषाक्त रसायन से जलीय जीवो में होने वाले कुप्रभाव की निगरानी हेतु उपयोगी तकनीक

जयश्री एस. शेलके, कृतिकुमारी, हर्षवर्धिनी एम, नरेश एस. नागपुरे

परिचय

इक्कीसवीं सदी में हमें पीने के पानी, कृषि, औद्योगिक गतिविधियाँ, मनोरंजन इत्यादि के लिए अधिक मात्रा मेंजल की आवश्यकता बढ़ गई है। कृषि, शहरी जनसंख्या और उद्योग से प्राप्त होनेवाला कचरा अधिक मात्रा में जल मार्ग जैसे नदियाँ, समुद्री तटीय क्षेत्र और झीलों में डाला जाता है। हवा में फैलने वाले प्रदूषकों केकारण पर्यावरण में

प्रदुषण की मात्रा प्रत्यक्ष याअप्रत्यक्ष रूप से बढ़ जाती है। इन में ज़ेनोबाइओटिक्स और अज्ञात प्रदूषकों का एक जटिल समूह अधिक मात्रा में पर्यावरण मे पाया जाता है। 1970 के दशक के अंत में, जल पर्यावरणों में मसल्स और मछलियों जैसी प्रजातियों में होनेवाले उत्परिवर्तकों और आनुवांशिक विषाक्तता (जीनोटॉक्सिसिटी)की निगरानी के लिएतकनीकों का विकास किया गया था। तब से लेकर अब तक, जल प्रजातियों के डीएनएमें परिवर्तन का पता लगाने के लिए विभिन्न तकनीकों का विकास किया गया है। इनमें से कई विधियाँ संभावित रूप से पूर्व-उत्परिवर्तक घावों पर आधारित हैं, जैसे डीएनएबेस संशोधन, डीएनए- डीएनएऔर डीएनए-प्रोटीन क्रॉस-लिंकिंग, और डीएनएस्ट्रैंड ब्रेक,कॉमेट परीक्षणायूकेरियोटिक कोशिकाओं में डीएनए क्षति को मापने के लिएक्षारीय कॉमेट परीक्षण(एकलकोशिका जेल वैद्युतकणसंचलन) सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली विधि है। यह प्रति कोशिका कुछ सौ से लेकर कई हजार तक की आवृत्तियों पर स्ट्रैंड ब्रेक और क्षार-प्रयोगशाला साइटों का पता लगाती है।

स्वीडिश वैज्ञानिक, ओस्टलिंग और जोहानसन (1984) की पहली रिपोर्ट के बाद से, इन विट्रो और इन विवो मॉडल दोनों में, रसायनों के आनुवांशिक विषाक्तता परीक्षण में धूमकेतु (कॉमेट) परख का व्यापक रूप से उपयोग किया गया है। धूमकेतु परख के साथ एक फायदा यह है कि विभिन्न प्रकार के यूकेरियोटिक जीवों में विभिन्न ऊतकों की कोशिकाओं का अध्ययन किया जा सकता है। पिछले 15 वर्षों के दौरान, रसायनों की जीनोटॉक्सिसिटी का परीक्षण करने के लिए ड्रोसोफिला मेलानोगास्टर में धूमकेतु परख का बड़े पैमाने पर उपयोग किया गया है।यह दृष्टिकोण बहुत उपयोगी है क्योंकि ड्रोसोफिला मेलानोगास्टर डीएनए क्षति प्रतिक्रियाओं सहित मानव स्वास्थ्य से संबंधित सभी प्रकार की प्रक्रियाओं के लिए एक मूल्यवान मॉडल है।कॉमेट परीक्षणएक ऐसी विधि है जिसमें डीएनए विश्लेषण और वैद्युतकणसंचलन तटस्थ परिस्थितियों में किया जाता है, और डीएनए को स्टेन करने के लिए एक्रिडीन ऑरेंज का उपयोग किया जाता है।

खगोलशास्त्र से लिया गया यह रूपक दृश्य रूप से उपयुक्त है, क्योंकि इस तकनीक से प्राप्त होने वाली छवि एक "कॉमेट" जैसी दिखती है, जिसमें एक स्पष्ट सिर होता है जो अक्षत डीएनएसे बना होता है, और एक पूंछ होती है जिसमें क्षतिग्रस्त या टूटे हुए अंश होते हैं। कॉमेट परिक्षण में पौधों के साथ-साथ स्थलीय और जलीय प्रजातियों की एक विस्तृत श्रृंखला का उपयोग पिछले दशक में नाटकीय रूप से बढ़ गया है, विशेष रूप से पर्यावरणीय जोखिम मूल्यांकन में। कॉमेट परीक्षण प्रविधिके माध्यम से कोशिकाओं में जीनोमिक क्षतिको विश्लेषित किया जाता है, जो विशेष रूप से उन पर्यावरणीय प्रदूषित परिस्थितियों में उपयोगी है, जो जलीय जीवोंको प्रभावित कर सकती हैं। यह तकनीक खासकर उन वातावरणों में उपयोगी है जहां रासायनिक प्रदूषण और विषैले तत्वों का स्तर बढ़ा हुआ है, जिससे पानी के जीवों की जैविक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

कॉमेट परीक्षण

कॉमेट परीक्षण, जिसे 'सिंगल सेल जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस' भी कहा जाता है, यह एक विधि है जिसका उपयोग एकल कोशिका में डीएनए क्षति को मापने के लिए किया जाता है। कॉमेट परीक्षण का सिद्धांत यह है कि क्षतिग्रस्त डीएनए विद्युत क्षेत्र के तहत कोशिका से बाहर जाता है, जिससे "कॉमेट पूंछ" बनती है, जबकि अविकृत डीएनए कोशिका में बना रहता है, जिससे "कॉमेट सिर" बनता है। कॉमेट परीक्षणमें डीएनए में जो नुकसान हुआ है, वह प्रवाह के आधार पर मापा जाता है। इस प्रवाह को अलग-अलग मापने से यह पता चलता है, कि कोशिकाओं में कितनी डीएनए क्षति हुई है।डीएनए क्षति का पता लगाने के लिए, कॉमेट परीक्षण एक सरल, सस्ता और संवेदनशील तरीका है।

डीएनए क्षति की सीमा को कॉमेट छवियों का विश्लेषण करके मापा जा सकता है, जिसे गुणात्मक या मात्रात्मक रूप से किया जा सकता है। यह तकनीक कोशिकाओं में डीएनए के टूटने और अन्य जेनेटिक नुकसान को मापने के लिए इस्तेमाल होती है। इसका उपयोग जैविक निगरानी और पर्यावरणीय विषैले तत्वोंके प्रभाव का अध्ययन करने के लिए किया जाता है।

कॉमेट परीक्षण में तीन मुख्य प्रकारसे केडीएनए क्षति को मापा जाता है-

- 1. डीएनए का टूटना: जिनमे कोशिकाओं के जीनोम में बदलाव होते हैं।
- 2. आक्सीडेटिव क्षति: जो कोशिकाओं के डीएनए पर रासायनिक प्रभाव डालता है।
- 3. माइक्रो न्यूक्लियस: जो अक्रियात्मक रूप से कोशिका से अलग होने वाली डीएनए सामग्री है।

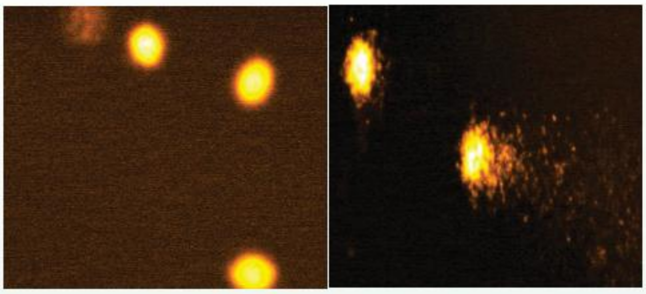

अक्षतिग्रस्त स्थिति क्षतिग्रस्त स्थिति

चित्र 1- दृश्यमान कॉमेटवाली कोशिका डीएनए क्षति दिखा रही है।

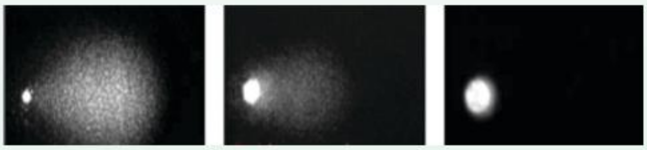

चित्र 2- उच्चक्षतिग्रस्त स्थिति निम्न क्षतिग्रस्त स्थिति अक्षतिग्रस्त स्थिति

कॉमेट परीक्षण मापन

कॉमेट परीक्षण मापन मे कॉमेट के सिर और पूंछ के बीच मेडीएनए क्षति को मापने की एक विधि है। कॉमेट परीक्षण स्कोर मापन करनेके प्रमुख दो तरीके हैं -दृश्य मापन और छवि विश्लेषण-मापन।

दृश्य मापन

इसमें कॉमेट परीक्षण को उनके आकार और पूंछ की तीव्रता के आधार पर पांच वर्गों में गिनना और वर्गीकृत करना शामिल है। प्रत्येक वर्ग को 0 और 4 के बीच एक मान दिया गया है। कुल कॉमेट परीक्षण स्कोर की गणना प्रत्येक वर्ग में धूमकेतुओं की संख्या का उपयोग करके की जाती है। पूर्वाग्रह से बचने के लिए, स्लाइडों को अंधा अंकन किया जाता है और धूमकेतुओं को यादृच्छिक रूप से स्कोर किया जाता है।

छवि विश्लेषण-मापन

इसमें कॉमेट में डीएनए प्रवासन को मापने के लिए सॉफ़्टवेयर का उपयोग करना शामिल है, जैसे कि धूमकेतु की पूंछ की लंबाई। यहां अर्ध-स्वचालित और पूर्णतः स्वचालित सिस्टम उपलब्ध हैं।छवि विश्लेषण पूरे न्यूक्लियॉइड की प्रतिदीप्ति की तीव्रता और माइग्रेटेड डीएनए की फ्लोरोसेंस को मापता है और उन दोनों संकेत की तुलना करता है। माइग्रेटेड डीएनए मे से जितना मजबूत संकेत आता है, उतना अधिक क्षति उपस्थिति होती है। समग्र संरचना एक कॉमेट जैसी होती है (इसलिए इसे "कॉमेट परीक्षण" कहा जाता है), जिसमें गोलाकार सिर अविकसित डीएनए को दर्शाता है जो एक कैविटी में बना रहता है और वो क्षतिग्रस्त डीएनए की पूंछ होती है। जितनी उज्जवल और लंबी पूंछ होती है, उतनी ही अधिक क्षति का स्तर होता है।

जलीय जीवों के स्वास्थ्य की निगरानी

स्थलीय, जलीय अकशेरुकी और कशेरुकी जीवों में डीएनए क्षति का आकलन करने के लिए कॉमेट परीक्षण का उपयोग विश्व स्तर पर किया गया है। कॉमेट परीक्षण तकनीक का उपयोग जलीय जीवों जैसे मछलियों, उभयचरों, और जलजीवों के स्वास्थ्य की निगरानी करने में किया जाता है। विभिन्न रासायनिक प्रदूषक जैसे भारी धातुएं, कीटनाशक, और औद्योगिक रसायन जलीय जीवों में डीएनए को नुकसान पहुंचा सकते हैं। यह नुकसान उनके स्वास्थ्य और प्रजनन क्षमता पर असर डाल सकता है। जलवायु परिवर्तन के कारण जल के तापमान में वृद्धि, ऑक्सीजन की कमी, और अन्य तनावपूर्ण परिस्थितियाँ जलीय जीवों के डीएनए को प्रभावित कर सकती हैं। कॉमेट परीक्षण तकनीक जलीय जीवों में उपस्थिति प्रदूषकों के प्रभावों को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, और इसके द्वारा डीएनए क्षति के पैटर्न को देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि जीवों पर प्रदूषण का कितना बुरा प्रभाव पड़ा है।

जल में रासायनिक प्रदूषण और पर्यावरणीय बदलावों के कारण जलीय जीवों में डीएनए क्षति होती है, जो उनके विकास, प्रजनन और सामान्य जीवन क्रियाओं को प्रभावित कर सकता है। कॉमेट परीक्षण की सहायता से, शोधकर्ता इन जीवों में होने वाले जेनेटिक नुकसान का जल्दी और प्रभावी ढंग से पता लगा सकते हैं। अन्य जीनोटॉक्सिसिटी परीक्षणों की तुलना में कॉमेट परीक्षण तकनीक में कई फायदे हैं। एकल कोशिका स्तर पर डीएनए क्षति की पहचान करने की इस परख की क्षमता के अलावा, अन्य महत्वपूर्ण लाभों में डीएनए क्षति के निम्न स्तर का पता लगाने के लिए इसकी संवेदनशीलता, प्रति नमूने केवल छोटी संख्या में कोशिकाओं की आवश्यकता, इसके अनुप्रयोग में आसानी और कम लागत शामिल हैं और परीक्षण करने के लिए आवश्यक समयकम लगता है।कॉमेट परीक्षण का उपयोग कई अध्ययनों में विभिन्न प्रकार के डीएनए-हानिकारक एजेंटों के साथ ट्यूमर कोशिकाओं की एक विस्तृत श्रृंखला में डीएनए क्षति की जांच और सुधारनके लिए किया गया है।इसलिए, कॉमेट परिक्षण जलीय जीवों के स्वास्थ्य की निगरानी मे महत्वपूर्ण योगदान अदा करता है।

कॉमेट परीक्षण उपयोग

इस परिक्षण के सहज और सरलता के कारण, एकल-सेल जेल वैद्युतकणसंचलन के तटस्थ और क्षारीय संस्करणों ने तेजी से बहुत लोकप्रियता हासिल की। विश्लेषण के लिए आवश्यक कोशिकाओं की कम संख्या, लगभग किसी भी प्रकार की कोशिकाओं से निपटने का लचीलापन और सटीकता के साथ विविध डीएनए क्षति को मापने की क्षमता के कारण कॉमेट परीक्षण बायोमोनिटरिंग और नैदानिक जांच में अपरिहार्य है। इस विधि ने विभिन्न रसायनों, भौतिक तत्वों, नैनोकणों, दवाओं आदि की उत्परिवर्तनशीलता की जांच की है । कॉमेट परिक्षण में जीनोटॉक्सिसिटी परीक्षण, मानव बायोमोनिटोरिंग और आणविक महामारी विज्ञान, इकोजेनोटॉक्सिकोलॉजी, और साथ ही डीएनए क्षति और रिपेयर में आधारभूत अनुसंधान मे शामिल हैं। उदाहरण के लिए, कॉमेट परिक्षण का उपयोग उम्र बढ़ने के दौरान चूहे के मस्तिष्क के न्यूरॉन्स और एस्ट्रोसाइट्स में कई प्रकार के डीएनए क्षति में उल्लेखनीय वृद्धि देखि जा चुकी है , जिसमें की सिंगल-स्ट्रैंड ब्रेक, डबल-स्ट्रैंड ब्रेक और संशोधित बेस (8-ओएचडीजी और यूरैसिल) शामिल हैं। कॉमेट परीक्षण प्रमाणित है कि डीएनए स्ट्रैंड के

टूटने से इलेक्ट्रोफोरेटिक ट्रैक बनाने में बहुत मदद मिलती है। बहुत लंबे समय से, यह व्यापक रूप से माना जाता था कि तटस्थ इलेक्ट्रोफोरेसिस प्रोटोकॉल, जो तब होता है जब डबलस्ट्रैंडेड अणु स्थानांतरित होते हैं, केवल डबल-स्ट्रैंडेड ब्रेक के अनुमान के लिए अनुमति दी जाती है। इसके विपरीत, क्षारीय वैद्युतकणसंचलन, जो डीएनए को विकृत करता है, एकल और डबल-स्ट्रैंड दोनों के टूटने का अनुमान लगाने की अनुमति देता है। यह अतिसरलीकृत दृष्टिकोण पूरी तरह सटीक नहीं है।

1979 में पहली बार संवर्धित मछली कोशिकाओं का उपयोग जीनोटॉक्सिसिटी मूल्यांकन के लिए किया गया, तब जब तितली स्प्लिटफिन (अमेका स्प्लेंडेंस) के भ्रूण के ऊतकों की प्राथमिक संस्कृति से प्राप्त रूपांतरित कोशिकाओं का उपयोग कार्सिनोजेन द्वारा सिस्टर क्रोमैटिड एक्सचेंज (एससीई) के प्रेरण के मूल्यांकन के लिए किया गया था।तब से कॉमेट परिक्षण सहित विभिन्न जीनोटॉक्सिसिटी परखों का उपयोग करके जीनोटॉक्सिक समापन बिंदुओं की एक बड़ी विविधता का पता लगाने के लिए विभिन्न मछली सेल लाइनों की एक किस्म को सफलतापूर्वक पेश किया गया है।कॉमेट परिक्षण में सबसे अधिक उपयोग की जाने वाली कोशिका रेखाएँआर टी जी-2, आर टीगिल -डब्लू1 और आर टीएल - डब्लू 1 हैं जो रेनबो ट्राउट (ओंकोरहिनचस मैकिस) से स्थापित की गई हैं, और जेड एफ एल और जेड एफ 4 ज़ेब्राफिश (डैनियो रेरियो) से बनाई गई हैं।

कई मछलियों (मीठे पानी और समुद्री पानी) का उपयोग पहले ही कॉमेट परिक्षण के द्वारा पर्यावरण मे बायोमोनिटरिंग अध्यन के लिए किया जा चुका है । असंख्य प्रदूषित इसचुरी औरतटीय खाड़ियों में जीनोटॉक्सिक प्रदूषकों जैसे कीपॉलीसाइक्लिक एरोमैटिकहाइड्रोकार्बन, शाकनाशी और धातुएँ की उच्च मात्रा होती है। विशेष रूप से, मुहाने मे लगातार औद्योगिक या नगरपालिका अपशिष्ट धाराओं से जीनोटॉक्सिक प्रदूषकों मि मात्रा बढ़ती रहती है । ऐसे जगह पर कॉमेट परिक्षण एक उपयुक्त पद्धत है जो समुद्री और मीठे पानी की मछलियों में होनेवाले डीएनए को नुकसान दिखायेगा ।उदहारण के लिए, दक्षिणी ब्राज़ील में, औद्योगिक कचरे और असंसाधित नगरपालिका कचरे ने सिनोस नदी को प्रदूषित कर दिया।बायोमार्कर मूल्यांकन यह एक पर्यावरणीय जोखिम का उत्तम संकेत है । वह पर कॉमेट परीक्षण का उपयोग करके विभिन्न प्रदूषणों के कारण होने वाली जीनोटॉक्सिसिटी का पता लगाने के लिए उपयोह किया गया ।

कॉमेट परीक्षण के सीमाएं, और डीएनए क्षति के लिए अन्य परीक्षण के साथ तुलना

एन्यूजेनिक प्रभाव यह एक कॉमेट परिक्षण परिसीमन है। एन्यूजेनिक यह कैंसरजन्य के लिए एक संभावित तंत्र हो सकता हैं, और डीएनए क्षति केलिए एपिजेनेटिक तंत्र (अप्रत्यक्ष रूप से), जैसेकोशिका चक्र के लिए भी हो सकता है। कॉमेट परिक्षण के नुकसान मै एकल-सेल डेटा (जो दर को सीमित कर सकता है), छोटे सेल नमूने (परिणामस्वरूप नमूना पूर्वाग्रह), तकनीकी परिवर्तनशीलता का समावेश होता है । हालाँकि, इसके फायदे इसके नुकसान से कहीं अधिक हैं, यही कारण है कि आणविक महामारी विज्ञान से लेकर आनुवंशिक विज्ञान तक के क्षेत्रों में इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

कॉमेट परिक्षण के परिणाम इसकी संवेदनशीलता, विभिन्न प्रयोगशालाओं की परिस्थितियों में मामूली बदलाव और मानव अनुसंधान (आयु, आहार, अंतर-व्यक्तिगत, जीवन शैली और मौसमी भिन्नता) में भ्रमित करने वाले चर के प्रभाव के कारण व्यापक रूप से भिन्न हो सकती हैं। संभावित समूह अध्ययनों की कमी मानव बायोमोनिटोरिंग में इसके पूर्वानुमानित मूल्य को निर्धारित करने के लिए कॉमेट परिक्षण के अनुप्रयोग को और बाधित करती है।हालांकि कॉमेट ऐस्से एक प्रभावी तकनीक है, लेकिन यह कुछ सीमाएँ भी हैं।

तालिका 1- जलीय अकशेरुकी जीवों में डीएनए क्षति का कॉमेट परीक्षण मूल्यांकन

	स्थान	फ़ाइलम	जीव	कोशिका	एजेंट
1	सिओलिम, गोवा,भारत	मोल्लुसक	पाफिया मलबरीका मेरेट्रिक्स कास्टा	हिमोलिम्फ	इथाइल मीथेनसल्फोनेट (EMS)
2	चेन्नई शहर,भारत	मोल्लुसक	विरिडिस	गिल	कॉपर लीड जिंक कैडमियम मैंगनीजआयरन
3	अरेबियन समुद्र, भारत	मोल्लुसक	पर्ना विरिडिस	गोनाड	सिगार तम्बाकू
4	पुणे, भारत	एनेलिड	डिचोगैस्टर करगेन्सिस	सिलोमोसाइट्स	क्रोमियम
5	मंडपम,के दक्षिणपूर्वी तट, भारत	कॉर्डेटा	थेरापोन जारबुआ	टेल डीएनए %	मरक्यूरिक क्लोराइड
6	उत्तर प्रदेश,भारत	कॉर्डेटा	चन्ना	% टेल डीएनए गिल और किडनी	एंडोसल्फान

निष्कर्ष

कॉमेट परिक्षण एक प्रभावी और संवेदनशीलतकनीक है, जो जलीय जीवों में डीएनए क्षति का मूल्यांकन करने के लिए उपयोगी है। यह तकनीक पर्यावरणीय प्रदूषण के प्रभावों का अध्ययन करने और जलीय पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिति की निगरानी करने में मदद करती है। जैसे-जैसे जल प्रदूषण और प्रदूषकों का स्तर बढ़ता जा रहा है, कॉमेट परिक्षण का उपयोग जैविक निगरानी और प्रदूषण के प्रभावों को समझने के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण उपकरण बन गया है।यह तकनीक का इस्तेमाल भविष्य में जलीय जीवन के स्वास्थ्य की सुरक्षा और पर्यावरणीय नीति निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है।

महाराष्ट्र का तटीय जल: एक अनूठी विरासत और जैव विविधता का केंद्र

कैशम गीनिता, राजेशकुमार, मुज़म्मिल हक़ और करणकुमार रामटेके

महाराष्ट्र, जो अरब सागर के किनारे 720 किलोमीटर लंबी तटरेखा के साथ स्थित है, समुद्री जीवन, सांस्कृतिक धरोहर और अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण केंद्र है। यह तटरेखा न केवल राज्य के लोगों की आजीविका को संबल देती है, बल्कि समृद्ध जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र का भी घर है। महाराष्ट्र का तटीय क्षेत्र पारंपरिक मछली पकड़ने, आधुनिक बंदरगाहों, समुद्री व्यापार और इको-टूरिज्म जैसी गतिविधियों के लिए प्रसिद्ध है।

महाराष्ट्र के तटीय पारिस्थितिकी तंत्र समुद्री जीवन को सहारा देने के साथ-साथ तटीय कटाव को रोकने, कार्बन भंडारण और मछलियों के प्रजनन क्षेत्र प्रदान करने जैसे महत्वपूर्ण कार्य भी करते हैं। साथ ही, यह क्षेत्र अपने ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व के लिए भी जाना जाता है। हालांकि, अत्यधिक मछली पकड़ने, जलवायु परिवर्तन और शहरीकरण के कारण इस क्षेत्र पर खतरा मंडरा रहा है, जिसे संरक्षित करने की सख्त जरूरत है।

भौगोलिक और पारिस्थितिक महत्व

महाराष्ट्र के तट को तीन मुख्य भागों में बांटा जा सकता है, जिनमें से प्रत्येक का अपना अनूठा भौगोलिक और पारिस्थितिक महत्व है:

1. उत्तरी तट (पालघर और ठाणे):

- यह क्षेत्र मैंग्रोव, मडफ्लैट्स (कीचड़ भरे मैदान) और ज्वारीय खाड़ियों के लिए जाना जाता है।
- **प्राकृतिक रक्षा:** मैंग्रोव तटीय क्षेत्रों को कटाव और तूफानों से बचाते हैं।
- **पोषण क्षेत्र:** उल्हास और वैतरणा जैसी नदियां यहाँ समुद्र में मिलती हैं, जिससे पोषक तत्वों से भरपूर क्षेत्र बनते हैं, जो मछलियों और अन्य समुद्री जीवन के लिए आदर्श आवास हैं।
- **आर्थिक महत्व:** यह क्षेत्र पारंपरिक मछली पकड़ने और शेलफिश (सीप और केकड़े) उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है।

2. मध्य तट (मुंबई और रायगढ़):

मुंबई और रायगढ़ क्षेत्र तटीय जैव विविधता और शहरीकरण का एक अनूठा मिश्रण हैं।

- **मैंग्रोव का संरक्षण:** ठाणे क्रीक में स्थित मैंग्रोव भारत के सबसे संरक्षित मैंग्रोव क्षेत्रों में से हैं।
- **राकृतिक आवास:** जुहू और अलीबाग जैसे समुद्र तट चट्टानी और रेतीले तटों पर स्थित जीवों के लिए अनुकूल हैं।
- **औद्योगिक गतिविधियां:** इस क्षेत्र में मुंबई बंदरगाह और अन्य औद्योगिक इकाइयों के कारण समुद्री व्यापार और रोजगार के अवसर हैं।

3. दक्षिणी तट (रत्नागिरी और सिंधुदुर्ग):

रत्नागिरी और सिंधुदुर्ग तट अपनी प्राकृतिक सुंदरता और इको-टूरिज्म के लिए प्रसिद्ध हैं।

- **प्रवाल भित्तियाँ (कोरल रीफ):** सिंधुदुर्ग क्षेत्र में छोटी प्रवाल भित्तियाँ हैं, जो समुद्री जैव विविधता के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं।
- **इको-टूरिज्म:** यह क्षेत्र स्कूबा डाइविंग और स्नॉर्कलिंग जैसे पर्यावरण-हितैषी पर्यटन के लिए जाना जाता है।
- **समुद्री घास के मैदान:** समुद्री घास के मैदान कई समुद्री जीवों के लिए आवास और भोजन प्रदान करते हैं।

इन क्षेत्रों की भौगोलिक विशेषताएं महाराष्ट्र के तटीय जल को जैव विविधता का एक महत्वपूर्ण केंद्र बनाती हैं। यह न केवल पर्यावरण के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि राज्य की सामाजिक और आर्थिक समृद्धि का भी आधार है।

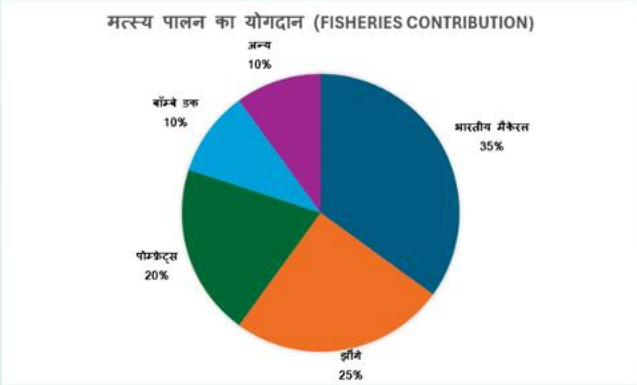

चित्र 1. मत्स्य पालन का योगदान

अद्वितीय जैव विविधता

महाराष्ट्र का तटीय जल अरब सागर के किनारे फैला हुआ है और इसे समुद्री जैव विविधता का एक प्रमुख केंद्र माना जाता है। यहाँ की उष्णकटिबंधीय जलवायु, विविध पारिस्थितिकी प्रणालियाँ और अनूठी भौगोलिक विशेषताएँ समुद्री जीवन को समृद्ध करने वाला एक आदर्श वातावरण प्रदान करती हैं। व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण मछली प्रजातियों से लेकर मैंग्रोव और प्रवाल भित्तियों जैसे पारिस्थितिकीय रूप से अहम आवास तक, यह क्षेत्र समुद्री पारिस्थितिक तंत्र को स्वस्थ बनाए रखने और स्थानीय समुदायों की आजीविका को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

1. मछली विविधता

महाराष्ट्र के तटीय जल में 200 से अधिक मछली प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जो इस क्षेत्र की पारिस्थितिक संपन्नता का प्रतीक हैं। इनमें भारतीय मैकेरल, पोम्फ्रेट्स, बॉम्बे डक और झींगे जैसी व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण प्रजातियाँ शामिल हैं।

- **आर्थिक महत्व:** ये मछलियाँ राज्य की अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख हिस्सा हैं, जो हज़ारों मछुआरों को आजीविका और स्थानीय समुदायों को खाद्य सुरक्षा प्रदान करती हैं।
- **पारिस्थितिक भूमिका:** मछलियाँ समुद्री खाद्य श्रृंखला में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं और पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित बनाए रखने के लिए शिकार और शिकारियों की आबादी को नियंत्रित करती हैं।

• **मौसमी प्रचुरता:** कई मछली प्रजातियों की संख्या मौसमी चक्र, पानी के तापमान और पोषक तत्वों की उपलब्धता पर निर्भर करती है। इन प्रवृत्तियों को समझकर टिकाऊ मछली पकड़ने की रणनीतियाँ बनाई जा सकती हैं।

2. मैंग्रोव

महाराष्ट्र में 200 वर्ग किलोमीटर से अधिक क्षेत्र में मैंग्रोव वन फैले हुए हैं, जो इसे भारत के पश्चिमी तट का एक प्रमुख मैंग्रोव क्षेत्र बनाते हैं। ये नमक-सहिष्णु पौधे विशेष रूप से ठाणे क्रीक, वसई और रत्नागिरी जैसी जगहों के अंतर्ज्वारीय क्षेत्रों में पनपते हैं।

जैव विविधता हॉटस्पॉट:

- मैंग्रोव कई जलीय और स्थलीय जीवों को आश्रय प्रदान करते हैं, जैसे मडस्किपर, केकड़े, मोलस्क और प्रवासी पक्षी जैसे फ्लेमिंगो और बगुले।

पारिस्थितिक योगदान:

- युवा मछलियों के लिए नर्सरी के रूप में कार्य करते हैं, जिससे उन्हें सुरक्षित विकास के लिए आश्रय और भोजन मिलता है।
- तटीय कटाव और तूफानों से प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान करते हैं, जिससे तटीय समुदायों को बचाव मिलता है।
- ये बड़ी मात्रा में कार्बन का पृथक्करण करते हैं, जिससे जलवायु परिवर्तन से निपटने में मदद मिलती है।

खतरे और संरक्षण प्रयास:

शहरीकरण, प्रदूषण, और औद्योगिक गतिविधियों के कारण मैंग्रोव को खतरा है। सख्त कानूनी संरक्षण और वनरोपण जैसे प्रयास इनके संरक्षण के लिए उठाए गए महत्वपूर्ण कदम हैं।

3. प्रवाल भित्तियाँ

महाराष्ट्र के सिंधुदुर्ग क्षेत्र में स्थित प्रवाल भित्तियाँ भारत के पश्चिमी तट पर दुर्लभ और अनमोल प्राकृतिक धरोहरों में से हैं। ये भित्तियाँ समुद्री जैव विविधता का एक अभिन्न हिस्सा हैं, जो कई प्रजातियों को जीवन और आश्रय प्रदान करती हैं।

पारिस्थितिक महत्व:

- ये समुद्री जीवों, जैसे मछलियों, मोलस्क और क्रस्टेशियनों (झींगे और केकड़े) के लिए आवास और प्रजनन स्थल हैं।
- प्राकृतिक ब्रेकवाटर की तरह कार्य करती हैं, जो तटीय कटाव और लहरों के प्रभाव को कम करती हैं।

पर्यटन और जागरूकता:

- सिंधुदुर्ग की प्रवाल भित्तियाँ स्नॉर्कलिंग और स्कूबा डाइविंग जैसी गतिविधियों के लिए इको-पर्यटकों को आकर्षित करती हैं, जिससे स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिलता है।
- जागरूकता अभियान और शैक्षिक पर्यटन रीफ संरक्षण के महत्व को उजागर करते हैं।

खतरे और संरक्षण:

- जलवायु परिवर्तन, अत्यधिक मछली पकड़ने, और प्रदूषण जैसे खतरों से इन भित्तियों का अस्तित्व खतरे में है।
- समुद्री संरक्षित क्षेत्रों (Marine Protected Areas) और प्रवाल बहाली परियोजनाओं के माध्यम से इन्हें संरक्षित करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

4. समुद्री स्तनधारी

महाराष्ट्र के तटीय जल में डॉल्फिन और पोरपॉइज़ जैसे समुद्री स्तनधारी अक्सर दिखाई देते हैं। इनका मुख्य निवास मालवन और रत्नागिरी क्षेत्रों में देखा गया है, जहाँ हिंद महासागर की हम्पबैक डॉल्फिन (Sousa plumbea) अक्सर पाई जाती है।

पारिस्थितिक संकेतक:

- समुद्री स्तनधारियों की उपस्थिति स्वस्थ समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र का संकेत है क्योंकि ये खाद्य श्रृंखला में शीर्ष स्थान पर होती हैं।

पारिस्थितिकी पर्यटन क्षमता:

- डॉल्फिन-स्पॉटिंग टूर पर्यटकों को आकर्षित करते हैं और समुद्री संरक्षण के प्रति जागरूकता बढ़ाने में मदद करते हैं।

चुनौतियाँ और समाधान:

- प्रदूषण, आवास क्षरण, और मछली पकड़ने के जाल में उलझाव इन स्तनधारियों के लिए बड़े खतरे हैं।
- सख्त नियम और स्थानीय समुदायों की भागीदारी से इनके संरक्षण के प्रयास किए जा रहे हैं।

5. अंतरज्वारीय जीवन

महाराष्ट्र के चट्टानी और रेतीले तटों के साथ स्थित अंतरज्वारीय क्षेत्र जीवों से समृद्ध हैं। ये क्षेत्र ज्वार के उतार-चढ़ाव के कारण समय-समय पर हवा और पानी के संपर्क में आते हैं।

मुख्य प्रजातियाँ:

- सीप, क्लैम, और मसल्स जैसे मोलस्क।
- केकड़े और अन्य क्रस्टेशियन, जो पोषक चक्रण में अहम भूमिका निभाते हैं।
- शैवाल और समुद्री शैवाल, जो छोटे समुद्री जीवों को भोजन और आश्रय प्रदान करते हैं।

पारिस्थितिक भूमिका:

- ये जीव समुद्री खाद्य श्रृंखला का आधार बनाते हैं और मछलियों और पक्षियों के लिए प्राथमिक भोजन स्रोत हैं।
- अंतरज्वारीय क्षेत्र पानी की गुणवत्ता बनाए रखने में मदद करते हैं क्योंकि ये तलछट और प्रदूषकों को फँसाते हैं।

खतरे और संरक्षण:

- तटीय विकास और प्रदूषण इन क्षेत्रों को खतरे में डालते हैं।
- संरक्षण उपाय, जैसे नियंत्रित कटाई और आवास पुनर्स्थापन, इन क्षेत्रों को सुरक्षित करने में मदद करते हैं।

सामाजिक और आर्थिक महत्व

महाराष्ट्र के तटीय जल राज्य के विकास में एक अहम भूमिका निभाते हैं। ये न केवल पर्यावरण को संतुलित रखते हैं, बल्कि कई सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों का समर्थन करते हैं।

1. मत्स्य पालन:

मछली पालन तटीय समुदायों की आजीविका का मुख्य आधार है।

- **उत्पादन:** महाराष्ट्र भारत के सबसे बड़े मछली उत्पादक राज्यों में से एक है। भारतीय मैकेरल और झींगे जैसी प्रजातियाँ यहां की मत्स्य अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं।
- **आय:** यह क्षेत्र निर्यात में योगदान देकर विदेशी मुद्रा अर्जित करता है।

2. बंदरगाह और शिपिंग:

महाराष्ट्र के तटीय क्षेत्र में मुंबई पोर्ट ट्रस्ट और जवाहरलाल नेहरू पोर्ट ट्रस्ट जैसे प्रमुख बंदरगाह हैं।

- **व्यापार:** ये बंदरगाह भारत के समुद्री व्यापार का बड़ा हिस्सा संभालते हैं।
- **रोजगार:** ये बंदरगाह औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने के साथ-साथ रोजगार के अवसर भी प्रदान करते हैं।

3. पर्यटन:

महाराष्ट्र के तारकरली, गणपतिपुले, और मुरुद-जंजीरा जैसे समुद्र तट दुनिया भर के पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।

- **इको-टूरिज्म:** सिंधुदुर्ग और रत्नागिरी में स्नॉर्कलिंग, स्कूबा डाइविंग और नाव की सवारी जैसी गतिविधियाँ स्थानीय समुदायों को आर्थिक लाभ देती हैं।

4. पारंपरिक ज्ञान:

महाराष्ट्र के तटीय समुदायों के पास संसाधनों को टिकाऊ तरीके से प्रबंधित करने और मछली पकड़ने की समृद्ध परंपरा है।

- **स्थिरता:** पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक तकनीकों का मेल लंबी अवधि की पारिस्थितिक और आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित कर सकता है।

चुनौतियाँ और संरक्षण प्रयास

महाराष्ट्र के तटीय जल अपनी समृद्धता के बावजूद कई चुनौतियों का सामना कर रहे हैं।

1. चुनौतियाँ:

- अत्यधिक मछली पकड़ना: प्रजनन के मौसम में अत्यधिक मछली पकड़ने से मछली के भंडार घटते हैं और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र को नुकसान पहुँचता है।
- **प्रदूषण:** औद्योगिक कचरा, शहरी सीवेज, और प्लास्टिक कचरे से जल की गुणवत्ता खराब होती है और समुद्री जीवन प्रभावित होता है।
- **आवास विनाश:** तटीय विकास और पुनर्ग्रहण परियोजनाओं से मैंग्रोव और प्रवाल भित्तियाँ खतरे में हैं।
- **जलवायु परिवर्तन:** समुद्र स्तर में वृद्धि और तापमान में बदलाव से मछलियों के प्रवास और जैव विविधता पर असर पड़ता है।

2. संरक्षण प्रयास:

- **समुद्री संरक्षित क्षेत्र:** सिंधुदुर्ग को समुद्री अभयारण्य के रूप में घोषित किया गया है, जो प्रवाल संरक्षण और टिकाऊ पर्यटन पर ध्यान केंद्रित करता है।
- **मैंग्रोव संरक्षण:** सख्त कानूनी प्रावधानों के तहत मैंग्रोव का संरक्षण किया जा रहा है।
- **प्रदूषण नियंत्रण:** प्लास्टिक कचरे को कम करने और औद्योगिक कचरे के उपचार के लिए अभियान चलाए जा रहे हैं।
- **सामुदायिक जुड़ाव:** स्थानीय समुदायों को संरक्षण कार्यक्रमों में शामिल किया जा रहा है, जिससे लोगों और पारिस्थितिकी तंत्र दोनों को लाभ हो।

निष्कर्ष

महाराष्ट्र के तटीय जल में जैव विविधता, आर्थिक गतिविधियों और सांस्कृतिक धरोहर का अनूठा संगम देखने को मिलता है। हालाँकि, इस क्षेत्र को अत्यधिक मछली पकड़ने, प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। लेकिन संरक्षण प्रयास, तकनीकी उन्नति, और सामुदायिक भागीदारी से एक टिकाऊ भविष्य की उम्मीद की जा सकती है। इन तटीय जल को संरक्षित करना न केवल पर्यावरण की दृष्टि से बल्कि आजीविका, खाद्य सुरक्षा और सांस्कृतिक धरोहर को बनाए रखने के लिए भी आवश्यक है।

*

किसान क्रेडिट कार्ड: मत्स्यपालन और जलीय कृषि क्षेत्र में वित्तीय सशक्तिकरण की पहल

अक्षता थवई, शिवाजी अरगडे एवं आर. परमशिवम

परिचय

भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा मत्स्य उत्पादन करने वाला देश है, जो वैश्विक मत्स्य उत्पादन का लगभग 9.64% योगदान देता है। यह क्षेत्र लगभग 2.04% राष्ट्रीय जनसंख्या के लिए आजीविका का साधन है, जिसमें लगभग 2.8 करोड़ लोग सम्मिलित हैं, जिनमें मछुआरे और मत्स्य पालक शामिल हैं। कृषि क्षेत्र की तरह मत्स्य क्षेत्र की उत्पादकता और उत्पादन में सुधार हेतु संरचित ऋण व्यवस्था की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) योजना की शुरुआत नाबार्ड द्वारा वर्ष 1998 में की गई थी ताकि किसानों को कृषि गतिविधियों के लिए ऋण प्रदान किया जा सके। इस योजना का उद्देश्य किसानों को एकल खिड़की के माध्यम से पर्याप्त और समय पर ऋण सुविधा प्रदान करना है, जिसमें प्रक्रियाएँ सरल और लचीली हों। वर्ष 2018-19 में भारत सरकार ने इस योजना को मत्स्य पालन और जलीय कृषि क्षेत्र तक विस्तारित किया, जिससे कार्यशील पूंजी की आवश्यकता को पूरा करने हेतु मछुआरों और मत्स्य पालकों को समय पर ऋण सहायता प्रदान की जा सके। 'घर-घर केसीसी अभियान' के तहत इस योजना को व्यापक रूप से लागू किया गया। मत्स्य पालन विभाग, भारत सरकार द्वारा जारी रिपोर्ट के अनुसार 29 जुलाई 2025 तक, मत्स्य क्षेत्र में कुल 4,76,237 सक्रिय केसीसी खाते हैं, जिनके अंतर्गत ₹3214.32 करोड़ की राशि स्वीकृत की गई है। यह आँकड़े इस बात को दर्शाते हैं कि मछुआरे और मत्स्य पालक केसीसी को तेजी से अपना रहे हैं।

केसीसी मछुआरों/मत्स्यपालकों की किस प्रकार मदद करता है?

- ₹5 लाख तक का अल्पकालीन ऋण उपलब्ध (₹2 लाख तक गारंटी मुक्त) 7% वार्षिक ब्याज दर पर।
  समय पर ऋण चुकता करने वालों को 3% की त्वरित
- पुनर्भुगतान प्रोत्साहन दी जाती है, जिससे प्रभावी ब्याज दर 4% हो जाती है।
- मत्स्य पालन, जलीय कृषि और उत्तर-फसल लागतों के लिए वित्तीय सहायता।
  मछली बिक्री तक की वित्तीय आवश्यकता की पूर्ति करता है।
- घरेलू खर्चों के लिए समर्थन प्रदान करता है, जिससे अनौपचारिक ऋण पर निर्भरता कम होती है।
- आवश्यक उपकरणों और संरचनाओं के रखरखाव में सहायक।

केसीसी की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं?

- एटीएम-सक्षम रुपे कार्ड प्रदान किया जाता है।
- केवल एक बार दस्तावेज़ीकरण की आवश्यकता।
- प्रोडक्शन क्रेडिट के अंतर्गत कार्यशील पूंजी के लिए सहायता - जैसे मत्स्य पालन, मार्केटिंग, घरेलू उपयोग, उपकरणों का रखरखाव आदि।
- निवेश ऋण के अंतर्गत दीर्घकालिक निवेश हेतु - जैसे नौका निर्माण, उपकरण क्रय, संरचना विकास आदि।केसीसी के लिए कौन और क्या पात्र हैं?
- व्यक्ति, समूह, साझेदार, पट्टेदार, महिला समूह, स्वयं सहायता समूह, मत्स्य सहकारी समितियाँ, संयुक्त देनदारी समूह आदि पात्र लाभार्थी हैं। आयु 18 वर्ष से ऊपर होनी चाहिए। 60 वर्ष से अधिक एवं 75 वर्ष तक के आवेदकों को 60 वर्ष से कम आयु का सह- उधारकर्ता आवश्यक है। लाभार्थियों के पास तालाब, जलाशय, मत्स्य पालन नौका, जाल, उपकरण, हैचरी आदि संपत्तियाँ होनी चाहिए या लीज पर ली गई होनी चाहिए।

केसीसी प्राप्त करने के लिए कौन से दस्तावेज़ आवश्यक हैं?

- पूर्ण रूप से भरा हुआ आवेदन पत्र
- स्वप्रमाणित पहचान प्रमाण – जैसे आधार, पैन, ड्राइविंग लाइसेंस, मतदाता पहचान पत्र आदि
- निवास प्रमाण – जैसे बिजली बिल, पानी बिल, पंचायत प्रमाण पत्र आदि (2 माह से पुराना नहीं)
- पासपोर्ट आकार के दो हालिया फोटो
- ₹3-5 लाख ऋण सीमा के लिए बंधक दस्तावेज (यदि लागू हो)
- भूमि अभिलेख – 7/12 और 8-अ एक्सट्रैक्ट (यदि लागू हो)
- सरकार द्वारा जारी मत्स्य पालन या जलीय कृषि करने की अनुमति/पंजीयन प्रमाण पत्र (यदि लागू हो)

केसीसी कैसे प्राप्त करें?

- ऑफलाइन/ऑनलाइन नजदीकी बैंक शाखा जाएं (जैसे सार्वजनिक/निजी/ग्रामीण/सहकारी बैंक)
- केसीसी फॉर्म प्राप्त कर भरें
- आवश्यक दस्तावेजों के साथ फॉर्म जमा करें
- बैंक/मत्स्य विभाग आवेदन सत्यापित कर 3-4 कार्य दिवस में स्थिति से अवगत कराता है
- स्वीकृति के बाद 15-20 कार्य दिवसों में केसीसी कार्ड डाक से प्राप्त होता है
- निकासी सीमा के साथ किस प्रकार के कार्ड जारी किए जाते हैं?
- बायोमेट्रिक स्मार्ट कार्ड/डेबिट कार्ड (RuPay) जारी किए जाते हैं। आधार प्रमाणीकरण पर आधारित बायोमेट्रिक सत्यापन भी किया जा सकता है। दैनिक एटीएम/पीओएस सीमा बैंक पर निर्भर करती है, जो ₹10,000 से ₹40,000 तक होती है। उदाहरण: एसबीआई रुपे किसान डेबिट कार्ड से ₹15,000 तक एटीएम निकासी और ₹75,000 तक पीओएस सीमा उपलब्ध है।

केसीसी के माध्यम से प्राप्त ऋण का भुगतान कब और कैसे करें?

- ऋण चुकाने की अवधि मछली पकड़ना एवं विपणन समय के अनुसार बैंक तय करता है। टर्म लोन सामान्यतः 5 वर्षों में चुकता किया जाना होता है, किंतु निवेश की प्रकृति के अनुसार यह अवधि बढ़ भी सकती है।

निष्कर्ष

लघु मत्स्य किसानों एवं मछुआरों के लिए किसान क्रेडिट कार्ड एक सशक्त वित्तीय साधन बनकर उभरा है, जो उन्हें संस्थागत ऋण व्यवस्था से जोड़ता है और उनके सामाजिक-आर्थिक जीवन को सशक्त करता है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना में कार्यशील पूंजी और दीर्घकालिक निवेश के लिए नकद ऋण और टर्म लोन दोनों शामिल हैं, जो रुपे-सक्षम डेबिट कार्ड के माध्यम से प्रदान किए जाते हैं। इस योजना में दस्तावेज़ीकरण सरल है और ऋण चुकाने की समय-सीमा मछली पालन की फसल चक्र के अनुसार लचीली होती है, जिससे यह योजना अत्यंत सुलभ बनती है। किसान क्रेडिट कार्ड मत्स्यपालन और जलीय कृषि क्षेत्र के लिए एक परिवर्तनकारी योजना है, जो वित्तीय स्थिरता प्रदान करती है, असंगठित ऋण स्रोतों पर निर्भरता को कम करती है और समावेशी विकास को बढ़ावा देती है। यदि प्रभावी ढंग से लागू की जाए, तो यह योजना भारत में सतत मत्स्य एवं जलकृषि विकास की आधारशिला बन सकती है।

लेखक नबार्ड और मत्स्य पालन विभाग, भारत सरकार की वेबसाइटों से प्राप्त जानकारी के लिए आभार व्यक्त करते हैं।

*

6पीपीडी-वाहन टायर के घटक: जलीय कृषि और मत्स्य पालन के लिए बढ़ता खतरा

साहिना अख्तर और करणकुमार रामटेके

परिचय

जलीय कृषि और मत्स्य पालन न केवल वैश्विक खाद्य सुरक्षा का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, बल्कि लाखों लोगों के लिए आजीविका का भी प्रमुख स्रोत हैं। हालाँकि, प्रदूषण और नए हानिकारक रसायनों के कारण इन क्षेत्रों को लगातार खतरों का सामना करना पड़ रहा है। इनमें से एक नया और खतरनाक प्रदूषक 6पीपीडी-क्विनोन है, जो वाहन टायर में इस्तेमाल होने वाले रसायन 6पीपीडी से बनता है। यह जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के लिए बेहद हानिकारक है और इसके प्रभावों को लेकर गहरी चिंताएँ उठ रही हैं।

6पीपीडी-क्विनोन क्या है?

6पीपीडी एक रसायन है जो वाहन के टायर को सूरज की किरणों और ओजोन से होने वाले नुकसान से बचाने के लिए उपयोग किया जाता है। जब टायर सड़कों पर घिसते हैं, तो 6पीपीडी जैसे रसायन छोटे कणों के रूप में छूटते हैं। बारिश के कारण ये कण नदियों और अन्य जल निकायों में पहुँचते हैं, जहाँ 6पीपीडी ओजोन के साथ प्रतिक्रिया करके 6 पीपीडी-क्विनोनमें बदल जाता है। यह रसायन बेहद जहरीला है और जलीय जीवों, विशेषकर मछलियों और अन्य समुद्री प्रजातियों के लिए गंभीर खतरा पैदा करता है।

जलीय कृषि और मत्स्य पालन के लिए खतरे

1. जलीय जीवन पर विषाक्त प्रभाव:

- **मृत्यु दर:** 6पीपीडी-क्विनोन के संपर्क में आने से मछलियों, विशेषकर सैल्मन जैसी प्रजातियों में तेज़ मृत्यु दर देखी गई है।
- **प्रजनन पर प्रभाव:**इससे मछलियों के प्रजनन और रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी हो सकती है, जिससे उनकी आबादी पर नकारात्मक असर पड़ता है।

2. मछली स्टॉक का नुकसान:

जलीय कृषि और मत्स्य पालन में पाए जाने वाले मछली स्टॉक में 6पीपीडी-क्विनोन के कारण कमी आ सकती है, जो क्षेत्रीय खाद्य सुरक्षा और निर्यात को प्रभावित करता है।

3. आर्थिक प्रभाव:

- **जलीय कृषि पर असर:** फार्म में मछलियों की मृत्यु दर बढ़ जाती है, जिससे उत्पादन लागत और प्रबंधन खर्च में वृद्धि होती है।
- **मत्स्य पालन पर असर:**मछली की कम उपलब्धता से तटीय समुदायों की आजीविका और व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

4. पारिस्थितिक असंतुलन:

यह रसायन समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के खाद्य जाल को बाधित करता है और जैव विविधता को नुकसान पहुँचाता है।

मुख्य स्रोत और फैलाव

1. शहरी अपवाह:

बारिश के पानी के साथ सड़कों से टायर कण बहकर नदियों और समुद्र में पहुँचते हैं।

2. औद्योगिक उत्सर्जन:

टायर निर्माण और निपटान से संबंधित उद्योग भी 6PPD-क्विनोन फैलाव में योगदान देते हैं।

3. तूफानी जल प्रवाह:

अपर्याप्त जल शोधन प्रणाली भी इस रसायन को जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में पहुँचाने का एक बड़ा कारण है।

संरक्षण प्रयास और समाधान

1. बेहतर जल प्रबंधन:

जल निकायों में टायर कणों और रसायनों के प्रवाह को रोकने के लिए उन्नत निस्पंदन प्रणाली का उपयोग।

2. इको-फ्रेंडली टायर विकल्प:

ऐसे टायर एडिटिव्स विकसित करना जो पर्यावरण को नुकसान न पहुँचाएँ।

3. सख्त नियम और निगरानी:

6PPD-क्विनोन के स्तर की नियमित निगरानी और इससे जुड़े उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए कड़े कानून लागू करना।

4. शोध और जागरूकता:

स्थानीय समुदायों और नीति निर्माताओं को इस रसायन के खतरों और रोकथाम के तरीकों के बारे में शिक्षित करना।

5. जलीय कृषि में सुधार:

जल शोधन तकनीकों को अपनाकर जलीय कृषि में 6PPD-क्विनोन के प्रभाव को कम करना।

निष्कर्ष

6PPD-क्विनोन जलीय कृषि और मत्स्य पालन के लिए एक गंभीर चुनौती है। इसके नकारात्मक प्रभावों को कम करने के लिए तकनीकी नवाचार, कड़े नियम, और सामुदायिक भागीदारी की आवश्यकता है। इस बढ़ते खतरे का समाधान समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य और उन लाखों लोगों की आजीविका के लिए महत्वपूर्ण है जो महासागरों पर निर्भर हैं।

*

डोलजाल : मछली पकड़ने की परंपरा और चुनौतियाँ

राजेश कुमार, करणकुमार रामटेके, अबुथागीर इबुराहीम, भारती साहू, विपुल सिंह बड़गुजर

प्रस्तावना

डोलजाल एक गैर-चयनात्मक स्थिर बैग जाल है, जिसकी तैनाती परंपरा और चुनौती को एक साथ जोड़ती है। यह प्राचीन तकनीकों, पारिस्थितिक स्थिरता और आर्थिक सहयोग के बीच जटिल संतुलन को उजागर करता है। इसके डिज़ाइन और संचालन में विभिन्नता बांग्लादेश, भारत, इंडोनेशिया, मलेशिया, म्यांमार और थाईलैंड जैसे देशों में देखने को मिलती है।

भारत

अधिक ज्वारीय परिस्थितियों में काम करने की क्षमता के कारण, डोलजाल का उपयोग महाराष्ट्र और गुजरात के तटीय क्षेत्रों में तेज ज्वारीय धाराओं के साथ किया जाता है। उत्तर पश्चिमी तट पर डोलजाल का संचालन एक सदियों पुरानी परंपरा मानी जाती है। यह एक विभिन्न मछली पकड़ने का उपकरण है, जो पानी की सतह के नीचे कुछ गहराई तक मछली पकड़ने में सक्षम होता है।

डोलजाल की संरचना, स्थापना और संचालन

डोलजाल एक लंबा, शंक्वाकार आकार का बैगनुमा जाल होता है, जिसे स्थानीय भाषा में बोक्शी जाल कहा जाता है। इसका मुंह चौड़ा और आयताकार होता है, जबकि अंतिम सिरा संकीर्ण होता है। इस क्षेत्र के समुद्री डोलजाल मछुआरे 12-16 मीटर लंबी लकड़ी की नावों का उपयोग करते हैं, जिनमें 40-100 एचपी के डीजल इंजन लगे होते हैं। आमतौर पर, जाल की लंबाई 45 से 60 मीटर के बीच होती है। इस जाल के तीन मुख्य हिस्से होते हैं: मुंह, पेट और अंतिम सिरा। मुंह से अंतिम सिरे तक जाल का आकार 60 मिमी से 10 मिमी तक घटता है। हर खंड को बद्धी के आयताकार टुकड़ों को जोड़कर बनाया जाता है। मुंह से अंतिम सिरे तक जाल में बद्धी के 14 आयताकार टुकड़े होते हैं, जिन्हें जाल की सुतली से लेसिंग प्रक्रिया द्वारा एक के बाद एक जोड़ा जाता है।

पूरे वर्ष अलग-अलग प्रकार की मछलियों को प्रभावी ढंग से पकड़ने के लिए जाल के आकार और संचालन की गहराई में मौसम के अनुसार बदलाव किया जाता है। महाराष्ट्र में डोलजाल अलग-अलग अंतिम सिरे के मेश आकार के साथ संचालित होते हैं। पकड़ के कम महीनों (जनवरी-मार्च) में मछुआरे छोटे अंतिम सिरा जाल (10-12 मिमी) का इस्तेमाल करते हैं ताकि एसिटेस इंडिकस, जो इस अवधि में प्रचुर मात्रा में होता है, को पकड़ा जा सके।

डोलजाल की स्थापना और संचालन की तकनीकें बेहद जटिल हैं। पारंपरिक मछुआरों ने लहरों, ज्वार और समुद्री धाराओं जैसी प्राकृतिक शक्तियों के बारे में अपने पारंपरिक ज्ञान का इस्तेमाल करते हुए इन तकनीकों को समय के साथ बेहतर किया है। पहले, डोलजाल का संचालन समुद्र में खुंटों से बंधी रस्सियों की मदद से किया जाता था, जो स्थिर स्टेशनों की तरह काम करते थे। जाल को इस तरह से स्थापित किया जाता था कि वह पहले ज्वार का सामना कर सके और ज्वार बदलने से पहले उसे वापस खींचा जा सके।

डोलजाल का उपयोग मुख्य रूप से उथले तटीय जल, मुहानों, खाड़ियों और अन्य ज्वारीय क्षेत्रों में किया जाता है। ये क्षेत्र समुद्री जीवों के लिए प्रजनन और नर्सरी स्थल के रूप में महत्वपूर्ण हैं। इसके अलावा, ज्वारनदमुख (एस्चुअरी) क्षेत्रों का विशेष महत्व है क्योंकि कई समुद्री मछलियों के जीवन चक्र में इनका एक महत्वपूर्ण चरण होता है। हालांकि, डोलजाल की गैर-चयनात्मक और स्थान-विशिष्ट प्रकृति के कारण मछलियों के किशोर (छोटे) रूप को भी अंधाधुंध पकड़ा जाता है, जिससे टिकाऊ मत्स्य प्रबंधन के सामने एक बड़ी चुनौती उत्पन्न होती है।

प्रजाति संरचना

1949 में, स्थिरना ने डोलजाल के संचालन का वैज्ञानिक विवरण प्रस्तुत किया और इसे एक सरल मछली पकड़ने की विधि बताया। इसमें मुख्य रूप से उन मछलियों को पकड़ा जाता है, जो धारा के साथ बहकर जाल में फंस जाती हैं क्योंकि वे धारा का मुकाबला करने के लिए पर्याप्त तेज़ नहीं तैर पातीं। डोलजाल से पकड़ी जाने वाली प्रमुख मछलियों में बॉम्बे डक, क्लुपीड्स, एलास्मोब्रांच, कैटफ़िश, क्रोकर्स, ईल, रिबनफ़िश, थ्रेडफ़िन्स, पोम्फ्रेट्स, फ़्लैटफ़िश, पेनाइड झींगा, नॉन-पेनाइड झींगा और लॉबस्टर शामिल हैं।

तस्वीर 1:-डोल जाली एवं उसकासंचालन

महाराष्ट्र में डोलजाल की भूमिका

महाराष्ट्र भारत के प्रमुख समुद्री राज्यों में से एक है, जिसकी तटरेखा 720 किमी लंबी है और महाद्वीपीय शेल्फ क्षेत्र 111,512 वर्ग किमी में फैला हुआ है। इस राज्य में 6 प्रमुख समुद्री जिले हैं: पालघर, ठाणे, ग्रेटर मुंबई, रायगढ़, रत्नागिरी और सिंधुदुर्ग, जहां से मछली पकड़ने वाले जहाज संचालित होते हैं। महाराष्ट्र में कुल 15,520 मछली पकड़ने वाले नौका पंजीकृत हैं, जिनमें से 5,867 मशीनीकृत, 6,788 मोटर चालित, और 2,865 गैर-मोटर चालित हैं। मशीनीकृत नौका में प्रमुख नौका ट्रॉलर (58%), डोलजाल (28%), गलफड़ाजाल (10%), और पर्स घेराव जाल (4%) हैं।

महाराष्ट्र में डोलजाल मछली पकड़ने का संचालन सहकारी समितियों द्वारा अच्छी तरह से व्यवस्थित है और इसने बड़े पैमाने पर मशीनीकरण और मोटरीकरण का अनुभव किया है। इसके कारण, राज्य में मशीनीकृत और मोटर चालित मछली पकड़ने का क्षेत्र

प्रमुख मछली लैंडिंग में महत्वपूर्ण योगदान देता है, जबकि गैर-मशीनीकृत पारंपरिक मछली पकड़ने का योगदान अपेक्षाकृत कम है। महाराष्ट्र डोलजाल मछली पकड़ने के लिए एक महत्वपूर्ण केंद्र है, जो राज्य में दूसरे सबसे अधिक राजस्व उत्पन्न करने वाले गियर के रूप में जाना जाता है।

2021 में, महाराष्ट्र में कुल समुद्री मछली लैंडिंग लगभग 1.23 लाख टन थी, जो पिछले वर्ष (1.4 लाख टन) से 12% कम थी। ट्रॉलरों ने सबसे अधिक योगदान दिया (36,872 टन), इसके बाद घेराव जाल (32,485 टन), डोलजाल (25,910 टन) और गलफड़ा जाल (23,233 टन) का योगदान रहा। गैर-मशीनीकृत नौका का कुल पकड़ में 3% योगदान था। ट्रॉलर मछली पकड़ने का हिस्सा 30%, डोलजाल 21%, घेराव जाल 26% और गलफड़ा जाल 19% था।

मछली पकड़ने का मौसम सितंबर के दूसरे पखवाड़े से शुरु होता है और मई के अंत तक चलता है। अक्टूबर से जनवरी और मार्च से अप्रैल के दौरान मछली पकड़ने की चरम अवधि होती है। लैंडिंग में मौसमी उतार-चढ़ाव होता है और जैसे-जैसे मौसम आगे बढ़ता है, प्रति ढोना पकड़ कम हो जाती है, लेकिन मार्च के बाद फिर से बढ़ जाती है। जाल की प्रभावशीलता चंद्र चक्र से प्रभावित होती है, क्योंकि ज्वारीय धाराएं अमावस्या और पूर्णिमा के समय अधिक सक्रिय होती हैं, जिसे वसंत ज्वार (उधन) कहा जाता है। बैग जाल मछली पकड़ने की अवधि प्रति माह केवल 16-20 दिनों की होती है, क्योंकि लघु ज्वार (भांग) के दौरान मछली पकड़ने का काम निलंबित रहता है। जाल को संचालित करने की तकनीक काफी जटिल है और पारंपरिक मछुआरों ने अपने अनुभव और प्राकृतिक शक्तियों के ज्ञान का उपयोग करते हुए इन तकनीकों को समय के साथ बेहतर बनाया है। आमतौर पर, बैग जाल आर्थिक रूप से वंचित तटीय समुदायों द्वारा संचालित किए जाते हैं, और किशोर मछली पकड़ना उनकी आजीविका का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। हालांकि, डोलजाल मछली पकड़ने की गैर-चयनात्मक प्रकृति दीर्घकालिक पर्यावरणीय नुकसान का जोखिम पैदा करती है, जो अल्पकालिक आर्थिक लाभों से अधिक हो सकता है।

तस्वीर 2: डोल जाली पकड़

किशोर मछली पकड़

खुले समुद्री मत्स्य पालन में, कम उम्र की मछलियों का बायकैच के रूप में पकड़ा जाना एक गंभीर समस्या है, क्योंकि इससे भविष्य में मछली उत्पादन में कमी आती है और मछली भंडार की पुनःपूर्ति बाधित होती है। यह समस्या विशेष रूप से भारत में ज्यादा दिखाई देती है, जहां बहु-गियर और बहु-प्रजाति मत्स्य पालन प्रचलित है, जिससे क्षेत्रीय और आपसी संघर्ष उत्पन्न होते हैं। भारत में समुद्री मत्स्य पालन न केवल देश की आर्थिक वृद्धि का महत्वपूर्ण हिस्सा है, बल्कि तटीय समुदायों के लिए आजीविका का भी एक मुख्य स्रोत है।

हालांकि तटीय मत्स्य पालन के भीतर तकनीकी प्रगति से मछली पकड़ने की मात्रा में वृद्धि हुई है, परंतु इससे कम उम्र की मछलियों के अनजाने में पकड़े जाने की समस्या और अधिक बढ़ गई है। जाल का आकार सीधे पकड़ी गई प्रजातियों पर प्रभाव डालता है, जिसमें कम उम्र की मछलियाँ भी शामिल हैं। हालांकि छोटे जाल का उपयोग अधिक मछली पकड़ने का एक आसान तरीका लग सकता है, परंतु इसका दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव होता है। युवा मछलियों के आकस्मिक शिकार ने टिकाऊ मत्स्य प्रबंधन को लेकर गंभीर चिंताएं उत्पन्न की हैं, क्योंकि ये मछलियाँ भविष्य में मछली भंडार और उनके आर्थिक मूल्य में महत्वपूर्ण योगदान कर सकती हैं।यह गंभीर स्थिति खतरे की घंटी बजाती है जो मत्स्य संसाधनों के सतत उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए उचित रूप से डिजाइन किए गए जाल के संचालन की आवश्यकता पर प्रकाश डालती है।

*

बिहार में मखाना की खेती: स्वास्थ्य और समृद्धि का अटूट सेतु

रवि शंकर कुमार, सबा नबी, तेंजी पेम भूटिया

परिचय

बिहार के उत्तरी मैदानों में फैले जलाशयों की शांत जलराशि पर सुबह की पहली किरणों के साथ जब मखाने के हरे-भरे पत्ते झिलमिलाने लगते हैं, तो लगता है मानो प्रकृति ने स्वयं इस क्षेत्र को आशीर्वाद दिया हो। मिथिला की इस हरित-नीली थाली में पलने वाला मखाना सदियों से न केवल यहाँ के किसानों की आजीविका का स्रोत रहा है, बल्कि स्थानीय संस्कृति और परंपराओं का अभिन्न अंग भी बना हुआ है। विवाह समारोहों में मांगलिक प्रसाद से लेकर व्रत-उपवास के विशेष आहार तक, मखाना बिहार के सामाजिक ताने-बाने में गहराई से बुना हुआ है।

बिहार के जलवायु और भौगोलिक परिस्थितियाँ मखाना की खेती के लिए आदर्श हैं। राज्य के उत्तरी भाग में स्थित मधुबनी, दरभंगा और सहरसा जिलों के तालाब और जलाशय मखाने के प्राकृतिक आवास हैं। विशेष रूप से कोसी और गंडक नदी के मैदानी इलाकों में जलभराव की स्थिति में जहाँ अन्य फसलें नष्ट हो जाती हैं, वहीं मखाना पानी में तैरता रहता है और बाढ़ के बाद भी अच्छी उपज देता है। यह विशेषता इसे बिहार के किसानों के लिए विपरीत परिस्थितियों में भी आय का विश्वसनीय स्रोत बनाती है।

मखाना पोषक तत्वों से भरपूर एक अद्वितीय खाद्य पदार्थ है। यह ग्लूटेन मुक्त, उच्च प्रोटीनयुक्त और न्यूनतम कैलोरी वाला उत्पाद है जो मधुमेह रोगियों और स्वास्थ्य प्रेमियों के लिए आदर्श स्नैक है। इसमें मौजूद एंटी-ऑक्सीडेंट गुण शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं। आयुर्वेद में इसका उपयोग कई बीमारियों के इलाज में किया जाता रहा है। बिहार का मखाना अब अमेरिका, यूरोप और मध्य पूर्व के देशों में निर्यात किया जा रहा है, जिससे राज्य के किसानों को अंतर्राष्ट्रीय बाजार से सीधा लाभ मिल रहा है। बिहार सरकार ने मखाना को 'वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट' योजना में शामिल कर इसके उत्पादन को बढ़ावा दिया है। मधुबनी जिले को विशेष मखाना हब के रूप में विकसित किया जा रहा है।

चित्र-1: मखाना की खेती 2

चित्र-2: मखाना प्रसंस्करण

राज्य सरकार की 'मखाना मिशन' योजना के तहत

- किसानों को गुणवत्तापूर्ण बीज उपलब्ध कराया जा रहा हैआधुनिक खेती के तरीकों का प्रशिक्षण दिया जा रहा है
- बाजार संपर्क स्थापित करने में मदद की जा रही है
- प्रसंस्करण इकाइयों को सब्सिडी प्रदान की जा रही है

आर्थिक क्रांति के संकेत

मखाना प्रसंस्करण उद्योग के विकास से बिहार में रोजगार के नए अवसर सृजित हो रहे हैं। मखाना पॉपिंग यूनिट्स, पैकेजिंग इकाइयों और मूल्यवर्धित उत्पाद निर्माण से स्थानीय युवाओं को रोजगार मिल रहा है। किसान उत्पादक संगठन (FPO) मॉडल के माध्यम से छोटे किसान भी बड़े बाजारों से सीधा जुड़ाव स्थापित कर पा रहे हैं। एक अनुमान के अनुसार, मखाना की खेती से जुड़े उद्योगों ने पिछले पाँच वर्षों में 50,000 से अधिक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रोजगार सृजित किए हैं।

चुनौतियाँ एवं समाधान: बिहार के मखाना क्षेत्र के विकास में अवरोधक तथा संभावित उपाय

बिहार का मखाना उत्पादन क्षेत्र अपार संभावनाओं से भरपूर है, किंतु निम्नलिखित प्रमुख चुनौतियों के कारण इसके विकास में बाधा उत्पन्न हो रही है:

1. पारंपरिक प्रसंस्करण पद्धतियाँ – वर्तमान में मखाना प्रसंस्करण के लिए पारंपरिक तरीकों का उपयोग किया जाता है, जो अत्यधिक समय एवं श्रम-गहन होने के कारण उत्पादकता को सीमित करते हैं।

2. किसानों को असंतोषजनक मूल्य प्राप्ति – मध्यस्थों एवं बिचौलियों की लंबी श्रृंखला के कारण किसानों को उनकी उपज का उचित बाजार मूल्य नहीं मिल पाता।

3. उन्नत बीजों की अनुपलब्धता – उच्च उत्पादकता वाली एवं रोग-प्रतिरोधी बीजों की कमी के कारण मखाना उत्पादन अपनी पूर्ण क्षमता तक नहीं पहुँच पा रहा है।

4. अपर्याप्त भंडारण एवं पैकेजिंग सुविधाएँ – उचित कोल्ड स्टोरेज एवं आधुनिक पैकेजिंग व्यवस्था के अभाव में मखाना उत्पादों की गुणवत्ता एवं शेल्फ लाइफ प्रभावित होती है।

इन चुनौतियों के समाधान हेतु संभावित उपाय

1. उन्नत बीज प्रौद्योगिकी को बढ़ावा – कृषि अनुसंधान संस्थानों के सहयोग से उच्च उपज देने वाली, जलवायु-अनुकूल बीज किस्मों का विकास एवं किसानों तक इनकी पहुँच सुनिश्चित करना।

2. मशीनीकृत प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना – आधुनिक मशीनों द्वारा प्रसंस्करण को तीव्र एवं कुशल बनाने हेतु सरकारी एवं निजी क्षेत्र की साझेदारी को प्रोत्साहित करना।

3. किसान-बाजार सीधा संपर्क – ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म, किसान उत्पादक संगठनों (FPOs) तथा सरकारी खरीद योजनाओं के माध्यम से किसानों को बाजार से सीधा जोड़कर मध्यस्थों पर निर्भरता कम करना।

4. मखाना-आधारित उद्योगों को प्रोत्साहन – मखाना से बने उत्पादों (जैसे पॉप्स, आटा, दूध आदि) के लिए स्टार्टअप्स एवं एमएसएमई को वित्तीय सहायता एवं तकनीकी ज्ञान उपलब्ध कराना।

5. गुणवत्ता प्रमाणन एवं ब्रांडिंग – अंतरष्ट्रीय मानकों के अनुरूप गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशालाओं की स्थापना तथा "बिहार खाना" को एक विश्वसनीय ब्रांड के रूप में स्थापित करना।

इन उपायों के क्रियान्वयन से न केवल बिहार के मखाना किसानों की आय में वृद्धि होगी, बल्कि इस क्षेत्र को राष्ट्रीय एवं अंतरष्ट्रीय बाजारों में प्रतिस्पर्धी बनाने में भी सहायता मिलेगी।

निष्कर्ष

बिहार के मखाना क्षेत्र की यह कहानी केवल एक कृषि उत्पाद की सफलता गाथा नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक विरासत के पुनर्जागरण की प्रेरक गाथा है। जब कोई किसान सुबह के कोहरे में अपने तालाब से मखाना निकालता है, तो वह केवल फसल नहीं काट रहा होता - वह अपने परिवार के स्वास्थ्य, अपने बच्चों के भविष्य और अपने प्रदेश की समृद्धि के बीज बो रहा होता है। भविष्य की राह में मखाना बिहार के लिए तीन स्तरों पर परिवर्तनकारी भूमिका निभा सकता है:

1. ग्रामीण अर्थव्यवस्था में क्रांति लाकर
2. पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करके
3. बिहार की कृषि पहचान को वैश्विक मंच पर स्थापित करके

आवश्यकता है तो बस इस 'सफेद सोने' को सही मूल्य दिलाने की, किसानों को उनके श्रम का उचित प्रतिफल देने की, और बिहार की इस प्राकृतिक संपदा को वैश्विक बाजार में उचित स्थान दिलाने की। मखाना वास्तव में बिहार की मिट्टी से उपजा वह पौष्टिक सेतु है जो स्वास्थ्य और समृद्धि को, परंपरा और आधुनिकता को, स्थानीय और वैश्विक को जोड़ता है - एक ऐसा सेतु जो बिहार को नई आर्थिक ऊंचाइयों तक ले जाने में सक्षम है।

*

महाराष्ट्र के उज्जनी जलाशय में भूमि उपयोग गतिकी का कार्बन पृथक्करण एवं मत्स्य प्रावधान सेवाओं पर प्रभाव का आकलन

महेश शर्मा, विनोद कुमार यादव, चांदनी प्रकाशभाई दवे, लिटन पॉल,मोहम्मद मेहारुफ़,और विद्या श्री भारती

परिचय

जैव विविधता पृथ्वी पर जीवन की मूल आधारशिला है। यह केवल विभिन्न जीवों की उपस्थिति तक सीमित नहीं है, बल्कि जीवों की आनुवंशिक, प्रजातीय तथा पारिस्थितिक विविधता को भी समाहित करती है। यही विविधता पारिस्थितिकी तंत्र को स्थिरता, उत्पादकता एवं लचीलापन प्रदान करती है तथा पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखती है। स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र मानव जीवन को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अनेक लाभ प्रदान करते हैं, जिन्हें सामूहिक रूप से पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाएँ कहा जाता है। मानव समाज भोजन, जल, स्वच्छ वायु, जलवायु संतुलन तथा प्राकृतिक संसाधनों के लिए प्रत्यक्ष रूप से इन सेवाओं पर निर्भर रहता है।पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं को सामान्यतः चार प्रमुख श्रेणियों—प्रावधान सेवाएँ, विनियामक सेवाएँ, सहायक सेवाएँ तथा सांस्कृतिक सेवाएँ में विभाजित किया जाता है। प्रावधान सेवाएँ मानव को भोजन, जल एवं अन्य प्राकृतिक संसाधन उपलब्ध कराती हैं, जबकि विनियामक सेवाएँ जलवायु नियंत्रण, जल शुद्धिकरण तथा पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सहायक सेवाएँ पोषक तत्व चक्रण, मृदा निर्माण एवं जैविक उत्पादकता को बनाए रखती हैं, वहीं सांस्कृतिक सेवाएँ मनोरंजन, सौंदर्यबोध, पारंपरिक ज्ञान एवं आध्यात्मिक मूल्यों को समृद्ध करती हैं। बॉयड एवं जेम्स के अनुसार, प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र समाज, समुदायों एवं अर्थव्यवस्था को अनेक प्रकार के लाभ प्रदान करते हैं, जो मानव जीवन की सतत प्रगति एवं विकास के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। इस प्रकार, जैव विविधता एवं पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाएँ एक-दूसरे से गहराई से जुड़ी हुई हैं। यदि जैव विविधता में कमी आती है, तो पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यक्षमता प्रभावित होती है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव मानव जीवन, खाद्य सुरक्षा तथा पर्यावरणीय स्थिरता पर पड़ता है। इसलिए वर्तमान समय में जैव विविधता संरक्षण एवं पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं के सतत प्रबंधन को वैश्विक स्तर पर अत्यधिक महत्व दिया जा रहा है।

इन पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं में मत्स्य क्षेत्र एक महत्वपूर्ण प्रावधान सेवा के रूप में विशेष स्थान रखता है, जो वैश्विक खाद्य सुरक्षा, पोषण, रोजगार तथा आजीविका संवर्धन में महत्वपूर्ण योगदान देता है (FAO, 2020)। परंपरागत रूप से समुद्री मात्स्यिकी को अधिक महत्व दिया जाता रहा है, किन्तु वर्तमान समय में अंतर्देशीय मात्स्यिकी, विशेषकर जलाशय मात्स्यिकी, विकासशील देशों की ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं पोषण सुरक्षा का एक प्रमुख आधार बनकर उभरी है। जलाशय मात्स्यिकी न केवल सस्ती एवं पौष्टिक प्रोटीन उपलब्ध कराती है, बल्कि रोजगार के अवसर उत्पन्न कर स्थानीय समुदायों की आजीविका को भी सुदृढ़ बनाती है। इसके साथ ही, यह जलीय जैव विविधता के संरक्षण तथा पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

जलाशय मानव निर्मित जलीय पारिस्थितिकी तंत्र हैं, जो अपने आसपास के भू-दृश्यों में होने वाले परिवर्तनों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील रहते हैं। जलाशयों के जलग्रहण क्षेत्रों में भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण में होने वाले परिवर्तन जल विज्ञान, अवसादन, पोषक तत्वों के प्रवाह तथा पारिस्थितिक परिस्थितियों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। कृषि विस्तार, शहरीकरण, वनों की कटाई तथा आधारभूत संरचनाओं के विकास जैसी मानवीय गतिविधियाँ जल गुणवत्ता, मत्स्य उत्पादकता एवं जलीय जैव विविधता पर गहरा प्रभाव डालती हैं। इसी प्रकार, वनस्पति आवरण एवं भूमि प्रबंधन में परिवर्तन मृदा अपरदन, सतही अपवाह तथा पोषक तत्वों के परिवहन को बढ़ाते हैं, जिससे जलीय आवासों की गुणवत्ता घटती है और मछलियों की आबादी प्रभावित होती है। इसलिए जलाशयों के सतत प्रबंधन एवं संसाधनों के संरक्षण के लिए भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तनों परिवर्तनों तथा पारिस्थितिकी तंत्रीय कार्यों के बीच संबंधों को समझना अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

मत्स्य प्रावधान सेवाओं के अतिरिक्त, जलाशय पारिस्थितिकी तंत्र जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जलाशय अवसादों, जलीय जैव द्रव्य तथा आसपास की वनस्पतियों में वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड को संग्रहित करके कार्बन पृथक्करण की प्रक्रिया को संचालित करते हैं। इस प्रकार, जलाशय वैश्विक कार्बन चक्र के महत्वपूर्ण घटक के रूप में कार्य करते हैं। किन्तु अनियंत्रित भूमि उपयोग परिवर्तन, कृषि तीव्रीकरण एवं तीव्र शहरी विस्तार ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को बढ़ाते हैं तथा जलाशयों की कार्बन संग्रहण क्षमता को कम कर देते हैं। इसी तरह, तटीय वनस्पतियों एवं आर्द्रभूमियों में होने वाले परिवर्तन पारिस्थितिक उत्पादकता एवं कार्बन भंडारण क्षमता को प्रभावित करते हैं। इसलिए भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तनों का कार्बन पृथक्करण पर प्रभाव समझना जलवायु परिवर्तन न्यूनीकरण एवं पर्यावरणीय स्थिरता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तन, मत्स्य प्रावधान सेवाएँ तथा कार्बन पृथक्करण आपस में गहराई से जुड़े हुए एवं बहुआयामी विषय हैं। भूमि आवरण में होने वाले परिवर्तन जल प्रवाह, पोषक तत्व परिवहन, अवसादन, आवास उपलब्धता तथा पारिस्थितिक उत्पादकता को प्रभावित करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप मत्स्य संसाधनों एवं कार्बन भंडारण क्षमता में परिवर्तन देखने को मिलता है। इसलिए इन सभी सेवाओं का एकीकृत अध्ययन पारिस्थितिक संरक्षण एवं आर्थिक विकास के बीच संतुलन स्थापित करने के लिए आवश्यक है। यद्यपि वर्तमान समय में पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं के मूल्यांकन को पर्यावरणीय प्रबंधन में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हो रहा है, फिर भी जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों में मत्स्य प्रावधान सेवाओं एवं कार्बन पृथक्करण को एक साथ समाहित करने वाले अध्ययन अभी भी सीमित हैं।

महाराष्ट्र राज्य में स्थित उज्जनी जलाशय क्षेत्र का एक प्रमुख बहुउद्देशीय जलाशय है, जो मात्स्यिकी, सिंचाई, जलापूर्ति तथा क्षेत्रीय

सामाजिक-आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह जलाशय जैव विविधता संरक्षण एवं कार्बन भंडारण जैसी महत्वपूर्ण विनियामक सेवाएँ भी प्रदान करता है। किन्तु बढ़ते मानवीय दबाव, कृषि विस्तार, अवसादन, प्रदूषण, भूमि उपयोग परिवर्तन तथा जलवायु परिवर्तनशीलता इस जलाशय की पारिस्थितिक स्थिरता को लगातार प्रभावित कर रहे हैं। पिछले कुछ दशकों में जलाशय के आसपास कृषि, बस्तियों एवं आधारभूत संरचनाओं के तीव्र विस्तार ने प्राकृतिक भू-दृश्य एवं पारिस्थितिकी तंत्रीय कार्यप्रणाली में व्यापक परिवर्तन किए हैं। इन परिवर्तनों का प्रभाव मत्स्य उत्पादकता, जल गुणवत्ता, आवासीय स्थिरता एवं कार्बन गतिकी पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

हाल के वर्षों में रिमोट सेंसिंग एवं भौगोलिक सूचना प्रणाली जैसी भू-स्थानिक तकनीकों ने भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तनों तथा पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं के अध्ययन को अधिक प्रभावी, वैज्ञानिक एवं सटीक बना दिया है। ये तकनीकें भूमि आवरण परिवर्तन, जल फैलाव क्षेत्र, वनस्पति परिवर्तन, अवसादन प्रतिरूप एवं पारिस्थितिक क्षरण के विश्लेषण में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करती हैं। भू-स्थानिक विश्लेषण को पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवा मूल्यांकन के साथ जोड़कर पर्यावरणीय परिवर्तनों को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है तथा प्रभावी संरक्षण एवं प्रबंधन रणनीतियाँ विकसित की जा सकती हैं।

इन्हीं संदर्भों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन महाराष्ट्र के उज्जनी जलाशय में भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तनों का कार्बन पृथक्करण तथा मत्स्य प्रावधान सेवाओं पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करता है। यह अध्ययन भू-स्थानिक तकनीकों एवं पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवा मूल्यांकन के माध्यम से भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तनों परिवर्तनों तथा पारिस्थितिक कार्यों के बीच अंतःक्रियाओं का विश्लेषण करेगा। अध्ययन के निष्कर्ष सतत जलाशय प्रबंधन, जैव विविधता संरक्षण, जलवायु-सहिष्णु विकास तथा मत्स्य आधारित आजीविकाओं को सुदृढ़ करने के लिए महत्वपूर्ण वैज्ञानिक आधार प्रदान करेंगे।

उज्जनी जलाशय : पारिस्थितिक एवं सामाजिक-आर्थिक महत्व

उज्जनी बाँध, जिसे भीमा सिंचाई परियोजना के नाम से भी जाना जाता है, महाराष्ट्र में कृष्णा नदी की प्रमुख सहायक नदी भीमा नदी पर स्थित एक महत्वपूर्ण बहुउद्देशीय परियोजना है। यह बाँध महाराष्ट्र के सोलापुर जिले में 18°04⊠26⊠ उत्तरी अक्षांश तथा 75°07⊠12⊠ पूर्वी देशांतर पर स्थित है। यह एक मृदा एवं चिनाई युक्त गुरुत्वीय बाँध है, जो विशाल जलग्रहण क्षेत्र एवं बहुउद्देशीय उपयोगों के कारण राज्य की प्रमुख जल संसाधन परियोजनाओं में शामिल है। जलाशय का जलग्रहण क्षेत्र लगभग 14,850 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है, जिसके माध्यम से यह सिंचाई, मत्स्यिकी विकास, जलविद्युत उत्पादन तथा घरेलू जलापूर्ति जैसी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

उज्जनी जलाशय की सकल जल भंडारण क्षमता 3320.01 मिलियन घन मीटर तथा जीवित जल भंडारण क्षमता 1520.87 मिलियन घन मीटर है। इस जलाशय का सिंचाई कमांड क्षेत्र लगभग 1826.83 वर्ग किलोमीटर तक विस्तृत है, जो महाराष्ट्र के सूखा-प्रवण क्षेत्रों में कृषि उत्पादन एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जल संसाधन उपलब्ध कराने के साथ-साथ यह जलाशय समृद्ध जलीय जैव विविधता को भी संरक्षण प्रदान करता है तथा अंतर्देशीय मत्स्यिकी के विकास को बढ़ावा देता है। परिणामस्वरूप, यह क्षेत्रीय खाद्य सुरक्षा एवं स्थानीय समुदायों की आजीविका का एक महत्वपूर्ण आधार बन गया है।

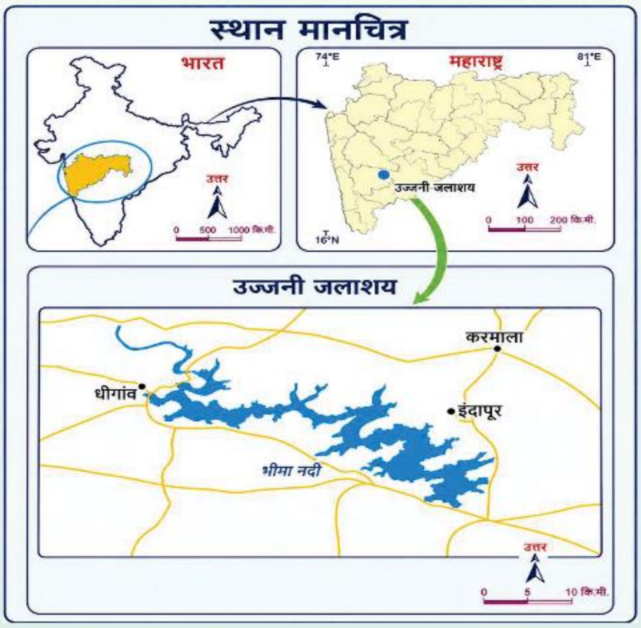

चित्र 1 : उज्जनी जलाशय (महाराष्ट्र) का भौगोलिक स्थिति मानचित्र

उज्जनी जलाशय से जुड़ा मत्स्य क्षेत्र स्थानीय मछुआरा समुदायों के लिए रोजगार एवं आय का प्रमुख स्रोत है। इस जलाशय में तिलापिया सहित अनेक व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण मछली प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जो क्षेत्रीय बाजारों की मांग को पूरा करती हैं। मत्स्यिकी गतिविधियाँ न केवल स्थानीय अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करती हैं, बल्कि ग्रामीण समुदायों के सामाजिक-आर्थिक विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। हालांकि, बढ़ते प्रदूषण, अवसादन, सुपोषण तथा जलीय आवासों के क्षरण जैसी पर्यावरणीय समस्याएँ जलाशय की मत्स्य संपदा एवं जलीय पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता के लिए गंभीर चुनौती बनती जा रही हैं।

इसके अतिरिक्त, उज्जनी जलाशय एवं इसके आसपास के भू-दृश्य कार्बन पृथक्करण में भी महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। जलीय वनस्पतियाँ, आर्द्रभूमियाँ तथा जलाशय के अवसाद वायुमंडलीय कार्बन को संग्रहित करके पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में सहायता करते हैं। किन्तु भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण में तेजी से हो रहे परिवर्तन इन पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं को प्रभावित कर रहे हैं। इसलिए उज्जनी जलाशय क्षेत्र में भूमि उपयोग परिवर्तनों तथा उनके पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं पर पड़ने वाले प्रभावों को समझना सतत जलाशय प्रबंधन, जैव विविधता संरक्षण तथा पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए अत्यंत आवश्यक है।

भूमि उपयोग गतिकी एवं पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाएँ

भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण में होने वाले परिवर्तन जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों में पर्यावरणीय बदलाव के प्रमुख कारकों में से एक हैं। कृषि विस्तार, शहरी बस्तियों का विकास, औद्योगिक गतिविधियों में वृद्धि तथा आधारभूत संरचनाओं के निर्माण जैसी मानवीय गतिविधियाँ जलग्रहण क्षेत्रों की भौतिक एवं पारिस्थितिक

विशेषताओं को तेजी से बदल रही हैं। ये परिवर्तन जल प्रवाह प्रणाली, अवसादन, पोषक तत्वों के परिवहन तथा जलाशयों के आवासीय वातावरण को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। परिणामस्वरूप, जलाशयों की पारिस्थितिक कार्यप्रणाली एवं संसाधन उत्पादकता में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिलते हैं।

विभिन्न अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है कि वनों की कटाई, कृषि तीव्रीकरण तथा शहरीकरण जल गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं, अवसादन दर को बढ़ाते हैं तथा जैव विविधता में कमी लाते हैं। कृषि क्षेत्रों से बहने वाले अतिरिक्त पोषक तत्व जलाशयों में सुपोषण की स्थिति उत्पन्न करते हैं, जिससे शैवालों की अत्यधिक वृद्धि एवं जल में ऑक्सीजन की कमी होने लगती है। ऐसी परिस्थितियाँ मछलियों के आवास एवं जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती हैं। इसके परिणामस्वरूप मत्स्य उत्पादकता में गिरावट आती है तथा जलीय जैव विविधता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण में होने वाले परिवर्तन पारिस्थितिकी तंत्रों की कार्बन पृथक्करण क्षमता को भी प्रभावित करते हैं। जब वन क्षेत्रों एवं आर्द्रभूमियों को कृषि भूमि अथवा निर्मित क्षेत्रों में परिवर्तित किया जाता है, तब वनस्पति आवरण एवं मृदा कार्बनिक कार्बन भंडारण में कमी आने लगती है। इसके विपरीत, पारिस्थितिक पुनर्स्थापन एवं संरक्षण उपाय कार्बन भंडारण क्षमता को बढ़ाने तथा पारिस्थितिक तंत्र की अनुकूलन क्षमता को मजबूत करने में सहायता करते हैं। इसलिए भूमि उपयोग परिवर्तन एवं कार्बन गतिकी के मध्य संबंधों को समझना पर्यावरणीय स्थिरता एवं जलवायु परिवर्तन न्यूनीकरण के लिए अत्यंत आवश्यक है।

पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं का मूल्यांकन जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों से प्राप्त पारिस्थितिक एवं आर्थिक लाभों को समझने का एक प्रभावी माध्यम प्रदान करता है। विशेष रूप से मत्स्य प्रावधान सेवाओं एवं कार्बन पृथक्करण का मूल्यांकन नीति-निर्माताओं को भूमि उपयोग संबंधी निर्णयों के प्रभाव एवं उनसे जुड़े लाभ-हानि को समझने में सहायता करता है। साथ ही, यह दृष्टिकोण सतत जलग्रहण क्षेत्र प्रबंधन, संसाधन संरक्षण तथा दीर्घकालिक पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए वैज्ञानिक आधार उपलब्ध कराता है।

जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों में कार्बन पृथक्करण

कार्बन पृथक्करण जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों द्वारा प्रदान की जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण विनियामक पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं में से एक है। जलाशय अवसादों के संचयन, जलीय जैव द्रव्य की वृद्धि तथा आसपास की वनस्पतियों के विकास के माध्यम से बड़ी मात्रा में कार्बन का भंडारण करते हैं। इस प्रकार, ये पारिस्थितिकी तंत्र वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर उसे दीर्घकालिक पारिस्थितिक भंडारों में संग्रहित करते हैं, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है। इसलिए जलाशय वैश्विक कार्बन चक्र के संतुलन को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

हालांकि, जलाशयों की कार्बन गतिकी उनके जलग्रहण क्षेत्रों में होने वाले भूमि उपयोग परिवर्तनों से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती है। वनों की कटाई, मृदा अपरदन तथा कृषि विस्तार जैसी गतिविधियाँ ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को बढ़ाती हैं और कार्बन भंडारण क्षमता को कम करती हैं। भूमि आवरण में परिवर्तन होने से वनस्पति घनत्व एवं मृदा कार्बनिक कार्बन में कमी आती है, जिसके कारण पारिस्थितिकी तंत्र की कार्बन पृथक्करण क्षमता कमजोर पड़ जाती है। इसके विपरीत, विभिन्न जलाशय प्रणालियों में किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि पारिस्थितिक संरक्षण एवं पुनर्स्थापन उपाय कार्बन भंडारण क्षमता को बढ़ाने तथा पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

हाल के वर्षों में कार्बन पृथक्करण के आर्थिक मूल्यांकन को विशेष महत्व प्राप्त हुआ है, विशेषकर कार्बन बाजार एवं जलवायु वित्त तंत्रों के उभरने के बाद। कार्बन भंडारण एवं पृथक्करण सेवाओं को आर्थिक मूल्य प्रदान करने से संरक्षण संबंधी पहल को प्रोत्साहन मिलता है तथा सतत भूमि प्रबंधन को बढ़ावा मिलता है। इसके साथ ही, यह नीति-निर्माताओं को पर्यावरण संरक्षण, जलवायु परिवर्तन न्यूनीकरण एवं प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग के लिए प्रभावी रणनीतियाँ तैयार करने में सहायता प्रदान करता है।

मत्स्य प्रावधान सेवाएँ

मत्स्य प्रावधान सेवाएँ जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों पर निर्भर समुदायों के लिए भोजन, पोषण, रोजगार एवं आय का एक प्रमुख स्रोत प्रदान करती हैं। भारत में अंतर्देशीय मत्स्यिकी ग्रामीण आजीविका को सुदृढ़ बनाने तथा क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को गति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। विशेष रूप से जलाशय मत्स्यिकी स्थानीय समुदायों को सस्ती एवं पौष्टिक प्रोटीन उपलब्ध कराने के साथ-साथ रोजगार एवं आर्थिक सुरक्षा भी प्रदान करती है।

उज्जनी जलाशय क्षेत्र में मत्स्यिकी गतिविधियाँ स्थानीय मछुआरा समुदायों की आजीविका का एक महत्वपूर्ण आधार हैं। यह जलाशय मत्स्य उत्पादन के माध्यम से स्थानीय बाजारों एवं क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को महत्वपूर्ण आर्थिक लाभ पहुँचाता है। किन्तु मत्स्य उत्पादकता अनेक पर्यावरणीय कारकों से प्रभावित होती है, जिनमें जल गुणवत्ता, आवास उपलब्धता, अवसादन, प्रदूषण तथा जल प्रवाह में उतार-चढ़ाव प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त, भूमि उपयोग पद्धतियों एवं जलग्रहण क्षेत्र की परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तन मछलियों के प्रजनन स्थलों, पोषक तत्वों की उपलब्धता तथा जलीय जैव विविधता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। परिणामस्वरूप, मत्स्य संसाधनों की उत्पादकता एवं स्थिरता पर भी प्रभाव पड़ता है।

सतत मत्स्य प्रबंधन के लिए पारिस्थितिक प्रक्रियाओं, मत्स्य जनसंख्या गतिकी तथा सामाजिक-आर्थिक कारकों की समग्र समझ विकसित करना आवश्यक है। पारिस्थितिकी तंत्र आधारित प्रबंधन दृष्टिकोण मत्स्य विकास, जैव विविधता संरक्षण एवं जलाशय की पारिस्थितिक स्थिरता के बीच संतुलन स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इस प्रकार, वैज्ञानिक एवं सतत प्रबंधन रणनीतियाँ न केवल मत्स्य संसाधनों के संरक्षण को सुनिश्चित करेंगी, बल्कि जलाशय आधारित समुदायों की दीर्घकालिक आजीविका एवं खाद्य सुरक्षा को भी सुदृढ़ बनाएंगी।

पारिस्थितिकी तंत्र मूल्यांकन में भू- स्थानिक तकनीकों की भूमिका

रिमोट सेंसिंग एवं भौगोलिक सूचना प्रणाली जैसी भू-स्थानिक तकनीकें वर्तमान समय में पर्यावरणीय परिवर्तनों की निगरानी तथा पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं के मूल्यांकन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण उपकरण बन चुकी हैं। उपग्रह चित्रण के माध्यम से भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तनों, जल फैलाव क्षेत्र, वनस्पति वितरण तथा अवसादन प्रतिरूपों का प्रभावी एवं सटीक मानचित्रण किया जा सकता है। ये तकनीकें बड़े भू- क्षेत्रों में होने वाले पर्यावरणीय परिवर्तनों को समझने तथा उनके प्रभावों का विश्लेषण करने में महत्वपूर्ण सहायता प्रदान करती हैं।

भू-स्थानिक तकनीकों का उपयोग जलाशय अध्ययनों में व्यापक रूप से किया जा रहा है, विशेषकर पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवा मूल्यांकन, कार्बन भंडारण आकलन, मत्स्य संसाधन विश्लेषण तथा पर्यावरणीय निगरानी के लिए। ये तकनीकें बड़े पैमाने पर पर्यावरणीय विश्लेषण हेतु कम लागत में सटीक एवं विश्वसनीय जानकारी उपलब्ध कराती हैं, जिससे वैज्ञानिक निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया अधिक प्रभावी बनती है। इसके अतिरिक्त, समय-समय पर प्राप्त उपग्रह आंकड़े पर्यावरणीय परिवर्तनों की प्रवृत्तियों एवं गतिशीलता को समझने में भी सहायक होते हैं।

भू-स्थानिक आंकड़ों को पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवा मूल्यांकन मॉडलों के साथ एकीकृत करने से जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों की स्थानिक एवं कालिक गतिकी को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। इस प्रकार का एकीकृत दृष्टिकोण सतत विकास योजना, संसाधन संरक्षण रणनीतियों तथा जलाशय प्रबंधन संबंधी नीतियों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। परिणामस्वरूप, भू-स्थानिक तकनीकें जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों के वैज्ञानिक प्रबंधन, जैव विविधता संरक्षण तथा दीर्घकालिक पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए एक प्रभावी आधार प्रदान करती हैं।

निष्कर्ष

उज्जनी जलाशय महाराष्ट्र का एक महत्वपूर्ण सामाजिक-आर्थिक एवं पारिस्थितिक संसाधन है, जो सिंचाई, मत्स्यिकी, जैव विविधता संरक्षण तथा कार्बन पृथक्करण जैसी अनेक महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाएँ प्रदान करता है। यह जलाशय न केवल क्षेत्रीय कृषि एवं आजीविका को सुदृढ़ बनाता है, बल्कि पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। किन्तु जलाशय के जलग्रहण क्षेत्र में तेजी से हो रहे भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तनों ने पारिस्थितिक प्रक्रियाओं को प्रभावित किया है, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं की गुणवत्ता एवं स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

भूमि उपयोग गतिकी, कार्बन पृथक्करण तथा मत्स्य प्रावधान सेवाओं के मध्य अंतर्संबंधों को समझना सतत जलाशय प्रबंधन के लिए अत्यंत आवश्यक है। रिमोट सेंसिंग एवं GIS जैसी भू-स्थानिक तकनीकें पर्यावरणीय परिवर्तनों के आकलन तथा पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं के मूल्यांकन के लिए प्रभावी एवं वैज्ञानिक उपकरण उपलब्ध कराती हैं। इन तकनीकों के माध्यम से जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों में हो रहे स्थानिक एवं कालिक परिवर्तनों का सटीक विश्लेषण किया जा सकता है, जिससे संसाधन प्रबंधन एवं संरक्षण संबंधी निर्णय अधिक प्रभावी बनते हैं।

सतत जलग्रहण क्षेत्र संरक्षण, वैज्ञानिक मत्स्य प्रबंधन तथा जलवायु परिवर्तन न्यूनीकरण पर आधारित एकीकृत प्रबंधन दृष्टिकोण उज्जनी जलाशय की पारिस्थितिक स्थिरता एवं दीर्घकालिक स्थायित्व को मजबूत कर सकते हैं। इसके साथ ही, मत्स्य प्रावधान सेवाओं एवं कार्बन पृथक्करण जैसी पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं का आर्थिक मूल्यांकन नीति- निर्माण, संरक्षण योजना तथा सतत विकास कार्यक्रमों के लिए महत्वपूर्ण वैज्ञानिक आधार प्रदान करता है।

भविष्य में किए जाने वाले अध्ययनों में एकीकृत पारिस्थितिकी तंत्र मूल्यांकन, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों तथा समुदाय-आधारित प्रबंधन दृष्टिकोणों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक होगा। इस प्रकार के अध्ययन जलाशय पारिस्थितिकी तंत्रों के सतत उपयोग, जैव विविधता संरक्षण तथा स्थानीय समुदायों की दीर्घकालिक आजीविका सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे।

संदर्भ

1. एंडरसन, टी.आर., हॉकिंस, ई. एवं जोन्स, पी.डी. (2013). समुद्री कार्बन डाइऑक्साइड निष्कासन : जलवायु परिवर्तन न्यूनीकरण में वैश्विक महासागरीय कृत्रिम अपवेलिंग की संभावनाओं का मूल्यांकन। प्रोसीडिंग्स ऑफ द रॉयल सोसाइटी ए, 469(2157), पृ. 20120699।
2. बॉयड, जेम्स (2004). प्रकृति का मूल्य क्या है? पारिस्थितिक मूल्यांकन की जटिलताओं को समझने हेतु संकेतकों का उपयोग। रिसोर्सेज, 154, पृ. 18–22।
3. कार्डिनेल, बी.जे., डफी, जे.ई., गोंजालेज़, ए., हूपर, डी.यू., पेरिंग्स, सी., वेनाइल, पी., नरवानी, ए., मेस, जी.एम., टिलमैन, डी., वार्डल, डी.ए. एवं किंजिग, ए.पी. (2012). जैव विविधता ह्रास एवं मानव जीवन पर उसके प्रभाव। नेचर, 486(7401), पृ. 59–67।
4. कारपेंटर, एस.आर., ब्रॉक, डब्ल्यू.ए., होल्ट, सी.ए., हैनसन, पी.सी. एवं जॉनसन, डी.ई. (2011). पारिस्थितिक परिवर्तन के प्रारंभिक संकेत : संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र परिप्रेक्ष्य। पीएलओएस बायोलॉजी, 9(7), पृ. e1001109।
5. डी सिल्वा, एस.एस. एवं सोटो, डी. (2009). जलवायु परिवर्तन एवं जलीय कृषि : संभावित प्रभाव, अनुकूलन एवं न्यूनीकरण। क्लाइमेट चेंज इम्प्लीकेशन्स फॉर फिशरीज एंड एक्वाकल्चर : ओवरव्यू ऑफ करंट साइंटिफिक नॉलेज, एफएओ फिशरीज एंड एक्वाकल्चर टेक्निकल पेपर संख्या 530, रोम : एफएओ, पृ. 151–212।
6. डियाज़, एस., फार्जियोन, जे., चैपिन, एफ.एस. III एवं टिलमैन, डी. (2006). जैव विविधता ह्रास से पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं एवं मानव कल्याण को खतरा। पीएलओएस बायोलॉजी, 4(8), पृ. 1300–1305।
7. खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) (2020). विश्व मत्स्य एवं जलीय कृषि की स्थिति 2020। रोम, इटली।
8. कदावरुगु, आर., ध्यानी, एस., पुरोहित, वी., दासगुप्ता, आर.,

कुमार, पी., हाशिमोटो, एस., पुजारी, पी. एवं बिनीवाले, आर. (2022). परिदृश्य-आधारित भूमि उपयोग परिवर्तनों एवं उनके पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं पर प्रभाव का मात्रात्मक अध्ययन : भितरकनिका मैंग्रोव क्षेत्र, ओडिशा, भारत का एक अध्ययन। जर्नल ऑफ कोस्टल कंजर्वेशन, 26(1), पृ. 30–45।

9. लिंच, ए.जे., कुक, एस.जे., डेन्स, ए.एम., सोटो, डी.जी., बियर्ड जूनियर, टी.डी., जैस्पर, जे.आर. एवं एपी-ओ, ए. (2016). उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा एवं आजीविका हेतु अंतर्देशीय मत्स्यिकी का महत्व। रिव्यूज़ इन फिश बायोलॉजी एंड फिशरीज, 26(4), पृ. 549–562।

10. त्रिपाठी, आर., मोहराना, के.सी., मोहंती, एस., पटनायक, एस., चटर्जी, डी., स्वैन, सी.के., नायक, ए.के., पांडा, बी.बी., भदुरी, डी., मुंडा, एस., खानम, आर., प्रियदर्शिनी, एस., शाहिद, एम., मंडल, बी. एवं नायक, ए.के. (2021). भारत के पूर्वी तटीय क्षेत्र में भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तनों का पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं पर प्रभाव। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एनवायरनमेंटल रिसर्च, 16(5), पृ. 485–498।

11. वांग, एक्स., यिन, एच., लू, एन., वू, एक्स., शाओ, क्यू. एवं दाई, ई. (2016). चीन के यांग्त्ज़ी नदी बेसिन में भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तनों का पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं पर प्रभाव। साइंस ऑफ द टोटल एनवायरनमेंट, 571, पृ. 862–873।

12. झाओ, जे., ल्व, ज़ेड., ज़ोउ, वाई. एवं लियू, वाई. (2015). चीन की मिनजियांग नदी के ऊपरी क्षेत्रों में भूमि उपयोग परिवर्तन के प्रति पारिस्थितिकी तंत्रीय सेवाओं की प्रतिक्रिया। इकोलॉजिकल इंडिकेटर्स, 50, पृ. 20–35।

*

मत्स्य पालन में वृद्धि एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में न्यूट्रास्यूटिकल्स का उपयोग

लीसा प्रियदर्शनी, दिलीप कुमार सिंह, मंदाकिनी देवी हंजाबम, सोनालिका साहू,
थालोंगसाई रियांग, सुजाता साहू, सुमन मन्ना एवं तापस कुमार घोषाल

परिचय

उच्च घनत्व संचय मत्स्य पालन पद्धतियों के विस्तार के साथ जलीय जीवों में रोगों की समस्या मत्स्य पालन क्षेत्र की एक प्रमुख बाधा के रूप में उभरकर सामने आई है। संवर्धित मछलियाँ जीवाणुजनित, कवकजनित, विषाणुजनित, परजीवीजनित तथा पोषण-संबंधी विभिन्न रोगों के प्रति अधिक संवेदनशील होती हैं। इन रोगों के कारण मत्स्य उत्पादन एवं आर्थिक लाभ पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः मत्स्य पालन में उत्पादकता बढ़ाने, वृद्धि दर में सुधार करने, आहार उपयोग क्षमता को बढ़ाने तथा मछलियों की तनाव-सहनशीलता और रोग प्रतिरोधक क्षमता को सुदृढ़ करने की निरंतर आवश्यकता है। वर्तमान समय में उपभोक्ताओं की स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता तथा कई देशों में रासायनिक पदार्थों, हार्मोन और एंटीबायोटिक्स के उपयोग पर कड़े नियमों के कारण रासायनिक पदार्थों, हार्मोन और एंटीबायोटिक्स प्रयोग की व्यवहार्यता कम होती जा रही है। इसके विपरीत, प्राकृतिक जैव-सक्रिय यौगिकों का उपयोग अधिक सुरक्षित, पर्यावरण-अनुकूल तथा उपभोक्ताओं द्वारा अधिक स्वीकार्य माना जा रहा है। इसी संदर्भ में न्यूट्रास्यूटिकल्स का उपयोग मत्स्य पालन में वृद्धि संवर्धन, स्वास्थ्य सुधार तथा रोग नियंत्रण के लिए एक प्रभावी विकल्प के रूप में महत्वपूर्ण होता जा रहा है। न्यूट्रास्यूटिकल शब्द न्यूट्रिशन अर्थात पोषण तथा फार्मास्यूटिकल अर्थात औषधीय उत्पाद, इन दो शब्दों से मिलकर बना है। इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम डॉ. स्टीफन डी. फेलिस द्वारा वर्ष 1989 में किया गया था। न्यूट्रास्यूटिकल्स ऐसे उत्पादों का समूह हैं जो सामान्य खाद्य पदार्थों से अधिक लाभकारी होते हैं, लेकिन औषधियों की श्रेणी में पूर्ण रूप से नहीं आते। इन्हें ऐसे पोषण पूरक के रूप में परिभाषित किया जाता है, जिनका उपयोग रोगों की रोकथाम, स्वास्थ्य संरक्षण तथा उपचार-सहायक प्रभावों के लिए किया जा सकता है। न्यूट्रास्यूटिकल्स ऐसे पदार्थ हैं जो भोजन या भोजन के किसी घटक के रूप में पाए जाते हैं तथा शरीर को पोषण के साथ-साथ अतिरिक्त स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं। ये रोगों की रोकथाम, प्रतिरक्षा प्रणाली के सुदृढ़ीकरण, वृद्धि सुधार तथा शारीरिक क्रियाओं के संतुलन में सहायक होते हैं। वर्तमान में प्राकृतिक उत्पादों के जैव-सक्रिय घटकों को कैप्सूल, टैबलेट, पाउडर या तरल रूप में विकसित कर न्यूट्रास्यूटिकल्स के रूप में उपयोग किया जा रहा है। इस प्रक्रिया को पोषण का औषधीकरण भी कहा जा सकता है, जिसमें आवश्यक पोषक तत्वों या जैव-सक्रिय पदार्थों को प्राकृतिक खाद्य स्रोतों के स्थान पर नियंत्रित पूरक रूप में उपलब्ध कराया जाता है। वर्तमान समय में मत्स्य पालन तीव्र गति से विकसित हो रहा है। अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए उच्च घनत्व पर मछलियों का पालन किया जाता है, जिसके कारण मछलियों में तनाव, रोगों की संभावना, आहार उपयोगिता में कमी तथा वृद्धि दर पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। ऐसे में न्यूट्रास्यूटिकल्स का उपयोग मत्स्य पालन में एक सुरक्षित, प्राकृतिक और प्रभावी विकल्प के रूप में उभर रहा है। न्यूट्रास्यूटिकल्स वे पोषक या जैव-सक्रिय पदार्थ होते हैं, जो सामान्य पोषण के साथ-साथ स्वास्थ्य लाभ भी प्रदान करते हैं। ये मछलियों की वृद्धि, रोग प्रतिरोधक क्षमता, आंत स्वास्थ्य, तनाव सहनशीलता और प्रजनन क्षमता को बेहतर बनाने में सहायक होते हैं।

न्यूट्रास्यूटिकल्स वर्गीकरण

न्यूट्रास्यूटिकल्स अथवा कार्यात्मक खाद्य पदार्थों का वर्गीकरण उनके स्रोतों के आधार पर किया जा सकता है। इन्हें मुख्यतः दो वर्गों में बाँटा जाता है: प्राकृतिक या पारंपरिक न्यूट्रास्यूटिकल्स तथा अप्राकृतिक या गैर-पारंपरिक न्यूट्रास्यूटिकल्स।

A. पारंपरिक न्यूट्रास्यूटिकल्स

पारंपरिक न्यूट्रास्यूटिकल्स वे प्राकृतिक उत्पाद होते हैं, जिनमें खाद्य पदार्थ की मूल संरचना में कोई विशेष परिवर्तन नहीं किया जाता। ये खाद्य पदार्थ अनेक प्राकृतिक जैव-सक्रिय घटकों से युक्त होते हैं, जो सामान्य पोषण से अतिरिक्त स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं। उदाहरण के रूप में, मछली में पाए जाने वाले ओमेगा-3 फैटी एसिड, सोयाबीन में पाए जाने वाले सैपोनिन्स तथा टमाटर में उपस्थित लाइकोपीन ऐसे प्राकृतिक घटक हैं, जो स्वास्थ्य संवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

1. रासायनिक घटक

पोषक तत्व

विटामिन, खनिज, प्रोटीन तथा आवश्यक वसीय अम्ल मछली आहार के अत्यंत आवश्यक पोषक तत्व हैं। मछलियों की पोषणीय स्थिति को रोगों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता निर्धारित करने वाले महत्वपूर्ण कारकों में से एक माना जाता है। मैक्रो एवं माइक्रोन्यूट्रिएंट्स, जैसे अमीनो अम्ल, पॉलीअनसैचुरेटेड फैटी एसिड्स, विटामिन तथा सूक्ष्म तत्वों के बीच संतुलन लार्वा अवस्था में प्रतिरक्षा तंत्र के विकास में विशिष्ट और आवश्यक भूमिका निभाता है। साथ ही ये लार्वा, बड़ी मछलियों तथा झींगों के उत्तम स्वास्थ्य को बनाए रखने में सहायक होते हैं। ईकोसैनॉइड्स प्रतिरक्षा तंत्र के नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये मैक्रोफेज और लिम्फोसाइट्स जैसी कोशिकाओं पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालते हैं तथा साइटोकाइन्स के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से भी प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया को प्रभावित करते हैं।

औषधीय वनस्पतियाँ

औषधीय वनस्पतियाँ मछली एवं झींगा पालन में स्वास्थ्यवर्धक तथा रोग-प्रतिरोधक पदार्थों के रूप में उपयोगी होती हैं। उदाहरण के लिए, ऑलिव लीफ विषाणुरोधी कारक के रूप में कार्य करती है। यह वायरस के ट्रांसक्रिप्शन को अवरुद्ध या नियंत्रित करके मेजबान कोशिकाओं में उसकी प्रतिकृति निर्माण प्रक्रिया को कम करती है तथा असंविशिष्ट प्रतिरक्षा क्षमता को बढ़ाती है। वनस्पति अर्क

कवक कोशिका- भित्ति के विघटन, कोशिका झिल्ली की पारगम्यता में परिवर्तन, चयापचय प्रक्रिया में हस्तक्षेप तथा RNA और प्रोटीन संश्लेषण को प्रभावित करके कवकरोधी प्रभाव प्रदर्शित करते हैं। धतूरा पौधा एस्परजिलस और कैंडिडा के विरुद्ध कवकरोधी गुण दर्शाता है। इसी प्रकार नीम तथा टी सीड ऑयल एफैनोमाइसीज़ इन्वेडन्स के विरुद्ध कवकरोधी प्रभाव प्रदर्शित करते हैं। कुटकी जैसी औषधीय वनस्पति झींगों में तनावरोधी यौगिक के रूप में उपयोग की जाती है। औषधीय वनस्पतियों के जीवाणुरोधी गुणों में कोशिका-भित्ति का विघटन, प्रोटीन संश्लेषण और DNA संश्लेषण का अवरोध, एंजाइम स्राव का दमन तथा क्वोरम सेंसिंग मार्ग की संकेत प्रणाली में हस्तक्षेप शामिल हैं। नीम की पत्तियाँ, लहसुन और हल्दी पाउडर भारतीय प्रमुख कार्प मछलियों के फ्राई में रोग-प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक पाए गए हैं।

फाइटोकेमिकल्स

पौधों में विभिन्न प्रकार के रासायनिक यौगिक पाए जाते हैं, जिनमें से कई मछलियों की भूख, वृद्धि तथा प्रतिरक्षा स्थिति पर लाभकारी प्रभाव डालते हैं। ये यौगिक अलग- अलग जैविक प्रक्रियाओं के माध्यम से कार्य करते हैं। औषधीय पौधों में उपस्थित फाइटोकेमिकल्स जन्मजात प्रतिरक्षा प्रणाली को सक्रिय कर सकते हैं, रोगाणुरोधी क्षमता प्रदर्शित कर सकते हैं तथा एंटीऑक्सीडेंट गुणों के माध्यम से मछलियों की सामान्य शारीरिक स्थिति में सुधार कर सकते हैं। अनेक अध्ययनों में फाइटोकेमिकल्स को आहार योजक के रूप में उपयोगी बताया गया है। फाइटोकेमिकल्स अंतःस्रावी नियंत्रक के रूप में भी कार्य कर सकते हैं। इनका उपयोग खाद्य मछली उत्पादन के साथ-साथ सजावटी मछली उत्पादन में भी किया जा सकता है। उदाहरण के रूप में कैरोटेनॉइड्स, जो गाजर, टमाटर, फलों और सब्जियों में पाए जाते हैं; सल्फाइड्स, जो लहसुन और प्याज में पाए जाते हैं; तथा दालचीनी, धनिया और हल्दी जैसे पौध-आधारित पदार्थ मत्स्य पालन में उपयोगी फाइटोकेमिकल स्रोत माने जाते हैं।

2. प्रोबायोटिक सूक्ष्मजीव

प्रोबायोटिक्स का उपयोग जलीय कृषि में पाली जाने वाली मछलियों और झींगों की वृद्धि, स्वास्थ्य तथा रोग-प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने के लिए किया जाता है। प्रोबायोटिक्स जीवित लाभकारी सूक्ष्मजीव होते हैं, जिन्हें आहार में पूरक के रूप में मिलाया जाता है। ये मेजबान जीव की आंत्र सूक्ष्मजीव संरचना में सुधार करते हैं तथा हानिकारक और लाभकारी सूक्ष्मजीवों के बीच संतुलन बनाए रखने में सहायता करते हैं। मछली पालन प्रणाली में प्रोबायोटिक्स अथवा उनके जैव-उत्पाद स्वास्थ्य संवर्धन और रोगों की रोकथाम में उपयोगी पाए गए हैं। जलीय कृषि में इनका व्यापक उपयोग वृद्धि प्रदर्शन, पोषण उपयोगिता, रोग नियंत्रण तथा प्रतिरक्षा तंत्र के विकास में सुधार के लिए किया जाता है।

आंत्र प्रोबायोटिक्स

आंत्र मछलियों का एक महत्वपूर्ण अंग तंत्र है, जो दो प्रमुख कार्य करता है — पाचन तथा रक्षा तंत्र। स्वस्थ और सक्रिय आंत्र तंत्र बनाए रखने के लिए आंत्र पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन अत्यंत आवश्यक होता है। आहार की गुणवत्ता, पोषक तत्वों की उपलब्धता तथा संक्रामक रोगकारक इस संतुलन को प्रभावित कर सकते हैं। इसके परिणामस्वरूप मछलियों के स्वास्थ्य, वृद्धि और उत्पादन क्षमता पर प्रभाव पड़ सकता है। प्रोबायोटिक्स की कुछ जीवाणु एवं कवकीय प्रजातियों को मिलाकर आहार पेलेट्स में सम्मिलित किया जा सकता है। इन्हें जीवित आहार में एन्कैप्सुलेट किया जा सकता है अथवा मौखिक रूप से भी दिया जा सकता है। इस प्रकार ये आंत्र की आवश्यक लाभकारी सूक्ष्मजीवी आबादी में सुधार करते हैं, रोगों की रोकथाम में सहायक होते हैं तथा प्रतिरक्षा प्रणाली को सक्रिय करते हैं।

जल प्रोबायोटिक्स

जल प्रोबायोटिक्स को सीधे पालन जल में प्रयोग किया जाता है। इनका मुख्य उद्देश्य जल में उपस्थित कार्बनिक प्रदूषकों और विभिन्न दूषित पदार्थों को कम करना होता है। ये जल गुणवत्ता में सुधार करते हैं तथा कार्बनिक पदार्थों को छोटे और सरल घटकों में परिवर्तित करते हैं। बैसिलस प्रजातियाँ जैसे प्रोबायोटिक जीवाणु कार्बनिक पदार्थों को कार्बन डाइऑक्साइड में परिवर्तित कर सकते हैं, जिससे जलीय प्रणाली में कार्बनिक अपशिष्ट का स्तर कम होता है। इस प्रकार जल प्रोबायोटिक्स पालन माध्यम की स्वच्छता, जल गुणवत्ता और मछली स्वास्थ्य को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रोबायोटिक्स ने जलीय कृषि उद्योग में रोग-प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने और जल गुणवत्ता सुधारने के क्षेत्र में एक नई दिशा प्रदान की है। इनका वैज्ञानिक और संतुलित उपयोग टिकाऊ, सुरक्षित और उत्पादक मत्स्य पालन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

3. न्यूट्रास्यूटिकल एंजाइम्स

न्यूट्रास्यूटिकल एंजाइम्स वे जैव-सक्रिय एंजाइम होते हैं, जो पौधों, पशुओं तथा सूक्ष्मजीवों से प्राप्त किए जाते हैं। एंजाइम जीवन प्रक्रियाओं का एक अनिवार्य हिस्सा हैं, क्योंकि इनके बिना जीवों के शरीर में विभिन्न जैव-रासायनिक क्रियाएँ सामान्य एवं प्रभावी रूप से संचालित नहीं हो पातीं। एंजाइम पाचन, पोषक तत्वों के अवशोषण, चयापचय तथा शारीरिक संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आहार में एंजाइम पूरक के रूप में इनके उपयोग से पाचन क्रिया में सुधार हो सकता है तथा पोषक तत्वों की उपयोगिता बढ़ सकती है। विभिन्न स्वास्थ्य स्थितियों, जैसे रक्त शर्करा असंतुलन, मोटापा, पाचन संबंधी समस्याएँ तथा उनसे जुड़े लक्षणों को कम करने में एंजाइम सप्लीमेंट सहायक हो सकते हैं। इसलिए न्यूट्रास्यूटिकल एंजाइम्स को स्वास्थ्य संवर्धन, बेहतर पाचन तथा पोषण उपयोगिता बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है।

B. गैर-पारंपरिक न्यूट्रास्यूटिकल्स

गैर-पारंपरिक न्यूट्रास्यूटिकल्स वे कृत्रिम या जैव-प्रौद्योगिकी के माध्यम से विकसित खाद्य पदार्थ होते हैं, जिनमें जैव-सक्रिय घटकों को विशेष उद्देश्य से संशोधित या संवर्धित किया जाता है। खाद्य पदार्थों में उपस्थित जैव-सक्रिय घटकों को मानव एवं पशु स्वास्थ्य के संवर्धन के लिए वैज्ञानिक रूप से विकसित किया जाता है।

सामान्यतः गैर-पारंपरिक न्यूट्रास्यूटिकल्स को दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: फोर्टिफाइड न्यूट्रास्यूटिकल्स तथा रिकॉम्बिनेंट न्यूट्रास्यूटिकल्स।

1. फोर्टिफाइड न्यूट्रास्यूटिकल्स

वे उत्पाद जिन्हें खाद्य पदार्थों से पृथक या शुद्ध करके औषधीय रूप में उपयोग किया जाता है तथा जो शरीर में विशिष्ट शारीरिक लाभ प्रदान करते हैं, सामान्यतः फोर्टिफाइड न्यूट्रास्यूटिकल्स कहलाते हैं। मत्स्य आहार तैयार करते समय जैव-सक्रिय आहार घटकों को मूल पोषक तत्वों के साथ उपयुक्त अनुपात में मिलाया जाता है, जिससे मछली के शरीर की विभिन्न शारीरिक क्रियाओं का संतुलित नियमन हो सके। जब किसी खाद्य पदार्थ को वैज्ञानिक रूप से इस प्रकार तैयार किया जाता है कि वह सामान्य पोषण के साथ-साथ स्वास्थ्य संवर्धन में भी सहायक हो, तो उसे कार्यात्मिक खाद्य पदार्थ कहा जाता है। कार्यात्मिक खाद्य पदार्थ मछलियों के स्वास्थ्य, वृद्धि और जीवित रहने के लिए आवश्यक मात्रा में विटामिन, वसा, प्रोटीन तथा कार्बोहाइड्रेट उपलब्ध कराते हैं।

प्रीबायोटिक्स

प्रीबायोटिक्स अपाच्य खाद्य घटक होते हैं, जो मेजबान जीव की आंत में उपस्थित लाभकारी सहजीवी जीवाणुओं की वृद्धि या सक्रियता को प्रोत्साहित करते हैं। इसके परिणामस्वरूप आंत्र स्वास्थ्य, पोषक तत्वों का उपयोग तथा समग्र स्वास्थ्य स्थिति में सुधार होता है। किसी खाद्य घटक को प्रीबायोटिक माना जाता है, यदि वह जठर अम्लता के प्रति प्रतिरोधी हो, पाचक एंजाइमों द्वारा आसानी से हाइड्रोलाइज न हो, जठरांत्रीय सूक्ष्मजीवों द्वारा किण्वित हो सके तथा आंत में स्वास्थ्य-संबंधी लाभकारी जीवाणुओं की संख्या बढ़ाने में सहायक हो। मत्स्य पालन में प्रीबायोटिक्स का उपयोग आंत्र सूक्ष्मजीव संतुलन को बनाए रखने, रोग-प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने तथा बेहतर वृद्धि प्रदर्शन प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

2. रिकॉम्बिनेंट न्यूट्रास्यूटिकल्स

रिकॉम्बिनेंट न्यूट्रास्यूटिकल्स वे न्यूट्रास्यूटिकल उत्पाद होते हैं, जिनका विकास आधुनिक जैव- प्रौद्योगिकी, आनुवंशिक अभियांत्रिकी, एंजाइमीय प्रक्रियाओं अथवा किण्वन तकनीक के माध्यम से किया जाता है। इनके अंतर्गत प्रोबायोटिक्स का निर्माण तथा खाद्य पदार्थों से जैव-सक्रिय घटकों का निष्कर्षण शामिल होता है। इसके अतिरिक्त, आधुनिक जैव-प्रौद्योगिकी का उपयोग ऊर्जा प्रदान करने वाले खाद्य पदार्थों के उत्पादन में भी किया जाता है, जैसे ब्रेड, एल्कोहल, किण्वित स्टार्च, दही, चीज़, सिरका आदि। ये उत्पाद किण्वन अथवा सूक्ष्मजीव-आधारित प्रक्रियाओं द्वारा तैयार किए जाते हैं और स्वास्थ्य संवर्धन में उपयोगी हो सकते हैं।

न्यूट्रास्यूटिकल्स की क्रियाविधि

न्यूट्रास्यूटिकल्स शरीर को आवश्यक जैव-रासायनिक घटकों, पोषक तत्वों तथा कार्यात्मिक अणुओं की आपूर्ति बढ़ाकर कार्य करते हैं। ये आवश्यक घटक शरीर की वृद्धि, मरम्मत, चयापचय, प्रतिरक्षा तथा सामान्य स्वास्थ्य को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

न्यूट्रास्यूटिकल्स मुख्यतः दो प्रकार से लाभ प्रदान करते हैं: ये रोगों के लक्षणों को कम करने में सहायक होते हैं तथा शरीर में बफरिंग एजेंट के रूप में कार्य कर राहत प्रदान करते हैं। ये प्रत्यक्ष रूप से स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं, जैसे प्रतिरक्षा क्षमता में वृद्धि, पाचन में सुधार, ऑक्सीडेटिव तनाव में कमी, पोषक तत्वों की बेहतर उपयोगिता तथा समग्र शारीरिक कार्यों का संतुलन बनाए रखना। इस प्रकार न्यूट्रास्यूटिकल्स सामान्य पोषण से आगे बढ़कर स्वास्थ्य संवर्धन, रोग-निरोधक क्षमता तथा उत्पादन प्रदर्शन में सुधार करने वाले महत्वपूर्ण जैव-सक्रिय घटकों के रूप में कार्य करते हैं।

न्यूट्रास्यूटिकल्स के लाभ

न्यूट्रास्यूटिकल्स के लाभों तथा इनके संभावित दुष्प्रभावों को लेकर वैज्ञानिक स्तर पर निरंतर चर्चा होती रही है। तथापि, विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि न्यूट्रास्यूटिकल्स प्रतिरक्षा-वर्धक पदार्थों के रूप में कार्य कर सकते हैं। मत्स्य पालन में इनके उपयोग से मछलियों की वृद्धि दर, तनाव सहनशीलता तथा जीवितता दर में सुधार देखा गया है। न्यूट्रास्यूटिकल्स जैसे फ्लेवोनॉइड्स, ग्रीन टी तथा प्याज में उपस्थित क्वेरसेटिन तनाव को कम करने तथा जीवितता दर बढ़ाने में सहायक माने जाते हैं। इसी प्रकार विटामिन-E, क्रिएटिन तथा हल्दी अपक्षयी रोगों से उबरने में सहायक भूमिका निभा सकते हैं। सोया-आधारित खाद्य पदार्थ, फ्लेवोनॉइड्स तथा ग्रीन टी अर्क मोटापा नियंत्रण में लाभकारी प्रभाव प्रदर्शित करते हैं। कुछ यौगिक, जैसे ग्रीन टी, आहार रेशा तथा एंटीऑक्सीडेंट्स, मधुमेह-रोधी प्रभाव भी दर्शाते हैं। इसके अतिरिक्त, लाइकोपीन, सोया खाद्य पदार्थ तथा पालक, टमाटर और आलू में पाए जाने वाले सैपोनिन्स जैसे यौगिक कैंसर-रोधी गुणों से संबंधित माने जाते हैं। मत्स्य पालन में न्यूट्रास्यूटिकल्स का महत्व विशेष रूप से इसलिए अधिक है क्योंकि ये प्राकृतिक रूप से वृद्धि, प्रतिरक्षा क्षमता, तनाव प्रबंधन तथा रोग-प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक हो सकते हैं। इनके वैज्ञानिक उपयोग से मछलियों के स्वास्थ्य, उत्पादन क्षमता तथा पालन प्रणाली की स्थिरता में सुधार किया जा सकता है।

निष्कर्ष

मानव तथा अन्य स्थलीय प्राणियों में न्यूट्रास्यूटिकल्स के स्वास्थ्य एवं प्रदर्शन संबंधी लाभों पर अनेक अध्ययन उपलब्ध हैं, परंतु मत्स्य पालन में इनके उपयोग पर अभी भी पर्याप्त और व्यापक वैज्ञानिक आंकड़ों की आवश्यकता है। मछलियों में वृद्धि-वर्धक पदार्थों तथा मोनोसेक्स मछली उत्पादन के लिए न्यूट्रास्यूटिकल्स कृत्रिम यौगिकों के सुरक्षित और प्रभावी विकल्प के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं। मत्स्य पालन में न्यूट्रास्यूटिकल्स के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए समन्वित, व्यवस्थित और व्यापक अनुसंधान की आवश्यकता है। ऐसे अनुसंधान प्रयासों से न केवल मछलियों की वृद्धि, रोग-प्रतिरोधक क्षमता और जीवितता दर में सुधार होगा, बल्कि जलीय कृषि प्रणाली की स्थिरता, पर्यावरणीय सुरक्षा तथा उत्पादन दक्षता में भी वृद्धि होगी। इस प्रकार न्यूट्रास्यूटिकल्स भविष्य के टिकाऊ और स्वास्थ्य-आधारित मत्स्य पालन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

*

हमारी मछलियाँ आहार क्यों नहीं खा रही हैं? इसके कारण एवं निदान

दिलीप कुमार सिंह, सुजाता साहू, सुमन मन्ना, गौरांग बिस्वास, तापस कुमार घोषाल एवं शिवाजी डी. अरगडे

परिचय

मछली पालन में आहार देना सबसे महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है। स्वस्थ मछलियाँ सामान्यतः आहार देने के स्थान पर आकर सक्रिय रूप से भोजन ग्रहण करती हैं। यदि मछलियाँ अचानक आहार खाना बंद कर दें या सामान्य से कम आहार ग्रहण करें, तो यह पालन प्रणाली में किसी प्रकार की समस्या का प्रारंभिक संकेत हो सकता है। यह समस्या तालाब, टैंक, केज या अन्य पालन प्रणालियों में जल गुणवत्ता, घुलित ऑक्सीजन, तापमान, आहार गुणवत्ता, रोग, तनाव, स्टॉकिंग घनत्व या पर्यावरणीय असंतुलन से संबंधित हो सकती है। आहार ग्रहण में कमी से मछलियों की वृद्धि दर, पोषक तत्वों का उपयोग, रोग-प्रतिरोधक क्षमता, जीवित रहने की दर और उत्पादन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए मछली पालकों को ऐसे लक्षणों की शीघ्र पहचान कर वैज्ञानिक तरीके से कारणों का पता लगाना चाहिए और समय पर उचित सुधारात्मक उपाय अपनाने चाहिए।

मछलियों द्वारा आहार न खाने के प्रमुख कारण

1. खराब जल गुणवत्ता

खराब जल गुणवत्ता मछलियों द्वारा आहार कम ग्रहण करने या आहार न खाने का एक प्रमुख कारण है। यदि जल में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा कम हो, अमोनिया या नाइट्राइट का स्तर अधिक हो, pH मछली की प्रजाति के अनुकूल न हो या जल अत्यधिक दूषित हो, तो मछलियों में तनाव उत्पन्न होता है। ऐसी स्थिति में उनकी श्वसन क्रिया, चयापचय गतिविधि, पाचन क्षमता और सामान्य व्यवहार प्रभावित हो सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप मछलियाँ आहार कम ग्रहण करती हैं या खाना बंद कर देती हैं।

2. घुलित ऑक्सीजन की कमी

जल में घुलित ऑक्सीजन की कमी मछलियों की श्वसन क्रिया, चयापचय गतिविधि और आहार ग्रहण क्षमता को सीधे प्रभावित करती है। कम ऑक्सीजन की स्थिति में मछलियाँ ऊर्जा का उपयोग भोजन ग्रहण करने और वृद्धि के बजाय जीवित रहने के लिए करती हैं, जिसके कारण उनकी भूख कम हो जाती है। ऐसी स्थिति में मछलियाँ सुस्त हो सकती हैं, जल की सतह पर आकर बार-बार मुँह खोल सकती हैं और आहार ग्रहण करना कम कर सकती हैं। यह समस्या प्रायः सुबह के समय अधिक देखी जाती है, क्योंकि रात में प्रकाश संश्लेषण न होने और जलीय जीवों की श्वसन क्रिया के कारण घुलित ऑक्सीजन का स्तर कम हो जाता है।

3. तापमान में परिवर्तन

जल तापमान मछलियों की चयापचय क्रिया, पाचन क्षमता, सक्रियता और आहार ग्रहण व्यवहार को सीधे प्रभावित करता है। प्रत्येक मछली प्रजाति के लिए एक उपयुक्त तापमान सीमा होती है, जिसमें वह बेहतर वृद्धि और सामान्य भोजन गतिविधि प्रदर्शित करती है। यदि जल तापमान बहुत अधिक या बहुत कम हो जाए, तो मछलियों का चयापचय असंतुलित हो सकता है, जिससे उनकी भूख और आहार उपयोगिता कम हो जाती है। अचानक वर्षा, ठंडा या गर्म जल प्रवेश, आंशिक जल परिवर्तन अथवा मौसम में तीव्र बदलाव के कारण तापमान में अचानक परिवर्तन होने पर मछलियाँ तनाव में आ सकती हैं और कुछ समय तक आहार कम ग्रहण कर सकती हैं।

4. खराब गुणवत्ता वाला आहार

खराब गुणवत्ता वाला आहार मछलियों की भूख और स्वास्थ्य को सीधे प्रभावित कर सकता है। यदि आहार पुराना, खराब, फफूंदयुक्त, बासी या दुर्गंधियुक्त या पोषक तत्वों की दृष्टि से असंतुलित हो, तो मछलियाँ उसे ग्रहण करने से बचती हैं। नमी वाले स्थान पर संग्रहित आहार में फफूंद की वृद्धि हो सकती है, जिससे माइकोटॉक्सिन जैसे विषैले पदार्थ उत्पन्न हो सकते हैं। ऐसे दूषित आहार के सेवन से मछलियों में तनाव, पाचन संबंधी समस्या, रोग-प्रतिरोधक क्षमता में कमी तथा वृद्धि दर में गिरावट देखी जा सकती है।

5. आहार में अचानक परिवर्तन

आहार में अचानक परिवर्तन मछलियों की भोजन ग्रहण करने की क्षमता और व्यवहार को प्रभावित कर सकता है। मछलियाँ आहार के आकार, रंग, गंध, स्वाद, बनावट तथा पोषक संरचना के प्रति संवेदनशील होती हैं। जब आहार अचानक बदला जाता है, तो मछलियों को नए आहार के प्रति अनुकूलन करने में समय लगता है, जिसके कारण वे कुछ समय तक आहार कम खा सकती हैं या खाना बंद कर सकती हैं।

6. अधिक आहार देना

मछलियों को आवश्यकता से अधिक आहार देना जल गुणवत्ता और मछलियों के स्वास्थ्य दोनों के लिए हानिकारक हो सकता है। अतिरिक्त आहार मछलियों द्वारा ग्रहण नहीं किया जाता और तालाब, टैंक या केज के तल में जमा होकर सड़ने लगता है। इसके विघटन से जल में अमोनिया, नाइट्राइट और जैविक भार बढ़ सकता है, जिससे घुलित ऑक्सीजन की मात्रा कम होती है तथा मछलियाँ तनाव में आ जाती हैं। ऐसी स्थिति में मछलियों की भूख, पाचन क्रिया, रोग-प्रतिरोधक क्षमता और वृद्धि दर प्रभावित हो सकती है।

7. रोग और परजीवी संक्रमण

रोग और परजीवी संक्रमण मछलियों की भूख, सक्रियता और सामान्य स्वास्थ्य को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकते हैं। बैक्टीरिया, फफूंद, वायरस या बाह्य एवं आंतरिक परजीवियों के संक्रमण के कारण मछलियाँ तनावग्रस्त, कमजोर और सुस्त हो जाती हैं, जिससे वे आहार कम ग्रहण करती हैं या खाना बंद कर देती हैं। शरीर पर लाल धब्बे, घाव, पंखों का गलना, असामान्य तैरना, पेट फूलना या मृत्यु इसके संकेत हो सकते हैं।

8. हैंडलिंग या परिवहन का तनाव

जाल लगाना, ग्रेडिंग, सैंपलिंग, परिवहन, स्टॉकिंग या अचानक नए जलाशय में स्थानांतरण जैसी गतिविधियों के दौरान मछलियों में तनाव प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। इसके कारण उनकी सक्रियता कम हो सकती है तथा वे कुछ घंटों से लेकर कुछ दिनों तक आहार कम ग्रहण कर सकती हैं। परिवहन या स्थानांतरण के दौरान जल तापमान, घुलित ऑक्सीजन, pH तथा जल गुणवत्ता में अचानक परिवर्तन भी तनाव को बढ़ा सकते हैं।

9. अधिक स्टॉकिंग घनत्व

अधिक स्टॉकिंग घनत्व मछलियों की वृद्धि, स्वास्थ्य और आहार ग्रहण क्षमता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकता है। सीमित स्थान में अधिक संख्या में मछलियाँ रखने से आहार, स्थान और घुलित ऑक्सीजन के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ जाती है। इसके साथ ही मछलियों के मल-मूत्र, अपशिष्ट पदार्थ और बचे हुए आहार के कारण जल की गुणवत्ता तेजी से खराब होती है, जिससे अमोनिया, नाइट्राइट और जैविक भार बढ़ सकता है। ऐसी स्थिति में मछलियों में तनाव, ऑक्सीजन की कमी, रोगों का फैलाव, वृद्धि दर में कमी तथा आहार ग्रहण करने की क्षमता में गिरावट देखी जा सकती है।

10. पर्यावरणीय गड़बड़ी

पर्यावरणीय गड़बड़ी मछलियों के तनाव स्तर, व्यवहार और आहार ग्रहण क्षमता को प्रभावित कर सकती है। अचानक वर्षा, पानी का गंदला होना, तापमान में तीव्र परिवर्तन, कीटनाशक या औद्योगिक अपशिष्ट से प्रदूषण, अधिक शोर, जल प्रवाह में अचानक बदलाव तथा शिकारी जीवों की उपस्थिति मछलियों में तनाव उत्पन्न कर सकती है। ऐसी परिस्थितियों में मछलियाँ सामान्य गतिविधि कम कर देती हैं और आहार ग्रहण करने की क्षमता घट जाती है। प्रदूषित या अस्थिर वातावरण में जल गुणवत्ता भी तेजी से प्रभावित हो सकती है, जिससे घुलित ऑक्सीजन में कमी, अमोनिया में वृद्धि और रोगों की संभावना बढ़ सकती है।

निदान

1. जल गुणवत्ता की नियमित जांच करें

मछलियों के स्वस्थ विकास और बेहतर आहार ग्रहण के लिए जल गुणवत्ता की नियमित निगरानी अत्यंत आवश्यक है। पालन प्रणाली में घुलित ऑक्सीजन, pH, तापमान, अमोनिया और नाइट्राइट जैसे प्रमुख जल गुणवत्ता मानकों की समय-समय पर जाँच करनी चाहिए। मछलियों की अच्छी वृद्धि, सामान्य चयापचय क्रिया और सक्रिय भोजन ग्रहण के लिए घुलित ऑक्सीजन की मात्रा सामान्यतः 5 mg/L से अधिक होनी चाहिए। जल गुणवत्ता में किसी भी प्रकार का असंतुलन मछलियों में तनाव उत्पन्न कर सकता है, जिससे उनकी भूख, वृद्धि और रोग-प्रतिरोधक क्षमता प्रभावित हो सकती है।

2. ऑक्सीजन स्तर बढ़ाएँ

यदि मछलियाँ जल की सतह पर आकर बार-बार मुँह खोलती दिखाई दें या हवा लेने जैसी स्थिति प्रदर्शित करें, तो यह जल में घुलित ऑक्सीजन की कमी का संकेत हो सकता है। ऐसी स्थिति में तुरंत एरेशन की व्यवस्था करनी चाहिए। घुलित ऑक्सीजन बढ़ाने के लिए पैडल व्हील एरेटर, एयर ब्लोअर, पानी का छिड़काव या आंशिक जल परिवर्तन जैसे उपाय अपनाए जा सकते हैं। विशेष रूप से सुबह के समय ऑक्सीजन स्तर की निगरानी करना आवश्यक है, क्योंकि इस समय घुलित ऑक्सीजन सामान्यतः न्यूनतम स्तर पर होती है। पर्याप्त घुलित ऑक्सीजन उपलब्ध होने से मछलियों की श्वसन क्रिया, चयापचय गतिविधि, आहार ग्रहण क्षमता तथा समग्र स्वास्थ्य में सुधार होता है।

3. गुणवत्ता जल बनाए रखें

यदि पालन प्रणाली का पानी गंदा है, दुर्गंधयुक्त है या अमोनिया का स्तर अधिक है, तो जल गुणवत्ता सुधारने के लिए सावधानीपूर्वक 20–30% तक आंशिक जल परिवर्तन किया जा सकता है। इसके साथ ही तालाब, टैंक या केज से बचा हुआ आहार, मृत मछलियाँ, मल-मूत्र और अधिक जैविक पदार्थों को समय पर हटाना चाहिए। अधिक जैविक भार जल में अमोनिया, नाइट्राइट और रोगजनक सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को बढ़ा सकता है, जिससे मछलियों में तनाव, भूख में कमी और रोगों की संभावना बढ़ जाती है। इसलिए स्वच्छ जल, उचित जल विनिमय और नियमित अपशिष्ट प्रबंधन मछलियों के स्वास्थ्य एवं बेहतर आहार ग्रहण के लिए आवश्यक हैं।

4. अच्छी गुणवत्ता वाला आहार दें

हमेशा ताजा, संतुलित और अच्छी गुणवत्ता वाला आहार उपयोग करें। आहार को सूखे, ठंडे और हवादार स्थान पर रखें। फफूंदयुक्त, गीला, एक्सपायरी या दुर्गंधयुक्त आहार कभी न दें।

मछलियों के स्वस्थ विकास, बेहतर आहार ग्रहण और रोग-प्रतिरोधक क्षमता बनाए रखने के लिए हमेशा ताजा, संतुलित और अच्छी गुणवत्ता वाला आहार उपयोग करना चाहिए। आहार में आवश्यक पोषक तत्व, जैसे प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन और खनिज उचित मात्रा में होने चाहिए। आहार को नमी, सीधी धूप और अधिक तापमान से बचाकर रखें, सूखे, ठंडे और हवादार स्थान पर संग्रहित करना चाहिए। फफूंदयुक्त, गीला, एक्सपायरी या दुर्गंधयुक्त आहार कभी न दें, क्योंकि ऐसा आहार पाचन संबंधी समस्या, तनाव, रोग-प्रतिरोधक क्षमता में कमी और वृद्धि दर में गिरावट का कारण बन सकता है।

5. आहार धीरे-धीरे बदलें

नया आहार शुरू करते समय उसे पुराने आहार के साथ मिलाकर चरणबद्ध तरीके से देना चाहिए। सामान्यतः 5–7 दिनों की अवधि में नए आहार की मात्रा धीरे-धीरे बढ़ाई जा सकती है, ताकि मछलियाँ उसके आकार, गंध, स्वाद, बनावट और पोषक संरचना के अनुसार अनुकूलित हो सकें। आहार में अचानक परिवर्तन करने से मछलियों में तनाव उत्पन्न हो सकता है तथा वे कुछ समय तक आहार कम ग्रहण कर सकती हैं। इसलिए नए आहार को क्रमिक रूप से अपनाना मछलियों की भूख, पाचन क्रिया और सामान्य वृद्धि के लिए लाभदायक होता है।

6. मछली के आकार और बायोमास के अनुसार आहार दें

मछलियों को आहार उनकी प्रजाति, औसत शरीर भार, आकार, कुल बायोमास, जल तापमान और आहार ग्रहण करने की सक्रियता के आधार पर देना चाहिए। आहार की मात्रा समय-समय पर मछलियों की वृद्धि और बायोमास के अनुसार समायोजित करनी चाहिए। आवश्यकता से अधिक आहार देने से बचना चाहिए, क्योंकि बचा हुआ आहार जल में जैविक भार, अमोनिया और नाइट्राइट के स्तर को बढ़ाकर जल गुणवत्ता को खराब कर सकता है। आहार खपत की निगरानी के लिए फीडिंग ट्रे या निर्धारित फीडिंग क्षेत्र का उपयोग करना उपयोगी होता है, जिससे मछलियों की भूख, स्वास्थ्य स्थिति और जल गुणवत्ता का बेहतर आकलन किया जा सकता है।

प्रतिदिन आहार की मात्रा = कुल मछली बायोमास × आहार दर (%) / 100

जहाँ,

कुल मछली बायोमास = मछलियों की कुल संख्या × औसत शरीर वजन

7. मछलियों के स्वास्थ्य का निरीक्षण करें

आहार देते समय प्रतिदिन मछलियों के व्यवहार, सक्रियता और बाहरी लक्षणों का सावधानीपूर्वक निरीक्षण करना चाहिए। यदि मछलियाँ सुस्त दिखाई दें, आहार कम ग्रहण करें, असामान्य रूप से तैरें, जल की सतह पर अधिक समय बिताएँ, शरीर पर घाव या लाल धब्बे दिखाई दें, रंग में परिवर्तन हो, पंख गलने लगें या मृत्यु दर बढ़ने लगे, तो यह रोग या परजीवी संक्रमण का संकेत हो सकता है। ऐसी स्थिति में जल गुणवत्ता की जाँच करनी चाहिए तथा आवश्यकता अनुसार रोगग्रस्त मछलियों का नमूना लेकर मत्स्य रोग विशेषज्ञ या संबंधित वैज्ञानिक से परामर्श लेना चाहिए।

8. तनाव कम करें

मछलियों में तनाव कम करने के लिए, अनावश्यक जाल लगाना, पकड़ना, बार-बार सैंपलिंग करना या उन्हें अधिक परेशान करना कम से कम करना चाहिए। स्टॉकिंग, ग्रेडिंग, सैंपलिंग या परिवहन के दौरान मछलियों में शारीरिक तनाव उत्पन्न हो सकता है, जिससे उनकी भूख, सक्रियता और रोग-प्रतिरोधक क्षमता प्रभावित होती है। ऐसी गतिविधियों के बाद मछलियों को नए वातावरण के अनुसार सामान्य होने के लिए पर्याप्त समय देना चाहिए। इस अवधि में आहार को धीरे-धीरे और कम मात्रा में शुरू करना चाहिए तथा जल गुणवत्ता, विशेषकर घुलित ऑक्सीजन, तापमान और pH की नियमित निगरानी करनी चाहिए।

9. उचित स्टॉकिंग घनत्व रखें

मछली की प्रजाति, तालाब के आकार, जल की उपलब्धता, जल गुणवत्ता, पालन प्रणाली और प्रबंधन क्षमता के अनुसार उचित स्टॉकिंग घनत्व बनाए रखना चाहिए। अत्यधिक स्टॉकिंग से मछलियों के बीच आहार, स्थान और घुलित ऑक्सीजन के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ जाती है, जिससे तनाव, धीमी वृद्धि, रोगों का प्रसार और आहार ग्रहण में कमी हो सकती है। इसलिए अधिक स्टॉकिंग से बचना चाहिए तथा समय-समय पर मछलियों की वृद्धि, बायोमास और जल गुणवत्ता के आधार पर स्टॉकिंग घनत्व एवं आहार प्रबंधन को समायोजित करना चाहिए।

10. प्रोबायोटिक्स और स्वास्थ्य पूरक का उपयोग करें

मछलियों के बेहतर स्वास्थ्य, पाचन क्षमता और रोग-प्रतिरोधक क्षमता को बनाए रखने के लिए प्रोबायोटिक्स, विटामिन, खनिज तथा इम्यूनोस्टिमुलेंट्स का उपयोग लाभकारी हो सकता है। प्रोबायोटिक्स आंतों में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाकर पाचन क्रिया, पोषक तत्वों के अवशोषण और आहार उपयोगिता में सुधार कर सकते हैं। विटामिन और खनिज मछलियों की सामान्य शारीरिक क्रियाओं, वृद्धि, प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया और तनाव सहनशीलता के लिए आवश्यक होते हैं। इम्यूनोस्टिमुलेंट्स मछलियों की प्राकृतिक रोग- प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक हो सकते हैं। इनका उपयोग मछली की प्रजाति, आकार, पालन प्रणाली, स्वास्थ्य स्थिति और जल गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए विशेषज्ञ या मत्स्य वैज्ञानिक की सलाह के अनुसार करना चाहिए।

निष्कर्ष

मछलियों का आहार न खाना या आहार ग्रहण में कमी मत्स्य पालन में एक महत्वपूर्ण चेतावनी संकेत है, जो पालन प्रणाली में जल गुणवत्ता, पोषण, स्वास्थ्य या पर्यावरणीय असंतुलन को दर्शा सकता है। इसके प्रमुख कारणों में खराब जल गुणवत्ता, घुलित ऑक्सीजन की कमी, अनुपयुक्त तापमान, अमोनिया एवं नाइट्राइट की अधिकता, खराब या दूषित आहार, रोग एवं परजीवी संक्रमण, हैंडलिंग या परिवहन तनाव, अधिक स्टॉकिंग घनत्व तथा अचानक पर्यावरणीय परिवर्तन शामिल हैं। ऐसी स्थिति में सबसे पहले जल गुणवत्ता के प्रमुख मानकों, जैसे घुलित ऑक्सीजन, तापमान, pH, अमोनिया और नाइट्राइट की जाँच करनी चाहिए। उचित आहार प्रबंधन, स्वच्छ एवं संतुलित जल पर्यावरण, गुणवत्तापूर्ण आहार, नियमित स्वास्थ्य निगरानी और तनाव कम करने वाले उपाय अपनाकर मछलियों की सामान्य आहार ग्रहण गतिविधि को पुनः बहाल किया जा सकता है। नियमित निरीक्षण, वैज्ञानिक प्रबंधन और समय पर सुधारात्मक कार्रवाई स्वस्थ मछलियों, बेहतर वृद्धि, उच्च जीवितता और अधिक उत्पादन के लिए अत्यंत आवश्यक हैं।

*

राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म: अंकीय नवाचार के माध्यम से भारत के मत्स्य क्षेत्र का रूपांतरण

महेश शर्मा , डॉ. स्वदेश प्रकाश एवं सतेन्द्र सिंह

परिचय

भारत लगभग 11,000 किलोमीटर लंबी समुद्री तटरेखा, विशाल विशेष आर्थिक क्षेत्र तथा समृद्ध अंतर्देशीय जल संसाधनों से संपन्न देश है, जिसके कारण वह विश्व के अग्रणी मत्स्य उत्पादक देशों में अपनी विशिष्ट पहचान रखता है। भारतीय मत्स्य क्षेत्र आज देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन, निर्यात आय और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वर्तमान में भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा जलीय कृषि उत्पादक तथा तीसरा सबसे बड़ा मत्स्य उत्पादक देश है, जो वैश्विक मत्स्य उत्पादन में लगभग 8 प्रतिशत योगदान देता है। यह क्षेत्र देश में 3 करोड़ से अधिक लोगों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार उपलब्ध कराता है तथा करोड़ों लोगों के लिए सस्ते, पौष्टिक और उच्च गुणवत्ता वाले पशु प्रोटीन का महत्वपूर्ण स्रोत बना हुआ है। इसके साथ ही, भारत का समुद्री खाद्य निर्यात भी निरंतर नई ऊँचाइयों को छू रहा है। हाल के वर्षों में इसका मूल्य ₹60,000 करोड़ से अधिक पहुंच चुका है, जिसमें हिमीकृत झींगों का सर्वाधिक योगदान रहा है।

चित्र : राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म

भारतीय मत्स्य क्षेत्र ने पिछले कुछ वर्षों में उल्लेखनीय प्रगति दर्ज की है, लेकिन इसके बावजूद यह अनेक संरचनात्मक और तकनीकी चुनौतियों का सामना कर रहा है। छोटे एवं पारंपरिक मछुआरे तथा मत्स्य कृषक आज भी सीमित बाजार पहुंच, बिचौलियों पर अत्यधिक निर्भरता, वास्तविक समय की जानकारी के अभाव, रोग प्रकोप, मौसम संबंधी अनिश्चितताओं तथा कमजोर अनुरेखणीयता प्रणाली जैसी समस्याओं से जूझ रहे हैं। विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभावों ने समुद्री मत्स्य पालन को और अधिक जोखिमपूर्ण बना दिया है। समय पर मौसम संबंधी चेतावनियाँ न मिलने के कारण मछुआरों की आजीविका और सुरक्षा दोनों प्रभावित होती हैं। वहीं, जलीय कृषि क्षेत्र में रोगों के अचानक फैलने और प्रभावी प्रारंभिक चेतावनी तंत्र के अभाव के कारण मत्स्य कृषकों को भारी आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, बिखरी हुई आधार सामग्री, कमजोर डिजिटल संपर्क व्यवस्था तथा पारंपरिक प्रबंधन प्रणाली ने इस क्षेत्र की पारदर्शिता और कार्यक्षमता को भी सीमित किया है। इन परिस्थितियों ने भारतीय मत्स्य क्षेत्र में व्यापक डिजिटल परिवर्तन की आवश्यकता को अत्यंत महत्वपूर्ण बना दिया है।

इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने मत्स्य विभाग के अंतर्गत प्रधानमंत्री मत्स्य किसान समृद्धि सह-योजना के तहत राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म की शुरुआत की है। यह प्लेटफ़ॉर्म एक केंद्रीकृत डिजिटल तंत्र के रूप में कार्य करता है, जिसका उद्देश्य देश की संपूर्ण मत्स्य मूल्य श्रृंखला को अधिक संगठित, आधुनिक, पारदर्शी और सशक्त बनाना है। राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म मछुआरों, मत्स्य कृषकों, सहकारी समितियों, हैचरी संचालकों, व्यापारियों, प्रोसेसरों, वित्तीय संस्थानों तथा नीति निर्माताओं को एकीकृत डिजिटल प्रणाली से जोड़ता है। इसके माध्यम से सरकार मत्स्य प्रशासन को अधिक प्रभावी बनाते हुए पारदर्शिता, कार्यकुशलता, वित्तीय समावेशन तथा सतत संसाधन प्रबंधन को बढ़ावा दे रही है।

राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक मछुआरों और मत्स्य कृषकों को कार्य-आधारित डिजिटल पहचान प्रदान करना है। इस पहल के माध्यम से पंजीकृत हितधारकों को राष्ट्रीय मत्स्य आधार सामग्री में औपचारिक पहचान मिलती है, जिससे वे सरकारी योजनाओं, सब्सिडी, संस्थागत ऋण, बीमा सुविधाओं तथा विभिन्न कल्याणकारी कार्यक्रमों का लाभ आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। उपलब्ध रिपोर्टों के अनुसार, इस प्लेटफ़ॉर्म पर अब तक 31.5 लाख से अधिक मछुआरे और मत्स्य कृषक तथा 20,000 से अधिक मत्स्य उद्यम, सहकारी समितियाँ और मत्स्य कृषक उत्पादक संगठन पंजीकृत हो चुके हैं। यह व्यापक डिजिटल एकीकरण भारतीय मत्स्य क्षेत्र में इस प्लेटफ़ॉर्म की बढ़ती स्वीकार्यता और महत्व को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।

राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यह वंचित मत्स्य समुदायों के लिए वित्तीय और बाजार पहुंच को सुदृढ़ बनाता है। पहले अनेक मछुआरे ऋण प्राप्त करने के लिए अनौपचारिक साहूकारों और स्थानीय एजेंटों पर निर्भर रहते थे, जिसके कारण उन्हें आर्थिक शोषण और कर्ज के जाल का सामना करना पड़ता था। अब यह प्लेटफ़ॉर्म उन्हें सीधे संस्थागत बैंकिंग प्रणाली से जोड़ रहा है। इसके माध्यम से हजारों ऋण आवेदन औपचारिक वित्तीय सहायता के लिए बैंकों तक भेजे जा चुके हैं। साथ ही, यह मंच जलीय कृषि बीमा योजनाओं और प्रदर्शन आधारित प्रोत्साहनों को भी बढ़ावा देता है, जिससे मत्स्य पालन और फसल हानि से जुड़े आर्थिक जोखिमों में कमी आती है।

यह प्लेटफ़ॉर्म ई-नीलामी प्रणाली, व्यवसाय-से-व्यवसाय ई-कॉमर्स मॉड्यूल तथा अनुरेखणीयता ढांचे जैसे उन्नत डिजिटल उपकरणों के माध्यम से मत्स्य प्रशासन को और अधिक प्रभावी बना रहा है। वैश्विक समुद्री खाद्य व्यापार में गुणवत्ता, स्थिरता और खाद्य सुरक्षा के प्रमाण की मांग निरंतर बढ़ रही है। राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म की अनुरेखणीयता प्रणाली मछली और मत्स्य उत्पादों को "कैच टू कंज्यूमर" अर्थात पकड़ से उपभोक्ता तक ट्रैक करने में सहायता करती है। इससे पारदर्शिता बढ़ती है और भारत की वैश्विक निर्यात प्रतिस्पर्धा को मजबूती मिलती है। इसके अतिरिक्त,

प्लेटफ़ॉर्म से जुड़े डिजिटल बाजार बिचौलियों की भूमिका को कम करके मछुआरों को उनके उत्पादों का बेहतर मूल्य दिलाने में सहायता करते हैं।

राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म भारत की सतत और सुदृढ़ ब्लू इकोनॉमी की परिकल्पना को भी मजबूती प्रदान कर रहा है। आधार सामग्री आधारित मत्स्य प्रबंधन, संसाधनों के कुशल उपयोग और जलवायु- सहिष्णु पद्धतियों को बढ़ावा देकर यह मंच दीर्घकालिक स्थिरता के लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। साथ ही, यह नीति निर्माताओं को वैज्ञानिक और प्रमाण-आधारित निर्णय लेने में सहायता प्रदान करता है तथा मछुआरों को समय पर जानकारी और संस्थागत सहयोग उपलब्ध कराकर उन्हें सशक्त बना रहा है।

राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म की प्रमुख विशेषताएँ

1. डिजिटल पंजीकरण और पहचान प्रणाली – यह प्लेटफ़ॉर्म की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक डिजिटल पंजीकरण और पहचान प्रणाली है। पहले मत्स्य क्षेत्र का बड़ा हिस्सा असंगठित था, जिसके कारण लाखों मछुआरे और मत्स्य कृषक सरकारी योजनाओं और संस्थागत सहायता से वंचित रह जाते थे। अब यह प्लेटफ़ॉर्म मछुआरों, मत्स्य कृषकों, हैचरी संचालकों, नाविकों और अन्य हितधारकों का डिजिटल पंजीकरण करके उन्हें कार्य-आधारित डिजिटल पहचान प्रदान करता है। इससे एक विश्वसनीय राष्ट्रीय आधार सामग्री तैयार होगी और योजनाओं का लाभ सही लाभार्थियों तक आसानी से पहुंचेगा।

2. वास्तविक समय आधार सामग्री प्रबंधन – यह प्लेटफ़ॉर्म वास्तविक समय आधार सामग्री प्रबंधन के माध्यम से मत्स्य प्रशासन को अधिक प्रभावी और आधुनिक बनाता है। यह प्लेटफ़ॉर्म समुद्री, अंतर्देशीय और जलाशय आधारित मत्स्य उत्पादन से संबंधित आधार सामग्री को एकत्रित और विश्लेषित करता है। जलीय कृषि गतिविधियों में यह स्टॉकिंग घनत्व, वृद्धि चक्र और उत्पादन अवधि की निगरानी करता है। साथ ही, भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS) की सहायता से जल संसाधनों का मानचित्रण भी किया जाता है। यह केंद्रीकृत आधार सामग्री नीति निर्माताओं को संसाधन प्रबंधन और सतत मत्स्य विकास से जुड़े बेहतर निर्णय लेने में सहायता प्रदान करती है।

3. सलाहकारी एवं सूचना सेवाएँ – यह प्लेटफ़ॉर्म मछुआरों और मत्स्य कृषकों को समय पर आवश्यक जानकारी और सलाह भी उपलब्ध कराता है। राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म मौसम चेतावनियाँ, तूफान अलर्ट, रोग प्रकोप संबंधी सूचनाएँ और जल गुणवत्ता में बदलाव की जानकारी सीधे हितधारकों तक पहुंचाता है। इसके अलावा, यह वैज्ञानिक संस्थानों द्वारा विकसित सर्वोत्तम प्रबंधन पद्धतियों का प्रसार करता है, जिससे किसान बेहतर प्रबंधन तकनीकों को अपनाकर उत्पादन बढ़ा सकते हैं और नुकसान कम कर सकते हैं।

4. बाजार संपर्क और डिजिटल विपणन – यह प्लेटफ़ॉर्म की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता बाजार संपर्क को मजबूत बनाना है। यह प्लेटफ़ॉर्म डिजिटल मार्केटप्लेस के माध्यम से मछुआरों और मत्स्य कृषकों को विभिन्न बाजारों की वास्तविक समय की मूल्य जानकारी प्रदान करता है। इससे बिचौलियों पर निर्भरता कम होती है और उत्पादकों को अपने उत्पाद का बेहतर मूल्य प्राप्त होता है। यह मंच किसानों, थोक खरीदारों, निर्यातकों और खुदरा व्यापारियों को सीधे जोड़कर आपूर्ति श्रृंखला को अधिक पारदर्शी और प्रभावी बनाता है।

5. अनुरेखणीयता और पारदर्शिता – वैश्विक समुद्री खाद्य व्यापार में गुणवत्ता और खाद्य सुरक्षा की बढ़ती मांग को देखते हुए यह प्लेटफ़ॉर्म अनुरेखणीयता और पारदर्शिता को बढ़ावा देता है। यह प्लेटफ़ॉर्म मछली और मत्स्य उत्पादों को "कैच टू कंज्यूमर" अर्थात पकड़ से उपभोक्ता तक ट्रैक करने की सुविधा प्रदान करता है। उत्पादन, प्रसंस्करण, भंडारण और परिवहन से जुड़ी जानकारी डिजिटल रूप से दर्ज की जाती है, जिससे उत्पाद की गुणवत्ता, सुरक्षा और स्थिरता सुनिश्चित होती है तथा भारतीय समुद्री खाद्य उत्पादों की वैश्विक बाजार में विश्वसनीयता बढ़ती है।

6. सरकारी योजनाओं के साथ एकीकरण – यह प्लेटफ़ॉर्म केंद्र और राज्य सरकारों की विभिन्न योजनाओं के साथ एकीकृत होकर कार्य करता है। यह प्लेटफ़ॉर्म प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना, जैसी योजनाओं के तहत सब्सिडी वितरण, लाभार्थी प्रबंधन और वित्तीय सहायता की प्रक्रिया को सरल और पारदर्शी बनाता है। डिजिटल सत्यापन और आधार सामग्री प्रबंधन के माध्यम से यह सुनिश्चित किया जाता है कि सरकारी सहायता सही लाभार्थियों तक समय पर पहुंचे और योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन हो सके।

राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म के लाभ

1. मत्स्य क्षेत्र का सशक्तिकरण और औपचारिककरण – यह प्लेटफ़ॉर्म पारंपरिक रूप से असंगठित मत्स्य क्षेत्र को संगठित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यह प्लेटफ़ॉर्म मछुआरों, मत्स्य कृषकों और अन्य संबंधित श्रमिकों को विशिष्ट डिजिटल पहचान प्रदान करता है। इसके माध्यम से वे संस्थागत ऋण, बीमा, सब्सिडी तथा विभिन्न सरकारी कल्याणकारी योजनाओं तक आसानी से पहुंच बना सकते हैं। साथ ही, यह प्रणाली उन्हें अनौपचारिक साहूकारों और बिचौलियों पर निर्भरता से भी मुक्त करने में सहायता करती है।

2. सटीक जलीय कृषि के माध्यम से उत्पादकता में वृद्धि – यह प्लेटफ़ॉर्म जलीय कृषि में वास्तविक समय पर आधारित सलाह उपलब्ध कराकर उत्पादन क्षमता को बढ़ाता है। यह प्लेटफ़ॉर्म जल गुणवत्ता, मौसम की स्थिति, रोग प्रकोप और वैज्ञानिक मत्स्य पालन पद्धतियों से संबंधित जानकारी समय पर प्रदान करता है। प्रारंभिक चेतावनियाँ और बेहतर प्रबंधन तकनीकें किसानों को फसल हानि कम करने, कार्यक्षमता बढ़ाने और अधिक लाभ अर्जित करने में सहायता करती हैं।

3. बेहतर बाजार पहुंच और आर्थिक लाभ – यह प्लेटफ़ॉर्म मछुआरों और मत्स्य कृषकों को वास्तविक समय की मूल्य जानकारी तथा डिजिटल बाजार सुविधाएँ प्रदान करके बाजार संपर्क को मजबूत बनाता है। राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म उत्पादकों को सीधे खरीदारों और निर्यातकों से जोड़ता है, जिससे बिचौलियों की भूमिका कम होती है और उत्पादकों को उनके उत्पाद का उचित मूल्य प्राप्त होता है। इसके साथ ही, यह कटाई के बाद होने वाले नुकसान को कम करके किसानों की आय बढ़ाने में भी सहायता करता है।

4. वैश्विक व्यापार और अनुरेखणीयता को मजबूती – यह प्लेटफ़ॉर्म समुद्री खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में पारदर्शिता और अनुरेखणीयता को बढ़ावा देता है। यह प्लेटफ़ॉर्म मछली और मत्स्य उत्पादों को उत्पादन से लेकर उपभोक्ता तक ट्रैक करता है, जिससे खाद्य सुरक्षा और गुणवत्ता सुनिश्चित होती है। इससे निर्यात गुणवत्ता में सुधार होता है, अंतरराष्ट्रीय बाजारों में उत्पाद अस्वीकृति की संभावना कम होती है और भारतीय समुद्री खाद्य उत्पादों की वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता मजबूत होती है।

5. आधार सामग्री आधारित प्रशासन और नीतिगत क्रियान्वयन – यह प्लेटफ़ॉर्म वास्तविक समय की मत्स्य आधार सामग्री और डिजिटल निगरानी प्रणाली के माध्यम से प्रशासन को अधिक प्रभावी बनाता है। सटीक जानकारी नीति निर्माताओं को संसाधन प्रबंधन, संरक्षण प्रयासों और प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना (PMMSY) जैसी योजनाओं के पारदर्शी क्रियान्वयन में सहायता प्रदान करती है।

राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म की चुनौतियाँ

1. डिजिटल अशिक्षा और तकनीकी असमानता – यह प्लेटफ़ॉर्म के सामने सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक पारंपरिक मछुआरों और छोटे मत्स्य कृषकों में डिजिटल साक्षरता की कमी है। ग्रामीण और तटीय क्षेत्रों के अनेक लोग स्मार्टफोन, इंटरनेट और तकनीकी ज्ञान से वंचित हैं। उचित प्रशिक्षण और तकनीकी सहयोग के बिना उनके लिए डिजिटल सेवाओं का पूर्ण उपयोग करना कठिन हो जाता है।

2. कमजोर कनेक्टिविटी और आधारभूत संरचना - देश के कई तटीय और दूरस्थ मत्स्य क्षेत्रों में विश्वसनीय इंटरनेट और बिजली सुविधाओं की कमी बनी हुई है। समुद्री मछुआरे अक्सर ऐसे क्षेत्रों में कार्य करते हैं जहां नेटवर्क उपलब्ध नहीं होता, जिससे उन्हें वास्तविक समय की मौसम चेतावनियाँ, बाजार जानकारी और आपातकालीन सेवाएँ समय पर नहीं मिल पातीं।

3. आधार सामग्री की सटीकता और डिजिटल अपनाने में संकोच - भारत के विविध मत्स्य प्रणालियों से मानकीकृत और सटीक आधार सामग्री एकत्रित करना एक जटिल कार्य है। इसके अलावा, कई मछुआरे और व्यापारी कराधान, नियमों और पारंपरिक अधिकारों के नुकसान की आशंका के कारण डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म से जुड़ने में संकोच करते हैं, जिससे डिजिटल पंजीकरण और जानकारी की शुद्धता प्रभावित होती है।

4. राज्यों और संस्थानों के बीच समन्वय की समस्या – भारत में मत्स्य क्षेत्र राज्य सूची का विषय है, इसलिए यह प्लेटफ़ॉर्म का क्रियान्वयन विभिन्न राज्यों में उनकी संसाधन क्षमता और तकनीकी तैयारी के अनुसार अलग-अलग स्तर पर होता है। इसके प्रभावी संचालन के लिए विभिन्न सरकारी विभागों, अनुसंधान संस्थानों, बैंकों और मत्स्य एजेंसियों के बीच बेहतर समन्वय आवश्यक है, जो कई बार प्रशासनिक और तकनीकी चुनौतियाँ उत्पन्न करता है।

5. कोल्ड चेन और वित्तीय चुनौतियाँ – हालांकि यह प्लेटफ़ॉर्म डिजिटल बाजार संपर्क स्थापित करता है, फिर भी समुद्री खाद्य उत्पादों के लिए पर्याप्त कोल्ड स्टोरेज और परिवहन सुविधाओं की कमी एक बड़ी समस्या बनी हुई है। डिजिटल भुगतान में देरी, विवाद समाधान की जटिलताएँ और परिवहन हानि के लिए सस्ती बीमा सुविधाओं की कमी भी छोटे मछुआरों और मत्स्य कृषकों के बीच डिजिटल प्रणाली के प्रति विश्वास को कम करती हैं।

निष्कर्ष

राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म (राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म) भारत के मत्स्य क्षेत्र के डिजिटल परिवर्तन की दिशा में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में उभरकर सामने आया है। यह प्लेटफ़ॉर्म पारंपरिक और बिखरी हुई व्यवस्थाओं को एकीकृत, पारदर्शी और आधार सामग्री आधारित प्रणाली में परिवर्तित कर रहा है। केंद्रीकृत डिजिटल तंत्र के माध्यम से राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म मत्स्य प्रशासन को अधिक प्रभावी बनाता है, सेवा वितरण को मजबूत करता है तथा मत्स्य मूल्य श्रृंखला में वास्तविक समय पर निर्णय लेने की क्षमता विकसित करता है।

हालांकि, राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म की वास्तविक सफलता तभी सुनिश्चित होगी जब इसका लाभ छोटे मछुआरों, पारंपरिक मत्स्य समुदायों और ग्रामीण मत्स्य कृषकों तक समान रूप से पहुंचे। इसके लिए डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों, स्थानीय भाषाओं में तकनीकी सहायता और सरल डिजिटल सुविधाओं को बढ़ावा देना आवश्यक है। साथ ही, सरकार, वैज्ञानिक संस्थानों, स्टार्टअप्स, वित्तीय संस्थाओं और मछुआरा समुदायों के बीच मजबूत सहयोग स्थापित करके ही इस प्लेटफ़ॉर्म की दीर्घकालिक सफलता सुनिश्चित की जा सकती है।

राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म केवल एक तकनीकी पहल नहीं है, बल्कि यह भारतीय मत्स्य क्षेत्र के सतत आधुनिकीकरण का एक प्रभावी मॉडल भी है। यह मंच अनुरेखणीयता, बेहतर बाजार पहुंच, सटीक जलीय कृषि और जिम्मेदार संसाधन प्रबंधन को बढ़ावा देकर मत्स्य क्षेत्र को अधिक सशक्त और टिकाऊ बना रहा है। भारत जब अपनी ब्लू इकोनॉमी को मजबूत करने की दिशा में आगे बढ़ रहा है, तब राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म करोड़ों मछुआरों और मत्स्य कृषकों की आजीविका सुधारने, समुद्री खाद्य स्थिरता बढ़ाने और एक सुरक्षित एवं समृद्ध भविष्य सुनिश्चित करने की क्षमता रखता है।

*

जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में तापीय तनाव : कारण, परिणाम और नियंत्रण उपाय

विद्या श्री भारती, अनिका नामदेव, शमिका शांताराम सावंत, ताओ कारा एवं विनोद कुमार यादव

परिचय

हमारे दैनिक जीवन में, हम अक्सर कई प्रकार के पारंपरिक प्रदूषकों जैसे रसायनों, कणों और प्लास्टिक के बारे में सुनते हैं, जिन पर बहुत अधिक ध्यान दिया जा रहा है और तापीय तनाव को अनदेखा किया जा रहा है। तापीय स्वास्थ्य सभी जीवों, विशेष रूप से जलीय जीवों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जलीय जीव पूरी तरह से पोइकिलोथर्मिक होते हैं, अर्थात, उनके शरीर का तापमान आसपास के तापमान के समान होता है; अचानक तापमान परिवर्तन उनके लिए आपदा का कारण बन सकता है। यही कारण है कि तापीय तनाव को अक्सर आपदा का कारण माना जाता है। तापीय प्रदूषण को इसके दूरगामी परिणामों के कारण एक महत्वपूर्ण पर्यावरणीय खतरा माना जाता है। इसे कई कारकों के कारण किसी जल निकाय के तापमान में अचानक वृद्धि के रूप में परिभाषित किया जाता है। तापीय होमियोस्टेसिस को श्वसन, एंजाइम गतिविधि, चयापचय, वृद्धि, प्रजनन और समग्र स्वास्थ्य जैसी कई शारीरिक प्रक्रियाओं के एक महत्वपूर्ण निर्धारक के रूप में मान्यता प्राप्त है। प्रत्येक जीव के लिए एक न्यूनतम और अधिकतम तापमान सहनशीलता सीमा होती है, जिसके नीचे और ऊपर असहिष्णुता का क्षेत्र होता है, जहाँ जीव के लिए जीवित रहना मुश्किल हो जाता है।

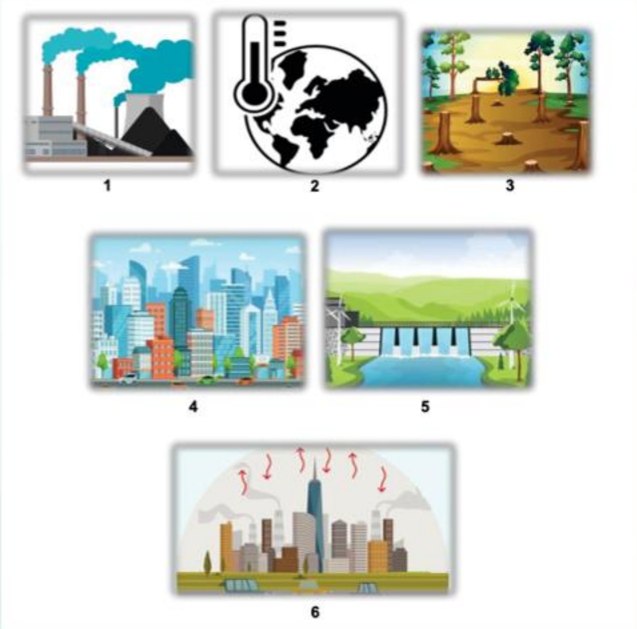

चित्र: तापीय प्रदूषण के कारण
(1)बिजली संयंत्र और औद्योगिक कारखाने (2) जलवायु परिवर्तन (3) वनों की कटाई और मृदा अपरदन (4) शहरी और सतही अपवाह (5) धारा प्रवाह या झील के आयतन में कमी (6) शहरी ताप द्वीप

तापीय तनाव के कारण

जलीय वातावरण में तापीय प्रदूषण प्राकृतिक और मानव-प्रेरित कारकों जैसे बिजली संयंत्र, औद्योगिक कारखाने, जलवायु परिवर्तन, शहरी और सतही अपवाह, वनों की कटाई, मृदा अपरदन और जलधाराओं के प्रवाह में कमी से उत्पन्न होता है। इन सबमें, सबसे बड़ा हिस्सा बिजली संयंत्रों और औद्योगिक कारखानों का है, जो अपने जनरेटर और मशीनरी को ठंडा करने के लिए नदियों और नालों से पानी निकालते हैं और गर्म पानी को वापस जल निकायों में छोड़ देते हैं, जिससे मीठे पानी के आवासों का तापमान बढ़ जाता है, जिससे पहले मौजूद नाजुक संतुलन बिगड़ जाता है। जलीय वातावरण में तापीय प्रदूषण परमाणु और तापीय बिजली संयंत्रों के संचालन का एक अपरिहार्य परिणाम है, इसाखोव एट अल., (2021)। तापीय तनाव के बढ़ते कारणों में से एक शहरी और सतही अपवाह है। बढ़ती आबादी की मांग को पूरा करने के लिए, शहरीकरण तेज़ी से बढ़ रहा है, जिसके कारण जंगलों का सफ़ाया हो रहा है, डामर, कंक्रीट और सीमेंट की इमारतें बनाई जा रही हैं, जो अत्यधिक अभेद्य हैं और अत्यधिक गर्मी को अवशोषित करती हैं, स्व-उत्पन्न गर्मी से निपटने के लिए रेफ्रिजरेटर, एयर कंडीशनर का व्यापक उपयोग एक ऐसा क्षेत्र बना रहा है जहाँ तापमान उपनगरीय और ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में कई गुना अधिक। इस प्रभाव को शहरी ऊष्मा द्वीप (UHI) प्रभाव के रूप में जाना जाता है। UHI आस-पास के जल निकायों को प्रभावित करता है क्योंकि भारी बारिश होने पर शहरी और सतही अपवाह का गर्म पानी इन जल निकायों में बह जाता है, जिससे जल की गुणवत्ता ख़राब हो जाती है।

परिणाम

जलीय वातावरण में, तापीय प्रदूषण का जैविक संगठन के विभिन्न स्तरों पर, व्यक्तिगत जीवों से लेकर संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र तक, स्पष्ट प्रभाव पड़ सकता है। मछलियों और उभयचरों के आवासों में व्यवधान, जैव विविधता पर हानिकारक प्रभाव, शारीरिक संरचना में परिवर्तन, व्यवहार पैटर्न, भोजन की तीव्रता में कमी, साँस लेने में कठिनाई, त्वचा के रंग में परिवर्तन और धातु विषाक्तता में वृद्धि, तापीय व्यवस्था में परिवर्तन के कारण होने वाले कई प्रभावों में से कुछ हैं। अतिरिक्त ऊष्मा कई प्रतिकूल प्रभावों को जन्म दे सकती है। उच्च तापमान के कारण घुलित ऑक्सीजन के स्तर में भारी गिरावट आती है क्योंकि तापमान में वृद्धि ऑक्सीजन की घुलनशीलता को कम कर देती है। संवेदनशील प्रजातियाँ बदलते तापमान से सबसे अधिक प्रभावित होती हैं, जिससे उनका अस्तित्व खतरे में पड़ जाता है। तापमान में तीव्र परिवर्तन तापीय आघात का कारण बन सकता है, जिससे मछलियों की अत्यधिक मृत्यु हो सकती है। तापमान में वृद्धि पानी के गुणों को बदल देती है, जिससे रसायनों की विषाक्तता काफी बढ़ जाती है। पानी की श्यानता और घनत्व भी कम हो जाता है, जिससे प्रदूषकों का फैलाव प्रभावित होता है। तापीय तनाव के कारण घुलित ऑक्सीजन के स्तर में गिरावट आती है। प्रतिपूरक प्रतिक्रिया के रूप में, आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए चयापचय और श्वसन दर में वृद्धि होती है, जिससे रसायनों (भारी धातुओं) का प्रवाह बढ़ जाता है, जिससे रसायनों की जैव उपलब्धता बढ़ जाती है। अध्ययनों से पता चला है कि तापमान में वृद्धि के साथ, सूक्ष्म शैवाल के चयापचय में गड़बड़ी होती है। योंग एट अल. द्वारा उच्च तापमान और तांबे के संपर्क में आने से सूक्ष्म शैवाल सीनेडेसमस

क्वाड्रिकाडा पर पड़ने वाले प्रभावों से संबंधित एक अध्ययन में, (2018) ने निर्धारित किया कि इन कारकों के संयोजन से सूक्ष्म शैवाल के चयापचय में महत्वपूर्ण गड़बड़ी हुई। यह बताया गया है कि उच्च तापमान ज़ूप्लैंकटन में होमियोस्टेसिस को अस्थिर कर सकता है, जिससे प्रोटीन विकृतीकरण और प्रजनन और जीवित रहने की दर में कमी आती है। अध्ययनों से यह भी पता चलता है कि तापमान बढ़ने के साथ, पारे के जैव संचय की दर बढ़ जाती है। तापमान बढ़ने पर एंटीऑक्सीडेंट एंजाइमों की गतिविधि कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त, तापीय प्रदूषण अन्य प्रदूषकों और तनाव कारकों के प्रभाव को बढ़ा सकता है, जिससे इसका पर्यावरणीय प्रभाव और भी बढ़ जाता है। टेक्सेरा एट अल. (2012) ने बताया कि तापीय प्रदूषण बेन्थिक आवरण को संशोधित करता है और उनकी संरचना में परिवर्तन करके और प्रजातियों की समृद्धि को कम करके मत्स्य समुदायों को प्रभावित करता है।

नियंत्रण उपाय

जलीय पारिस्थितिक तंत्र और जीवों दोनों के स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने के लिए तापीय प्रदूषण को कम करना समय की मांग है। तापीय प्रदूषण को कम करने के कई तरीके हैं; शीतलन तालाब उनमें से एक हैं; ये बड़े उथले तालाब या जलाशय हैं जिन्हें तापीय विद्युत संयंत्रों से निकलने वाली ऊष्मा को नष्ट करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। इस कम लागत वाली विधि में अक्सर कम शीतलन दक्षता के कारण अधिक दक्षता की आवश्यकता होती है। इसके बाद कूलिंग टावर आते हैं, ऊँची संरचनाएँ जिनका उपयोग गर्म पानी को ठंडा करने के लिए किया जाता है और जो वाष्पीकरण शीतलन के सिद्धांत पर काम करते हैं। कूलिंग टावर के निर्माण की प्रारंभिक लागत अधिक होती है, लेकिन इसकी शीतलन दक्षता शीतलन तालाबों की तुलना में अधिक होती है। एक अन्य शमन उपाय स्प्रे तालाबों का निर्माण हो सकता है। ये बड़े जलाशय होते हैं जहाँ अत्यधिक गर्म पानी को स्प्रे प्रणाली का उपयोग करके ठंडा किया जाता है। स्प्रे तालाब लागत प्रभावी और संचालित करने में आसान होते हैं; एक नुकसान यह है कि निर्माण के लिए बड़े भू-भाग की आवश्यकता होती है। सह-उत्पादन भी तापीय प्रदूषण की समस्या के समाधान के लिए एक विश्वसनीय समाधान प्रदान करता है। सह-उत्पादन प्रक्रिया वह है जहाँ अपशिष्ट ऊष्मा को जल निकाय में छोड़े जाने के बजाय घरेलू और औद्योगिक तापन के लिए पुन: उपयोग या पुनर्चक्रित किया जा सकता है।

चित्र: शीतलन तालाब

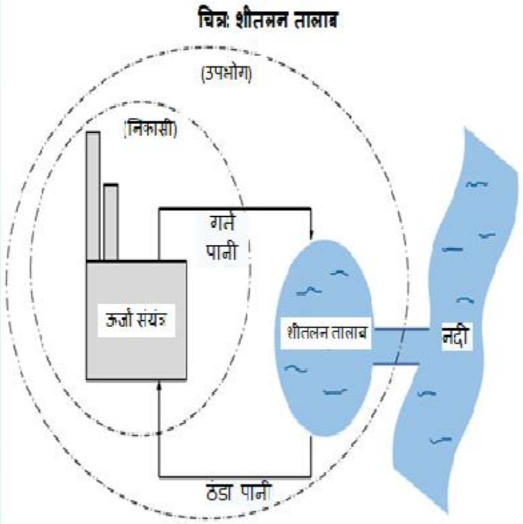

चित्र: शीतलन टॉवर

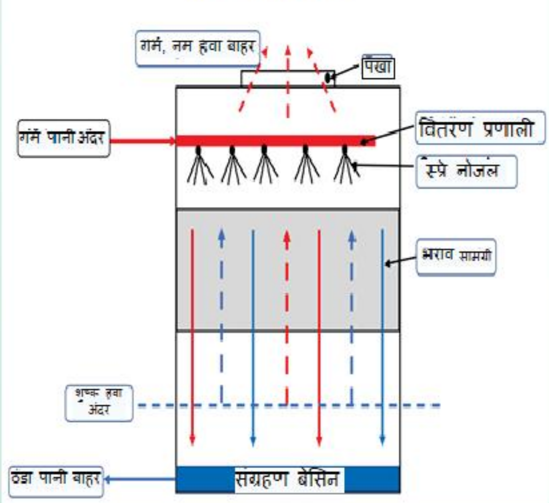

चित्र: सह-उत्पादन

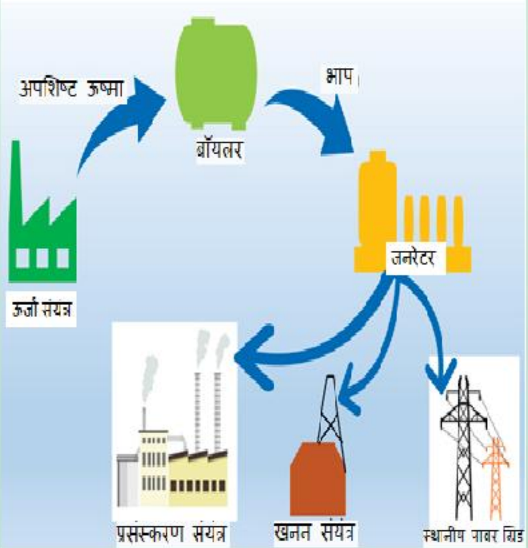

चित्र: स्प्रे तालाब

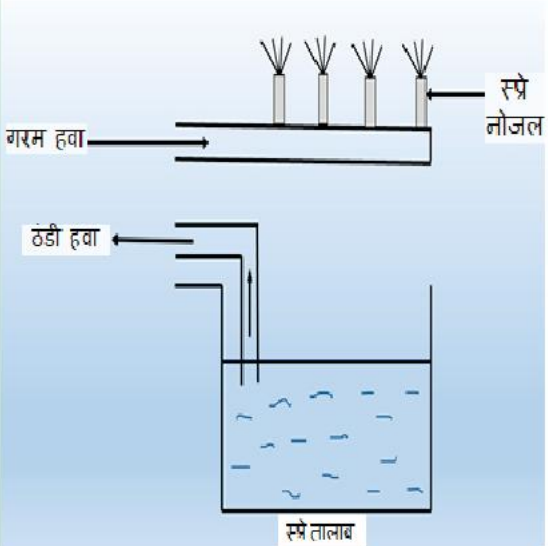

आगे की राह

तीव्र और दीर्घकालिक दोनों प्रकार के तापमान परिवर्तन जलीय जीवन पर गहरा प्रभाव डाल सकते हैं, जो पारिस्थितिक तंत्रों के स्वास्थ्य और स्थिरता को सुनिश्चित करने के लिए जलीय वातावरण में तापीय स्थितियों को समझने और प्रबंधित करने के महत्व को रेखांकित करता है। तापीय प्रदूषण जलीय पारिस्थितिक तंत्रों के लिए गंभीर रूप से खतरा पैदा करता है, जैव विविधता, आवास अखंडता और स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाता है। जलवायु परिवर्तन, शहरीकरण और औद्योगिक प्रथाओं के कारण बढ़ते तापमान प्रजातियों के वितरण को बाधित करते हैं, खाद्य जाल को बदलते हैं और बीमारियों के प्रसार को बढ़ाते हैं। इस चुनौती से निपटने के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण आवश्यक है, जिसमें पारिस्थितिक बहाली, स्थायी प्रबंधन प्रथाएँ और मजबूत सामुदायिक भागीदारी शामिल हो। सक्रिय उपायों को लागू करके, जैसे कि नदी तटीय आवासों को बहाल करना, जल गुणवत्ता में सुधार करना और जन जागरूकता को बढ़ावा देना, हम तापीय प्रदूषण के प्रभावों को कम कर सकते हैं। सरकारों, संगठनों और स्थानीय समुदायों के बीच सहयोगात्मक प्रयास जलीय पारिस्थितिक तंत्रों की रक्षा करेंगे, उनकी लचीलापन सुनिश्चित करेंगे और प्रकृति और मानव कल्याण के लिए उनकी महत्वपूर्ण सेवाओं को संरक्षित करेंगे। ठोस कार्रवाई और प्रतिबद्धता के माध्यम से, हम अपने जल निकायों को तापीय प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभावों से बचा सकते हैं और भावी पीढ़ियों के लिए एक स्वस्थ, अधिक टिकाऊ पर्यावरण को बढ़ावा दे सकते हैं।

निष्कर्ष

जलीय पारिस्थितिक तंत्र की सुरक्षा और जलीय जीवों के स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने के लिए तापीय प्रदूषण को कम करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। शीतलन तालाब, शीतलन मीनारें, छिड़काव तालाब, कृत्रिम झीलें और सह उत्पादन ऐसे कई निवारण उपाय हैं जिन्हें अपनाया जा सकता है। उद्योगों, नीति निर्माताओं और पर्यावरण संगठनों के बीच सहयोगात्मक प्रयास प्रभावी समाधान तैयार करने और एक स्वस्थ पर्यावरण को बढ़ावा देने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

संदर्भ

- इस्साखोव, ए. और झंडौलेट, वाई., 2021. तटीय बिजली संयंत्र से जलीय पर्यावरण पर तापीय प्रदूषण क्षेत्र: संख्यात्मक अध्ययन। थर्मल इंजीनियरिंग में केस स्टडीज, 25, पृष्ठ 100901।
- लैंगफोर्ड, टी., 1990. तापीय उत्सर्जन के पारिस्थितिक प्रभाव। स्प्रिंगर साइंस एंड बिज़नेस मीडिया।
- टेक्सेरा, टी.पी., नेवेस, एल.एम. और अराउजो, एफ.जी., 2012. दक्षिणपूर्वी ब्राज़ील के एक तटीय क्षेत्र में एक परमाणु ऊर्जा संयंत्र का तापीय प्रभाव: बेंटिक आवरण और मछली समुदायों पर ताप और भौतिक संरचना का प्रभाव। हाइड्रोबायोलोजिया, 684(1), पृष्ठ 161-175।
- योंग, डब्ल्यू.के., सिम, के.एस., पूंग, एस.डब्ल्यू., वेई, डी., फांग, एस.एम. और लिम, पी.ई., 2018. सीनेडेसमस क्वाड्रिकाडा (क्लोरोफाइसी) में प्रकाश संश्लेषण क्षमता और चयापचय प्लास्टिसिटी पर तापमान और तांबे की विषाक्तता के परस्पर प्रभाव। जर्नल ऑफ एप्लाइड फाइकोलॉजी, 30(6), पृ.3029-3041।

*

अपशिष्ट जल उपचार के लिए संशोधित बायोचार: एक कदम हरित भविष्य की ओर

शमिका शांताराम सावंत, विद्या श्री भारती, सत्य प्रकाश शुक्ला, विनोद कुमार यादव, दीपाली भंडारी

परिचय

भारत में प्रतिवर्ष लगभग 61754 एमएलडी अपशिष्ट जल उत्पन्न होता है। हालाँकि, न केवल उत्पन्न होने वाले अपशिष्ट की मात्रा में वृद्धि हुई है, बल्कि अपशिष्ट जल की प्रकृति भी बदल गई है। भारी धातुएँ, कृषि रसायन और स्थायी कार्बनिक प्रदूषक आमतौर पर अपशिष्ट जल में पाए जाने वाले प्रदूषक हैं। इसके अलावा, जलीय पर्यावरण में उभरते प्रदूषकों की उपस्थिति भी बढ़ रही है। उभरते हुए प्रदूषक ऐसे रासायनिक पदार्थ होते हैं जो अल्प मात्रा में मौजूद होते हैं, लेकिन जलीय जीवों के लिए संभावित रूप से विषाक्त होते हैं। इस प्रकार के यौगिकों में दवाइयाँ और व्यक्तिगत देखभाल उत्पाद, कीटनाशक, अंतःस्रावी तंत्र को नुकसान पहुँचाने वाले रसायन, स्थायी कार्बनिक प्रदूषक आदि शामिल हैं। ये प्रवासी होते हैं और अपने मार्ग में विभिन्न परिवर्तनों से गुजरते हैं। इनमें से अधिकांश में जैव संचयन, जैव सांद्रण और जैव आवर्धन क्षमता होती है। इसलिए, ये जलीय जीवों के लिए खतरनाक हैं और इनका उपचार आवश्यक है। बायोचार एक छिद्रयुक्त पायरोलिटिक उत्पाद है जो कार्बन से समृद्ध होता है और सीमित या ऑक्सीजन रहित परिस्थितियों में, जैविक अपशिष्ट बायोमास से प्राप्त होता है। उत्पादित बायोचार के गुण प्रयुक्त कृषि अपशिष्ट और पायरोलिसिस मापदंडों पर निर्भर करते हैं। आमतौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले फीडस्टॉक्स में गन्ने की खोई, लकड़ी, तेल और जूस उद्योग से प्राप्त प्रेस केक, चावल की भूसी आदि शामिल हैं। हालाँकि, इसका उत्पादन पशु अपशिष्ट, मल-मूत्र, जैविक खाद आदि से भी किया जाता है। जल उपचार के अलावा, इसका उपयोग मृदा सुधार, फसल उपज बढ़ाने, कार्बन निक्षेपण और ग्लोबल वार्मिंग से निपटने के लिए भी किया जाता है। पायरोलिसिस की समय-तापमान व्यवस्था के आधार पर, विभिन्न उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जिनका उपयोग आगे विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है।

बायोचार के कार्यात्मिक गुण, जो इसकी संरचना और तत्वों के संयोजन से निर्धारित होते हैं, तैयारी प्रक्रिया के दौरान बदल जाते हैं। बायोचार की सतही कार्यक्षमता, पायरोलिसिस तापमान और अवधारण समय के साथ बदलती रहती है। कम तापमान पर तैयार बायोचार में हाइड्रोजन और ऑक्सीजन युक्त कार्यात्मिक समूह प्रचुर मात्रा में होते हैं; हालाँकि, जैसे-जैसे तापमान बढ़ता है, उनका अनुपात कम होता जाता है, और धनायन विनिमय क्षमता भी कम होती जाती है। दूसरी ओर, बायोचार की सरंध्रता, पृष्ठीय क्षेत्रफल और वाष्पशीलता तापमान के साथ बढ़ती जाती है। बायोचार के परिणामी गुण इसकी अधिशोषण क्षमता निर्धारित करते हैं।

यद्यपि अपशिष्ट जल उपचार हेतु बायोचार ने अपनी अवशोषकता के कारण बढ़ती लोकप्रियता प्राप्त की है, फिर भी कुछ कमियों के कारण इसका उपयोग सीमित है। कई अध्ययनों से पता चलता है कि सक्रिय कार्बन की तुलना में बायोचार में कम छिद्रता, विशिष्ट पृष्ठीय क्षेत्रफल, अवशोषण स्थल और सतही कार्यक्षमता होती है। शुद्ध बायोचार में द्विसंयोजी सीसा, पंचसंयोजी आर्सेनिक और षटसंयोजी क्रोमियम जैसी भारी धातुओं के प्रति कम आकर्षण होता है। जल, विशेष रूप से अत्यधिक प्रदूषित जल से प्रदूषकों को पृथक करने की इसकी क्षमता सीमित है। इसलिए, इसकी प्रयोज्यता बढ़ाने के लिए कच्चे बायोचार में संशोधन की आवश्यकता है। इस प्रकार, बायोचार का भौतिक-रासायनिक संशोधन, बायोचार की कार्यक्षमता और अनुप्रयोग को उन्नत करने का एक प्रभावी तरीका है।

बायोचार संशोधन के तरीके

वांछित गुणों वाले बायोचार के निर्माण के लिए विभिन्न संशोधन विधियों का उपयोग किया जा सकता जैसा कि चित्र 1 में दिखाया गया है। संशोधन विधि का चुनाव संदूषक और बायोचार के रसायन विज्ञान तथा उनकी संभावित परस्पर क्रिया पर निर्भर करता है। इस प्रकार, बायोचार को प्रभावी उपचार की सुविधा के लिए डिज़ाइन किया जा सकता है। यह एक-चरणीय सक्रियण हो सकता है, जिसमें एक ही समय में कार्बनीकरण और संशोधन किया जाता है, या द्वि-चरणीय सक्रियण हो सकता है, जिसमें बायोचार के कार्बनीकरण और तैयारी के बाद उसका संशोधन किया जाता है। बायोचार संशोधन की विभिन्न विधियाँ हैं भाप सक्रियण, ऊष्मा उपचार, अम्ल उपचार, क्षारीय उपचार, संसेचन और बायोचार-आधारित नैनो-कम्पोजिट।

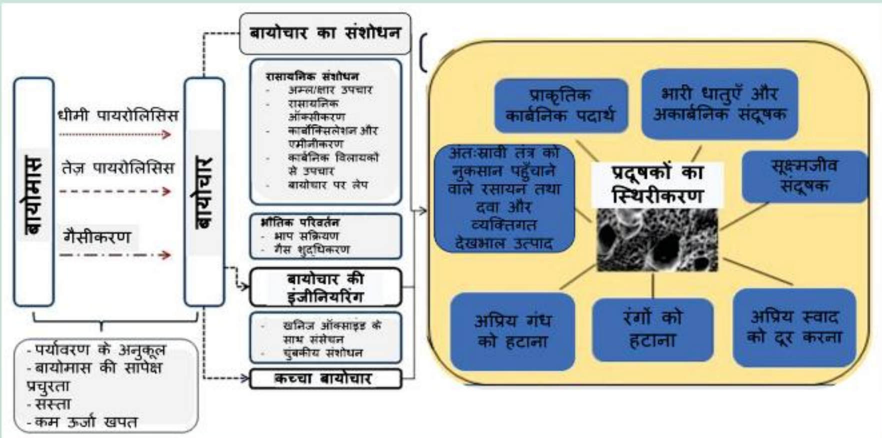

चित्र 1. बायोचार उत्पादन, संशोधन विधियाँ और बायोचार का उपयोग करके जल उपचार

1. भाप सक्रियण-

यह बायोचार की सतह पर सरंध्रता और ऑक्सीजन युक्त क्रियात्मक समूहों को बढ़ाने के लिए किया जाता है, जिससे इसकी जलस्नेही क्षमता बढ़ती है। यहाँ, तैयार बायोचार को 2.2 से 5 मिलीलीटर प्रति मिनट की भाप प्रवाह दर के साथ 0.5 से 3 घंटे के लिए 800-900°C तापमान पर रखा जाता है। भाप बायोचार के छिद्रों में फंसे अपूर्ण दहन के उत्पादों को हटा देती है और अन्य उत्पादों के अवशोषण के लिए अधिक जगह बनाती है। यह हाइड्रोजन, कार्बन मोनोऑक्साइड और कार्बन डाइऑक्साइड का उत्पादन करके बायोचार की सतह का ऑक्सीकरण भी करती है।

2. ऊष्मा उपचार-

ऊष्मा उपचार बायोचार को 800-900°C तापमान पर 1-2 घंटे तक गर्म करके किया जाता है, जिसके बाद बायोचार की सतह पर नए मूल कार्यात्मिक अंश बनाने के लिए हवा, हाइड्रोजन या आर्गन गैस डाली जाती है, जिससे इसकी जलभीति बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए, ऊष्मा उपचार ईथर और कार्बोनिल जलस्नेही समूहों को हटाकर मूल पाइरोन समूह बनाता है, जिससे बायोचार की सतह की जलभीति बढ़ जाती है। जलभीति सतहें हाइड्रोकार्बन के अवशोषण के लिए बेहतर होती हैं।

3. अम्लीय उपचार-

अम्ल उपचार में बायोचार (1 भाग) को अम्ल (10 भाग) में 120°C तक के परिवेशी तापमान पर घंटों या दिनों तक भिगोया जाता है। फिर इसे धोया जाता है, सुखाया जाता है और आवश्यक संशोधन प्राप्त करने के लिए पाइरोलाइज़ किया जाता है। आमतौर पर नाइट्रिक अम्ल, फॉस्फोरिक अम्ल और सल्फ्यूरिक अम्ल का उपयोग किया जाता है। H/C, O/C और N/C अनुपात बढ़ जाते हैं। साथ ही, हाइड्रॉक्सिल, कार्बोक्सिल, कीटोन आदि जैसे अम्लीय क्रियात्मक समूह भी जुड़ जाते हैं। इस प्रकार, खनिज प्रजातियों को हटाकर बायोचार की अम्लता और ध्रुवता बढ़ जाती है और इस प्रकार बायोचार सतह की जलस्नेहीता बढ़ जाती है।

4. क्षारीय उपचार-

बायोचार को कमरे के तापमान से 100°C पर क्षारीय विलयनों में आमतौर पर 6-24 घंटे तक भिगोया जाता है। फिर वांछित संशोधित बायोचार प्राप्त करने के लिए बायोचार को धोया, सुखाया और 300-700°C पर 1-2 घंटे तक पाइरोलाइज़ किया जाता है। इस विधि से नैफ़थलीन और पाइरोन जैसे क्षारीय क्रियात्मक समूहों के साथ-साथ प्राथमिक, द्वितीयक या तृतीयक ऐमीन, चतुर्धातुक अमोनियम आदि जैसे नाइट्रोजनी क्रियात्मक समूहों में भी सुधार होता है। आमतौर पर प्रयुक्त अपचायक $NH_3 \cdot H_2O$, Na_2SO_3, $FeSO_4$, एनिलिन और H_2 हैं।

5. संसेचन-

संसेचन बायोचार को धातु लवणों या ऑक्साइडों के साथ मिलाकर किया जाता है, जो दो तरीकों से किया जाता है:

i) बायोचार को धातु लवणों या धातु ऑक्साइड से उपचारित करके पायरोलिसिस किया जाता है।

बायोचार को परिवेशी तापमान से 120°C पर लवणों की विभिन्न सांद्रताओं में 1-6 घंटे तक लगातार मिलाते हुए डुबोया जाता है। इसके बाद N_2 या आंशिक O_2 की आपूर्ति के साथ 300-900°C पर पायरोलिसिस किया जाता है।

ii) बायोचार तैयार करना और फिर उसे संसेचित करना।

यहाँ, बायोचार को धातु लवणों या धातु ऑक्साइड से संसेचित करने से पहले तैयार किया जाता है।

संसेचन आमतौर पर अमोनियम क्लोराइड, कार्बोनेट, ग्रेफाइट, कार्बन नैनोट्यूब आदि के साथ किया जाता है। चुंबकीय बायोचार का उत्पादन माइक्रोवेव हीटिंग, रासायनिक सह-अवक्षेपण आदि तकनीकों द्वारा हेमेटाइट या फेरिक क्लोराइड, फेरिक सल्फेट आदि का उपयोग करके किया जाता है।

6. बायोचार-आधारित नैनो-कम्पोजिट-

बायोचार-आधारित नैनो-कम्पोजिट को बायोचार को संशोधित करने के लिए प्रयुक्त सामग्री के आधार पर निम्नानुसार वर्गीकृत किया जा सकता है: नैनो-धातु ऑक्साइड/हाइड्रॉक्साइड बायोचार नैनोकम्पोजिट, चुंबकीय बायोचार नैनोकम्पोजिट और कार्यात्मक नैनोकण-लेपित बायोचार।

इंजीनियर्ड बायोचार के गुण

भाप-सक्रिय बायोचार में छिद्र आयतन बढ़ जाता है जो संभवतः अधिक अवशोषण के लिए जिम्मेदार हो सकता है। हालाँकि, अन्य विधियों की तुलना में संशोधन प्रक्रिया के कारण इसकी सुगंध और ध्रुवता कम हो जाती है। बायोचार का अम्लीय संशोधन इसकी छिद्र भित्तियों को तोड़ देता है और सूक्ष्मबीजाणुओं को मध्य या वृहत्छिद्रों में परिवर्तित कर देता है, जिससे अवशोषण के लिए उपलब्ध विशिष्ट सतह क्षेत्र कम हो जाता है। हालांकि, अम्ल द्वारा संशोधन से ऑक्सीजन की मात्रा में उल्लेखनीय वृद्धि होती है और परिणामी ऑक्सीकरण से O/C और H/C अनुपात बढ़ जाते हैं, जिससे जलभीरुता कम हो जाती है और बायोचार की ध्रुवता बढ़ जाती है। बायोचार की सतह पर -COOH, -OH आदि जैसे अधिक अम्लीय क्रियात्मक समूह बनते हैं जिससे अपशिष्ट जल प्रदूषकों का रासायनिक अवशोषण होता है। क्षारीय संशोधन से अम्ल-संशोधित बायोचार की तुलना में H/C और N/C अनुपात बढ़ता है और O/C अनुपात घटता है। सुगंधितता में वृद्धि होती है और उपचार से ऋणावेशित कार्बनिक प्रदूषकों के अवशोषण के लिए उपलब्ध सतह क्षेत्र में वृद्धि होती है। क्षार-संशोधित बायोचार का सतह क्षेत्र 14 गुना बढ़ा दिया गया और इसकी अवशोषण क्षमता में भी इसी अनुपात में वृद्धि देखी गई। संसेचित बायोचार ने संमिश्रों के विकास के कारण सतह की कार्यक्षमता में वृद्धि की है। बायोचार-आधारित नैनो-संमिश्र बेहतर कार्यक्षमता, संरचनात्मक गुण, उत्प्रेरक विघटन क्षमता और आसान पृथक्करण प्रदर्शित करते हैं।

संशोधित बायोचार के अधिशोषण तंत्र

बायोचार सतहों पर प्रदूषकों का अधिशोषण कुछ कारकों पर निर्भर करता है, जैसे कि बायोचार के सतही गुण, अर्थात् विशिष्ट

सतह क्षेत्र, सतह आवेश, कार्यात्मक अंश, छिद्र विशेषताएँ, आदि। विभिन्न अधिशोषण तंत्र हैं: π-π अन्योन्यक्रिया, H-बंधन, जलभीति अन्योन्यक्रिया, स्थिरवैद्युत आकर्षण और प्रतिकर्षण, छिद्र भरण, आयन विनिमय, आदि।

संशोधित बायोचार की अपशिष्ट जल उपचार क्षमता

संशोधित बायोचार के संदूषक अवशोषण और अपशिष्ट जल उपचार क्षमता को तालिका 1 में संकलित किया गया है।

बायोचार का पुनर्जनन

लंबे समय तक सोखने वाले पदार्थों के इस्तेमाल से उनकी सतह दूषित पदार्थों से संतृप्त हो जाती है, जिसके कारण उन्हें नष्ट करना आवश्यक हो जाता है। हालाँकि, किसी प्रक्रिया द्वारा अधिशोषकों के उपचार से बायोचार पुनः चार्ज हो सकता है और उसका पुनः उपयोग किया जा सकता है। बायोचार की सतह से भारी धातु जैसे दूषित पदार्थों के विशोषण के लिए, विभिन्न सांद्रताओं में सोडियम नाइट्रेट, नाइट्रिक एसिड या पोटेशियम नाइट्रेट जैसे अम्लीय विलयनों से उपचारित किया जा सकता है। संदूषक विशोषण और बायोचार स्थलों के पुनर्जनन की अन्य तकनीकों में तापमान में परिवर्तन, निष्क्रिय द्रव या गैस उपचार, दाब में परिवर्तन, pH संशोधन आदि शामिल हैं। बायोचार पुनर्जनन के लिए हाइड्रोक्लोरिक अम्ल, एथिलीन डायमीन टेट्रा एसिटिक एसिड, एसिटिक अम्ल, सोडियम क्लोराइड और सोडियम हाइड्रॉक्साइड व्यापक रूप से प्रयुक्त विलायक हैं। भारी धातुओं को अम्लों द्वारा

तालिका 1 संशोधित बायोचार की संदूषक अवशोषण क्षमता

संशोधित बायोचार	संदूषक	अवशोषण क्षमता (मिलीग्राम ग्राम$^{-1}$)
मैंगनीज डाइऑक्साइड संशोधित बायोचार	लीड (II)	121.8
साइट्रिक एसिड उपचारित बायोचार	लीड (II)	159.5
जिंक सल्फाइड नैनो-क्रिस्टल के साथ संशोधित चुंबकीय बायोचार	लीड (II)	367.6
पॉलीएथिलएमाइन और क्षार संशोधित बायोचार	क्रोमियम (VI)	435.7
अमोनियम क्लोराइड उपचारित बायोचार	मौलिक पारा	1.068
मैग्नीशियम ऑक्साइड उपचारित चुकंदर टेलिंग बायोचार	नाइट्रेट	95.5
मैग्नीशियम ऑक्साइड उपचारित चुकंदर टेलिंग बायोचार	फास्फेट	835
6 °C पर कैल्शियम और मैग्नीशियम से भरपूर तिल के भूसे का बायोचार	फास्फेट	326.6
अम्ल या क्षार उपचारित बायोचार	फुरफुरल	93.5 - 109
ताप उपचारित बांस बायोचार	फुरफुरल	253.2
साइट्रिक एसिड उपचारित नीलगिरी चूरा बायोचार	मिथाइलीन नीला	185.6
रासायनिक रूप से उपचारित बांस बायोचार	मिथाइलीन नीला	605.5
क्षारीय पोटेशियम हाइड्रॉक्साइड द्वारा उपचारित मूंगफली के छिलके का बायोचार	फिनोल	93.5
मेथनॉल संशोधित चावल की भूसी बायोचार	टेट्रासाइक्लिन	95.6
बर-ककड़ी के पौधे से प्राप्त बायोचार @ 7 °C	सल्फामेथाज़िन	32.2
कार्बन नैनोट्यूब पर सोडियम डोडेसिलबेन्जीनसल्फोनेट को फैलाकर तैयार किया गया हिकॉरी वुड बायोचार नैनोकंपोजिट	सल्फापाइरीडीन	27.9
ॐ नाइट्रोजन आपूर्ति के साथ लोब्लोली पाइन बायोचार	डाईक्लोफेनाक	231
हरित अपशिष्ट बायोचार	एट्राज़िन	435
हरित अपशिष्ट बायोचार	सिमाज़ीन	514
मैग्नेटाइट से संशोधित बायोचार	कार्बमेज़पाइन	62.7
मैग्नेटाइट से संशोधित बायोचार	टेट्रासाइक्लिन	94.2

बेहतर तरीके से हटाया जाता है, जबकि सोडियम हाइड्रॉक्साइड कार्बनिक यौगिकों के विशोषण के लिए सबसे उपयुक्त है।

निष्कर्ष

वैश्विक स्तर पर भारी मात्रा में अपशिष्ट उत्पादन की समस्या से निपटने के लिए, बायोचार को एक संभावित अवशोषक के रूप में मूल्यांकित किया जा रहा है, क्योंकि यह इस समस्या का दो-आयामी समाधान प्रस्तुत करता है। बायोचार स्वयं कृषि अपशिष्ट से तैयार किया जाता है। इसलिए यह अपशिष्ट को उसके उत्पादक उपयोग में परिवर्तित करने में मदद करता है। दूसरा, यह एक सिद्ध पर्यावरण-अनुकूल अवशोषक है जो पेयजल और अपशिष्ट जल से दूषित पदार्थों को हटाने और उन्हें आगे उपयोग के लिए शुद्ध करने में मदद करता है। हालाँकि, इंजीनियर्ड बायोचार के कार्यात्मक गुण और सतह क्षेत्र बेहतर होते हैं, इसलिए, इसमें प्राकृतिक बायोचार की तुलना में अधिक अवशोषण क्षमता होती है। यह उभरते हुए प्रदूषकों सहित भारी धातुओं, आयनिक और कार्बनिक प्रदूषकों के पृथक्करण में प्रभावी है। अपशिष्ट जल जैसे अपरंपरागत जल संसाधनों का उपयोग अपरिहार्य है। इसलिए, अपशिष्ट जल उपचार के लिए संशोधित बायोचार का उपयोग करके, उसे पुन: उपयोग के योग्य बनाकर, हम निकट भविष्य में एक चक्रीय अर्थव्यवस्था के लक्ष्य को बेहतर और तेज़ी से प्राप्त कर सकते हैं।

*

इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट एवं जलवायु परिवर्तन : भारतीय परिप्रेक्ष्य में चुनौतियाँ, प्रभाव एवं सतत समाधान

ऋषिकेश कदम, डॉ. सौरव कुमार, के नागेन्द्रसाई, रानी सामलिन

वर्तमान युग विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का युग माना जाता है, जिसमें इलेक्ट्रॉनिक एवं विद्युत उपकरण मानव जीवन का अभिन्न अंग बन चुके हैं। मोबाइल फोन, कंप्यूटर, लैपटॉप, टेलीविजन, रेफ्रिजरेटर, एयर कंडीशनर तथा अन्य डिजिटल उपकरणों के उपयोग में निरंतर वृद्धि ने मानव जीवन को अधिक सुविधाजनक बनाया है, किन्तु इसके साथ ही इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट की समस्या भी तीव्र रूप से उभरकर सामने आई है। इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट से आशय ऐसे अनुपयोगी, परित्यक्त अथवा क्षतिग्रस्त विद्युत एवं इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों से है, जिनका उपयोग समाप्त हो चुका हो। वर्तमान समय में ई-अपशिष्ट विश्व की सबसे तीव्र गति से बढ़ने वाली अपशिष्ट धाराओं में से एक माना जाता है (फोर्टी आदि, 2020)।

दूसरी ओर, जलवायु परिवर्तन वर्तमान शताब्दी की सबसे गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं में से एक है। पृथ्वी के औसत तापमान में वृद्धि, अनियमित वर्षा, समुद्र-स्तर में वृद्धि, ग्लेशियरों का पिघलना तथा चरम मौसमी घटनाओं की आवृत्ति में वृद्धि जलवायु परिवर्तन के प्रमुख संकेत हैं। वैज्ञानिक अध्ययनों के अनुसार, ग्रीनहाउस गैसों के बढ़ते उत्सर्जन को जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण माना जाता है (अब्बास आदि, 2022)। सामान्यतः जलवायु परिवर्तन को उद्योगों, वाहनों एवं जीवाश्म ईंधनों के दहन से जोड़कर देखा जाता है, किन्तु इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट भी इस समस्या में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से महत्वपूर्ण योगदान देता है (सिंह एवं ओगुनसेइटन, 2022)।

ई- अपशिष्ट के अनुचित प्रबंधन, जैसे खुले में जलाना, असंगठित पुनर्चक्रण तथा लैंडफिलिंग, के कारण कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4), हाइड्रोफ्लोरोकार्बन (HFCs) तथा अन्य विषैली गैसों का उत्सर्जन होता है, जो वातावरण में ग्रीनहाउस प्रभाव को बढ़ाते हैं (कास्त्रो आदि, 2021)। इसके अतिरिक्त, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के निर्माण हेतु आवश्यक धातुओं के खनन, प्रसंस्करण एवं परिवहन में अत्यधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिससे जीवाश्म ईंधनों की खपत तथा ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में वृद्धि होती है। यदि ई-अपशिष्ट का प्रभावी पुनर्चक्रण न किया जाए, तो नई धातुओं के निष्कर्षण की मांग बढ़ती है, जो जलवायु परिवर्तन को और अधिक तीव्र बनाती है (संयुक्त राज्य पर्यावरण संरक्षण एजेंसी, 2016)।

भारत के संदर्भ में यह समस्या विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि देश विश्व के प्रमुख ई-अपशिष्ट उत्पादक देशों में शामिल है। तीव्र शहरीकरण, डिजिटलीकरण तथा उपभोक्तावाद के कारण ई-अपशिष्ट की मात्रा में निरंतर वृद्धि हो रही है। देश में ई-अपशिष्ट का बड़ा भाग अभी भी असंगठित क्षेत्र द्वारा संसाधित किया जाता है, जहाँ पर्यावरणीय सुरक्षा मानकों का पालन नहीं किया जाता। परिणामस्वरूप वायु, जल एवं मृदा प्रदूषण के साथ-साथ ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में भी वृद्धि होती है।

अतः "इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट एवं जलवायु परिवर्तन" विषय का अध्ययन वर्तमान समय में अत्यंत प्रासंगिक है। ई-अपशिष्ट के वैज्ञानिक प्रबंधन, पुनर्चक्रण एवं संसाधन पुनर्प्राप्ति द्वारा न केवल पर्यावरणीय प्रदूषण को कम किया जा सकता है, बल्कि ऊर्जा संरक्षण एवं ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी लाकर जलवायु परिवर्तन शमन में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया जा सकता है। इसलिए सतत विकास एवं पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से ई-अपशिष्ट प्रबंधन को प्रभावी जलवायु नीति का एक आवश्यक अंग माना जाना चाहिए।

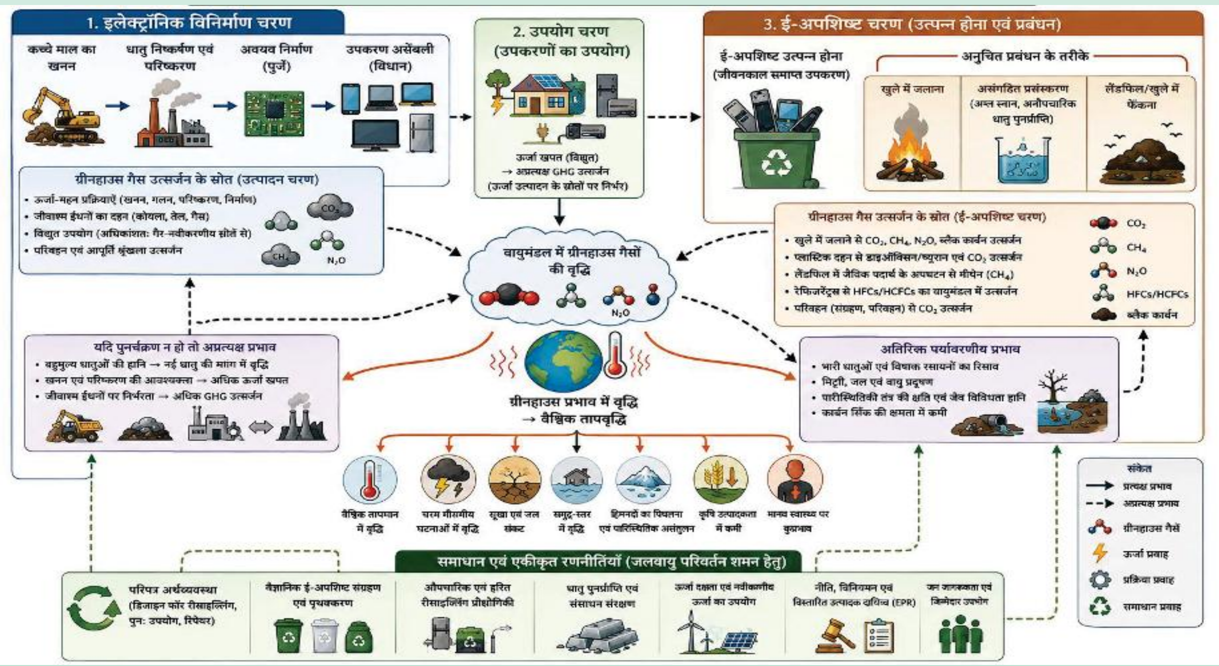

चित्र 1: वैद्युत-इलेक्ट्रॉनिक उपकरण निर्माण से ई-अपशिष्ट उत्पत्ति, ऊष्मागृह गैस उत्सर्जन एवं जलवायु परिवर्तन तक की समेकित प्रक्रिया

इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट के जलवायु परिवर्तन संबंधी प्रभाव

जलवायु परिवर्तन, जो दीर्घकालिक औसत मौसमीय प्रतिरूपों में परिवर्तन को निरूपित करता है, वर्तमान समय में वैश्विक स्तर पर एक अत्यंत जटिल एवं गंभीर पर्यावरणीय चुनौती बन चुका है (अब्बास आदि, 2022)। दूसरी ओर, इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट विश्व में सर्वाधिक तीव्र गति से बढ़ने वाली अपशिष्ट धाराओं में से एक है। यद्यपि सामान्यतः ई-अपशिष्ट को केवल ठोस अपशिष्ट प्रबंधन की समस्या माना जाता है, तथापि यह प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में जलवायु परिवर्तन को प्रभावित करता है (सिंह एवं ओगुनसेइटन, 2022)। ई-अपशिष्ट के अनुचित प्रबंधन से ऊष्मागृह गैसों का उत्सर्जन बढ़ता है तथा ऊर्जा एवं प्राकृतिक संसाधनों की मांग में वृद्धि होती है, जिसके परिणामस्वरूप वैश्विक तापन की समस्या और अधिक गंभीर हो जाती है। ई-अपशिष्ट का प्रत्यक्ष प्रभाव मुख्यतः इसके अनुचित निपटान एवं प्रसंस्करण के दौरान उत्पन्न होने वाली ग्रीनहाउस गैसों से संबंधित है। अनेक क्षेत्रों में ई-अपशिष्ट का निपटान अनियंत्रित लैंडफिलिंग तथा खुले में दहन जैसी अवैज्ञानिक विधियों द्वारा किया जाता है (मेस एवं प्रेस्टन-व्हाइट, 2022)। इन प्रक्रियाओं के कारण वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4) तथा अन्य विषैली गैसों का उत्सर्जन बढ़ता है, जिससे वैश्विक तापवृद्धि में प्रत्यक्ष योगदान होता है।

विशेष रूप से, खुले में ई-अपशिष्ट के दहन के दौरान बड़ी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड एवं मीथेन गैसें उत्सर्जित होती हैं, जो अत्यंत प्रभावशाली ग्रीनहाउस गैसें हैं। इलेक्ट्रॉनिक परिपथ पट्टिकाओं में स्वर्ण एवं अन्य बहुमूल्य धातुओं की उच्च सांद्रता पाई जाती है, जिसके कारण अनौपचारिक क्षेत्रों में धातुओं की पुनर्प्राप्ति हेतु दहन प्रक्रिया अपनाई जाती है। यह प्रक्रिया अत्यधिक मात्रा में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन का कारण बनती है। इसके अतिरिक्त, अपशिष्ट विद्युत एवं इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में प्रयुक्त रेफ्रिजरेंट्स एवं इन्सुलेटिंग फोम में हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन (HCFCs) तथा हाइड्रोफ्लोरोकार्बन (HFCs) उपस्थित रहते हैं, जो अत्यंत शक्तिशाली ग्रीनहाउस गैसें हैं। अनुचित निपटान के दौरान ये गैसें सीधे वातावरण में मुक्त हो जाती हैं (कास्त्रो आदि, 2021)।

ई-अपशिष्ट के अपशिष्ट भराव स्थलों से उत्पन्न निक्षालित द्रव में प्रायः उच्च मात्रा में कार्बनिक पदार्थ उपस्थित रहते हैं। ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में सूक्ष्मजीवों द्वारा इन पदार्थों के अवायवीय अपघटन से मीथेन गैस उत्पन्न होती है, जिसकी ऊष्मा-अवरोधक क्षमता कार्बन डाइऑक्साइड की तुलना में लगभग 28 गुना अधिक होती है। वैश्विक स्तर पर अपशिष्ट भराव मानवजनित मीथेन उत्सर्जन का एक महत्वपूर्ण स्रोत माने जाते हैं। अतः ई-अपशिष्ट की अपशिष्ट भराव प्रक्रिया से ऊष्मागृह गैसों का उत्सर्जन का एक गंभीर कारण है।

प्रत्यक्ष उत्सर्जनों के अतिरिक्त, ई-अपशिष्ट अप्रत्यक्ष रूप से भी जलवायु परिवर्तन को प्रभावित करता है। इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के निर्माण हेतु आवश्यक धातुओं के खनन, निष्कर्षण एवं परिशोधन की प्रक्रियाएँ अत्यधिक ऊर्जा-गहन होती हैं तथा मुख्यतः जीवाश्म ईंधनों पर निर्भर रहती हैं। इसके विपरीत, धातुओं का पुनर्चक्रण अपेक्षाकृत कम ऊर्जा की मांग करता है। पुनर्चक्रित एल्युमिनियम, ताँबा एवं इस्पात के उत्पादन में उनकी प्राथमिक धातुओं की तुलना में अत्यधिक कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिससे ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी लाई जा सकती है।

वर्तमान समय में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की बढ़ती मांग तथा उनकी घटती उपयोग अवधि के कारण नए उपकरणों के निर्माण की आवश्यकता निरंतर बढ़ रही है। इससे नई धातुओं के खनन एवं ऊर्जा उपभोग में वृद्धि होती है, जिसके परिणामस्वरूप ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन भी बढ़ता है। वैज्ञानिक अध्ययनों के अनुसार, एक संगणक के संपूर्ण जीवन- चक्र में उत्पन्न कुल कार्बन उत्सर्जन का अधिकांश भाग निर्माण चरण के दौरान उत्पन्न होता है। यह तथ्य इलेक्ट्रॉनिक उत्पादों के निर्माण से जुड़े विशाल कार्बन पदचिह्न को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।

ई-अपशिष्ट में स्वर्ण, ताँबा, एल्युमिनियम तथा दुर्लभ मृदा धातुओं जैसी बहुमूल्य धातुएँ प्रचुर मात्रा में उपस्थित होती हैं। तथापि, वैश्विक स्तर पर ई-अपशिष्ट पुनर्चक्रण की दर अत्यंत निम्न है। परिणामस्वरूप अधिकांश मूल्यवान धातुएँ नष्ट हो जाती हैं, जिससे नई धातुओं के निष्कर्षण की आवश्यकता बढ़ती है। यह प्रक्रिया ऊर्जा उपभोग एवं ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को और अधिक बढ़ाती है।

विकासशील देशों में प्रचलित असंगठित ई- अपशिष्ट प्रसंस्करण तकनीकें अत्यंत अल्प दक्षता वाली होती हैं (इख्लायेल, 2018)। इन प्रक्रियाओं में श्रमिकों को गंभीर स्वास्थ्य जोखिमों का सामना करना पड़ता है तथा धातुओं की पुनर्प्राप्ति भी प्रभावी रूप से नहीं हो पाती। फलस्वरूप, पुनर्चक्रण द्वारा संभावित ऊर्जा बचत एवं ग्रीनहाउस गैसों में कमी की क्षमता पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हो पाती। इसके अतिरिक्त, ई- अपशिष्ट में उपस्थित भारी धातुएँ तथा ब्रोमिनेटेड फ्लेम रिटार्डेंट्स जैसे विषैले रसायन अनुचित प्रबंधन के कारण पर्यावरण में मुक्त हो जाते हैं। यद्यपि ये पदार्थ प्रत्यक्ष रूप से जलवायु परिवर्तन में योगदान नहीं देते, तथापि ये पारिस्थितिक तंत्रों एवं जैव विविधता को गंभीर क्षति पहुँचाते हैं। इससे पारिस्थितिक तंत्रों की जलवायु परिवर्तन के प्रति सहनशीलता तथा कार्बन सिंक के रूप में उनकी क्षमता प्रभावित होती है, जो अप्रत्यक्ष रूप से जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को और अधिक बढ़ा देता है।

सारतः, ई- अपशिष्ट का अनुचित प्रबंधन ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन का एक महत्वपूर्ण एवं निरंतर बढ़ता हुआ स्रोत है, जो प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में जलवायु परिवर्तन को प्रोत्साहित करता है। अतः ई-अपशिष्ट का वैज्ञानिक एवं सतत प्रबंधन जलवायु परिवर्तन शमन की दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण रणनीति सिद्ध हो सकता है। उचित पुनर्चक्रण, संसाधन पुनर्प्राप्ति, हरित प्रौद्योगिकी तथा प्रभावी अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली द्वारा ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम कर सतत विकास को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

भारत में ई-अपशिष्ट प्रबंधन से संबंधित प्रमुख नियम एवं नीतियाँ: परिचय

भारत में तीव्र औद्योगिकीकरण, डिजिटलीकरण तथा इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के बढ़ते उपयोग के कारण ई-अपशिष्ट की मात्रा निरंतर बढ़ रही है। ई-अपशिष्ट में उपस्थित भारी धातुएँ एवं विषैले रसायन पर्यावरण तथा मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं। इस बढ़ती समस्या के समाधान हेतु भारत सरकार

ने समय-समय पर विभिन्न नियम एवं नीतियाँ लागू की हैं। ई-अपशिष्ट (प्रबंधन एवं संचालन) नियम, 2011 से लेकर ई-अपशिष्ट (प्रबंधन) नियम, 2022 तक की नीतियों में वैज्ञानिक संग्रहण, पुनर्चक्रण, विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (EPR), पर्यावरणीय सुरक्षा तथा संसाधन पुनप्राप्ति पर विशेष बल दिया गया है। इन नियमों का प्रमुख उद्देश्य ई-अपशिष्ट के अनुचित निपटान को रोकना, औपचारिक पुनर्चक्रण प्रणाली को सुदृढ़ करना तथा सतत एवं पर्यावरण-अनुकूल ई-अपशिष्ट प्रबंधन को प्रोत्साहित करना है।

भारत में ई-अपशिष्ट प्रबंधन से संबंधित प्रमुख नियम एवं नीतियाँ

भारत में तीव्र औद्योगिकीकरण, डिजिटलीकरण तथा इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के बढ़ते उपयोग के कारण ई-अपशिष्ट की मात्रा निरंतर बढ़ रही है। ई-अपशिष्ट में उपस्थित भारी धातुएँ एवं विषैले रसायन पर्यावरण तथा मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं। इस बढ़ती समस्या के समाधान हेतु भारत सरकार ने समय-समय पर विभिन्न नियम एवं नीतियाँ लागू की हैं। ई-अपशिष्ट (प्रबंधन एवं संचालन) नियम, 2011 से लेकर ई-अपशिष्ट (प्रबंधन) नियम, 2022 तक की नीतियों में वैज्ञानिक संग्रहण, पुनर्चक्रण, विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (EPR), पर्यावरणीय सुरक्षा तथा संसाधन पुनप्राप्ति पर विशेष बल दिया गया है। इन नियमों का प्रमुख उद्देश्य ई-अपशिष्ट के अनुचित निपटान को रोकना, औपचारिक पुनर्चक्रण प्रणाली को सुदृढ़ करना तथा सतत एवं पर्यावरण-अनुकूल ई-अपशिष्ट प्रबंधन को प्रोत्साहित करना है।

सारणी 1 : ई-अपशिष्ट प्रबंधन : चुनौतियाँ, प्रभाव एवं समाधान रणनीतियाँ

घटक	प्रमुख बिंदु	पर्यावरणीय प्रभाव	वर्तमान चुनौतियाँ	सतत रणनीतियाँ / समाधान
ई-अपशिष्ट की वर्तमान स्थिति	भारत विश्व के शीर्ष ई-अपशिष्ट उत्पादक देशों में शामिल है; प्रतिवर्ष लाखों टन ई-अपशिष्ट उत्पन्न	मृदा, जल एवं वायु प्रदूषण; ऊष्मागृह गैस उत्सर्जन	तीव्र डिजिटलीकरण एवं कम उत्पाद जीवनकाल	परिपत्र अर्थव्यवस्था आधारित मॉडल
अनौपचारिक क्षेत्र (Informal Sector)	लगभग 90% ई-अपशिष्ट अनौपचारिक क्षेत्र द्वारा संसाधित	खुले दहन से CO_2, CH_4, डाइऑक्सिन एवं फ्यूरान उत्सर्जन	श्रमिक सुरक्षा का अभाव, अवैज्ञानिक पुनर्चक्रण	औपचारिक-अनौपचारिक क्षेत्र एकीकरण
खुले में दहन एवं अम्लीय निष्कर्षण	ताँबा, स्वर्ण एवं अन्य धातुओं की पुनर्प्राप्ति हेतु दहन एवं अम्ल प्रयोग	वायु प्रदूषण, विषैली गैसें, जलवायु परिवर्तन	पर्यावरणीय मानकों का अभाव	हरित पुनर्चक्रण प्रौद्योगिकी
अपशिष्ट भराव स्थल (Landfill)	ई-अपशिष्ट का अनुचित निक्षेपण	मीथेन एवं विषैले रिस्राव द्रव (Leachate) का निर्माण	भूजल एवं मृदा प्रदूषण	वैज्ञानिक अपशिष्ट पृथक्करण एवं सुरक्षित निपटान
भारी धातुएँ एवं विषैले रसायन	सीसा, पारा, कैडमियम, ब्रोमिनेटेड फ्लेम रिटार्डेंट्स	जैव संचयन, कैंसर एवं तंत्रिका तंत्र विकार	निगरानी एवं नियंत्रण की कमी	विष-मुक्त डिजाइन एवं हरित इलेक्ट्रॉनिक्स
ऊर्जा एवं जलवायु प्रभाव	नई धातुओं के खनन में अत्यधिक ऊर्जा खपत	ऊष्मागृह गैस उत्सर्जन एवं कार्बन पदचिह्न में वृद्धि	कम पुनर्चक्रण दर	धातु पुनर्प्राप्ति एवं संसाधन दक्षता
विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (EPR)	उत्पादकों को संग्रह एवं पुनर्चक्रण की जिम्मेदारी	औपचारिक पुनर्चक्रण को बढ़ावा	कमजोर अनुपालन एवं निगरानी	डिजिटल ट्रैकिंग एवं कड़े अनुपालन तंत्र
जन-जागरूकता	उपभोक्ताओं में ई-अपशिष्ट संबंधी जागरूकता कम	अनुचित निपटान में वृद्धि	संग्रह प्रणाली की जानकारी का अभाव	जन-जागरूकता अभियान एवं प्रशिक्षण
तकनीकी चुनौतियाँ	स्वदेशी पुनर्चक्रण तकनीकों की कमी	संसाधनों की हानि एवं प्रदूषण	विदेशी तकनीक महँगी एवं अनुपयुक्त	स्वदेशी हरित प्रौद्योगिकी विकास
भविष्य की दिशा	सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) से जुड़ाव	जलवायु परिवर्तन शमन	नीति-कार्यान्वयन अंतराल	शून्य-अपशिष्ट एवं परिपत्र अर्थव्यवस्था आधारित प्रणाली

सारणी 2 : भारत में ई-अपशिष्ट प्रबंधन से संबंधित प्रमुख नियम एवं नीतियाँ

वर्ष	नियम / नीति	प्रमुख विशेषताएँ
2011	ई-अपशिष्ट (प्रबंधन एवं संचालन) नियम, 2011	भारत में प्रथम ई-अपशिष्ट नियम; EPR अवधारणा का प्रारंभ
2016	ई-अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016	संग्रह लक्ष्य निर्धारित; उत्पादकों की उत्तरदायित्व वृद्धि
2018	संशोधित ई-अपशिष्ट नियम	संग्रह लक्ष्य में संशोधन एवं अनुपालन सुधार
2022	ई-अपशिष्ट (प्रबंधन) नियम, 2022	डिजिटल EPR पोर्टल, ऑनलाइन प्रमाणपत्र प्रणाली, पुनर्चक्रण लक्ष्य आधारित ढाँचा
CPCB दिशानिर्देश	केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड दिशा-निर्देश	पंजीकरण, संग्रहण, पुनर्चक्रण एवं पर्यावरणीय निगरानी
स्वच्छ भारत मिशन	अपशिष्ट प्रबंधन जागरूकता	स्रोत पृथक्करण एवं सतत अपशिष्ट प्रबंधन को बढ़ावा
डिजिटल इंडिया एवं मेक इन इंडिया	इलेक्ट्रॉनिक उद्योग विस्तार	ई-अपशिष्ट उत्पत्ति में वृद्धि; हरित विनिर्माण की आवश्यकता

निष्कर्ष

ई-अपशिष्ट वर्तमान समय की एक गंभीर पर्यावरणीय एवं जलवायु संबंधी चुनौती बन चुका है। इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के बढ़ते उपयोग, तीव्र तकनीकी उन्नयन तथा कम उत्पाद जीवनकाल के कारण ई-अपशिष्ट की मात्रा निरंतर बढ़ रही है। ई-अपशिष्ट के अनुचित प्रबंधन, जैसे खुले में दहन, अवैज्ञानिक पुनर्चक्रण एवं अपशिष्ट भराव स्थलों में निक्षेपण, से कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन तथा अन्य ऊष्मागृह गैसों का उत्सर्जन होता है, जो वैश्विक तापन एवं जलवायु परिवर्तन को बढ़ावा देते हैं। इसके अतिरिक्त, ई-अपशिष्ट में उपस्थित भारी धातुएँ एवं विषैले रसायन मृदा, जल एवं वायु प्रदूषण उत्पन्न कर पारिस्थितिक संतुलन तथा मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं।

भारत में ई-अपशिष्ट प्रबंधन की समस्या और अधिक जटिल है, क्योंकि अधिकांश ई- अपशिष्ट का प्रसंस्करण अभी भी अनौपचारिक क्षेत्र द्वारा अवैज्ञानिक तरीकों से किया जाता है। इस चुनौती से निपटने हेतु भारत सरकार द्वारा ई-अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2011, 2016 एवं 2022 लागू किए गए हैं, जिनमें विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (EPR), वैज्ञानिक पुनर्चक्रण तथा संसाधन पुनर्प्राप्ति को बढ़ावा दिया गया है। तथापि, प्रभावी क्रियान्वयन, जन-जागरुकता, तकनीकी अवसंरचना तथा निगरानी तंत्र को और सुदृढ़ करने की आवश्यकता है।

वैज्ञानिक पुनर्चक्रण, हरित प्रौद्योगिकी, ऊर्जा दक्षता एवं परिपत्र अर्थव्यवस्था आधारित दृष्टिकोण अपनाकर ऊष्मागृह गैस उत्सर्जन को कम किया जा सकता है तथा संसाधनों का सतत उपयोग सुनिश्चित किया जा सकता है। अतः ई-अपशिष्ट का समेकित एवं वैज्ञानिक प्रबंधन पर्यावरण संरक्षण, जलवायु परिवर्तन शमन तथा सतत विकास की दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संदर्भ

1. अब्बास, क., आदि (2022). जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरणीय स्थिरता से संबंधित अध्ययन।
2. कास्त्रो, आर., आदि (2021). वैद्युत-इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट से उत्पन्न ऊष्मागृह गैस उत्सर्जन का अध्ययन।
3. फोर्टी, वी., आदि (2020). वैश्विक ई-अपशिष्ट प्रतिवेदन 2020। संयुक्त राष्ट्र विश्वविद्यालय, बॉन।
4. फावोले, ए. ए., ओरिक्पेटे, ओ. एफ., एहियोबु, एन. एन. तथा अन्य (2023)। इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट के जलवायु परिवर्तन संबंधी प्रभाव : सतत प्रबंधन हेतु रणनीतियाँ।
5. इख्लायेल, एम. (2018). विकासशील देशों में ई-अपशिष्ट पुनर्चक्रण प्रणाली का विश्लेषण।
6. मेस, एम. एवं प्रेस्टन-व्हाइट, ई. (2022). ई-अपशिष्ट प्रबंधन एवं पर्यावरणीय प्रभाव।
7. सिंह, एन. एवं ओगुनसेइटन, ओ. ए. (2022). ई-अपशिष्ट एवं जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का वैश्विक परिप्रेक्ष्य।
8. संयुक्त राज्य पर्यावरण संरक्षण एजेंसी (2016). धातु पुनर्चक्रण से ऊर्जा संरक्षण के लाभ।

*

जलीय कृषि में प्रतिजैविक प्रतिरोध: चुनौतियाँ, प्रभाव एवं प्रबंधन

सतेन्द्र सिंह, डॉ. मेघा कदम बेडेकर एवं महेश शर्मा

परिचय

जलीय कृषि वर्तमान समय में वैश्विक खाद्य सुरक्षा, पोषण तथा आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण आधार बन चुकी है। जनसंख्या वृद्धि एवं प्रोटीन युक्त आहार की बढ़ती मांग के कारण मत्स्य एवं अन्य जलीय जीवों के उत्पादन में निरंतर वृद्धि हो रही है। उत्पादन क्षमता बढ़ाने हेतु गहन एवं अर्द्धगहन पालन प्रणालियों का व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप रोगों की घटनाओं में वृद्धि देखी जा रही है। रोग नियंत्रण एवं उपचार के लिए प्रतिजैविकों का उपयोग जलीय कृषि में सामान्य प्रथा बन गया है। किन्तु प्रतिजैविकों के अनियंत्रित एवं अविवेकपूर्ण उपयोग ने प्रतिजैविक प्रतिरोध जैसी गंभीर समस्या को जन्म दिया है, जो वर्तमान में जलीय स्वास्थ्य प्रबंधन की प्रमुख चुनौतियों में सम्मिलित है।

प्रतिजैविक प्रतिरोध वह अवस्था है जिसमें जीवाणु अथवा अन्य सूक्ष्मजीव प्रतिजैविक औषधियों के प्रति सहनशीलता विकसित कर लेते हैं, फलस्वरूप औषधियाँ प्रभावहीन हो जाती हैं। जलीय कृषि प्रणालियों में प्रयुक्त प्रतिजैविक जल माध्यम के द्वारा पर्यावरण में फैल जाते हैं, जिससे विभिन्न रोगजनक एवं अवसरवादी जीवाणुओं में प्रतिरोधी जीनों का विकास एवं प्रसार तीव्र गति से होता है। विशेष रूप से एरोमोनास, विब्रियो, स्यूडोमोनास तथा एडवर्डसिएला जैसे जीवाणुओं में बहुऔषधि प्रतिरोध की घटनाएँ निरंतर बढ़ रही हैं। यह स्थिति न केवल मत्स्य उत्पादन को प्रभावित करती है, बल्कि मानव स्वास्थ्य एवं पारिस्थितिक संतुलन के लिए भी गंभीर खतरा उत्पन्न करती है।

जलीय कृषि में प्रतिजैविक प्रतिरोध का विकास अनेक कारकों से प्रभावित होता है, जिनमें अत्यधिक स्टॉकिंग घनत्व, खराब जल गुणवत्ता, असंतुलित पोषण, अपर्याप्त जैवसुरक्षा उपाय तथा बिना वैज्ञानिक परामर्श के औषधियों का उपयोग प्रमुख हैं। कई बार प्रतिजैविकों का प्रयोग रोग निदान के बिना ही निवारक उपाय के रूप में किया जाता है, जिससे सूक्ष्मजीवों पर चयनात्मक दबाव उत्पन्न होता है तथा प्रतिरोधी उपभेद विकसित होने लगते हैं। इसके अतिरिक्त, प्रतिजैविक अवशेषों का जलाशयों एवं प्राकृतिक जल स्रोतों में संचय जलीय पारितंत्र की सूक्ष्मजीवी विविधता को प्रभावित करता है तथा प्रतिरोधी जीनों के क्षैतिज स्थानांतरण को बढ़ावा देता है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रतिजैविक प्रतिरोध की समस्या केवल जलीय कृषि तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि यह "एक स्वास्थ्य" अवधारणा के अंतर्गत मानव, पशु एवं पर्यावरणीय स्वास्थ्य से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ चुकी है। अतः सतत् एवं सुरक्षित जलीय कृषि के लिए प्रतिजैविकों के विवेकपूर्ण उपयोग, प्रभावी जैवसुरक्षा प्रबंधन, वैकल्पिक रोग नियंत्रण उपायों जैसे प्रोबायोटिक्स, प्रतिरक्षोत्तेजकों एवं टीकाकरण के उपयोग को प्रोत्साहित करना अत्यंत आवश्यक है। साथ ही, प्रतिरोधी जीवाणुओं की नियमित निगरानी, आणविक स्तर पर प्रतिरोधी जीनों की पहचान तथा मत्स्य पालकों में वैज्ञानिक जागरूकता का प्रसार प्रतिजैविक प्रतिरोध नियंत्रण हेतु महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हो सकते हैं।

भारत में प्रतिजैविक प्रतिरोध की स्थिति

भारत विश्व के प्रमुख जलीय कृषि उत्पादक देशों में से एक है, जहाँ तीव्र मत्स्य पालन प्रणालियों के विस्तार के साथ प्रतिजैविकों का उपयोग भी निरंतर बढ़ रहा है। विभिन्न शोध अध्ययनों में यह पाया गया है कि जलीय कृषि में रोग नियंत्रण हेतु प्रतिजैविकों के अत्यधिक एवं अविवेकपूर्ण उपयोग के कारण अनेक रोगजनक जीवाणुओं में प्रतिरोध विकसित हो चुका है। विशेष रूप से विब्रियो, एरोमोनास एवं अन्य जलीय जीवाणुओं में टेट्रासाइक्लिन, सल्फोनामाइड्स तथा क्विनोलोन्स जैसे प्रतिजैविकों के प्रति प्रतिरोध दर्ज किया गया है। जलीय पर्यावरण में प्रतिजैविक अवशेषों एवं प्रतिरोधी जीनों की उपस्थिति मानव स्वास्थ्य, पर्यावरणीय संतुलन तथा खाद्य सुरक्षा के लिए गंभीर चिंता का विषय बनती जा रही है। भारत में जलीय कृषि, पशुपालन एवं मानव स्वास्थ्य क्षेत्रों के बीच प्रतिरोधी जीवाणुओं के प्रसार को देखते हुए यह समस्या अब "एक स्वास्थ्य" की व्यापक अवधारणा से जुड़ चुकी है।

प्रतिजैविक प्रतिरोध की बढ़ती चुनौती से निपटने के लिए भारत सरकार एवं विभिन्न अनुसंधान संस्थान समन्वित प्रयास कर रहे हैं। "राष्ट्रीय प्रतिजैविक प्रतिरोध कार्ययोजना" के अंतर्गत मानव, पशु एवं पर्यावरणीय स्वास्थ्य को एकीकृत रूप से ध्यान में रखते हुए "एक स्वास्थ्य" दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया जा रहा है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, केंद्रीय मत्स्य अनुसंधान संस्थान तथा अन्य वैज्ञानिक संस्थान प्रतिरोधी जीवाणुओं की निगरानी, प्रतिजैविक उपयोग के मूल्यांकन एवं वैकल्पिक रोग नियंत्रण उपायों के विकास पर कार्य कर रहे हैं। वर्तमान में जैवसुरक्षा, टीकाकरण, प्रोबायोटिक्स एवं पर्यावरण- अनुकूल प्रबंधन पद्धतियों को प्रतिजैविक उपयोग कम करने के प्रभावी उपायों के रूप में प्रोत्साहित किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त, प्रतिजैविकों के विवेकपूर्ण उपयोग एवं जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से सतत् एवं सुरक्षित जलीय कृषि को बढ़ावा देने के प्रयास किए जा रहे हैं।

जलीय कृषि में प्रतिजैविक प्रतिरोध के प्रमुख कारण

जलीय कृषि में रोग नियंत्रण एवं उत्पादन वृद्धि के उद्देश्य से प्रतिजैविक औषधियों का व्यापक उपयोग किया जाता है, किन्तु इनका अनियंत्रित एवं अविवेकपूर्ण प्रयोग प्रतिजैविक प्रतिरोध की समस्या को निरंतर बढ़ा रहा है। अनेक मत्स्य पालक बिना किसी वैज्ञानिक परीक्षण अथवा विशेषज्ञ सलाह के प्रतिजैविकों का उपयोग करते हैं। कई बार रोग की वास्तविक पहचान किए बिना ही औषधियाँ दी जाती हैं, जिससे रोगजनक जीवाणुओं पर चयनात्मक दबाव उत्पन्न होता है और वे धीरे-धीरे प्रतिरोध विकसित कर लेते हैं। इसके अतिरिक्त, एक ही प्रतिजैविक का बार-बार उपयोग जीवाणुओं में आनुवंशिक परिवर्तन को बढ़ावा देता है, जिसके परिणामस्वरूप

बहुऔषधि प्रतिरोधी जीवाणुओं का विकास होने लगता है।

प्रतिजैविक प्रतिरोध के विकास में अनुचित मात्रा में औषधि उपयोग एवं अधूरा उपचार भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कई बार लागत कम करने के उद्देश्य से निर्धारित मात्रा से कम दवा दी जाती है अथवा उपचार अवधि पूर्ण होने से पहले ही औषधि का उपयोग बंद कर दिया जाता है। ऐसी परिस्थितियों में सभी रोगजनक जीवाणु नष्ट नहीं हो पाते तथा जीवित बचे सूक्ष्मजीव प्रतिरोधी क्षमता विकसित कर लेते हैं। समय के साथ ये प्रतिरोधी जीवाणु तीव्र गति से वृद्धि कर अन्य जलीय जीवों में संक्रमण फैलाते हैं। इससे रोग उपचार की प्रभावशीलता कम हो जाती है तथा भविष्य में सामान्य संक्रमणों का नियंत्रण भी कठिन हो जाता है।

जलीय कृषि प्रणालियों में खराब जल गुणवत्ता एवं अपर्याप्त प्रबंधन भी प्रतिजैविक प्रतिरोध को बढ़ाने वाले प्रमुख कारक हैं। अधिक जैविक भार, उच्च स्टॉकिंग घनत्व, अमोनिया एवं नाइट्राइट की अधिकता तथा घुलित ऑक्सीजन की कमी जलीय जीवों में तनाव उत्पन्न करती है। परिणामस्वरूप उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है और रोग प्रकोप की संभावना बढ़ जाती है। रोगों की बढ़ती घटनाओं के कारण प्रतिजैविकों का अधिक उपयोग किया जाता है, जिससे जलीय वातावरण में प्रतिरोधी जीवाणुओं की संख्या बढ़ने लगती है। इसके अतिरिक्त, प्रतिजैविक अवशेष जल स्रोतों में पहुँचकर पर्यावरणीय सूक्ष्मजीवों को भी प्रभावित करते हैं तथा प्रतिरोधी जीनों के प्रसार को बढ़ावा देते हैं।

प्रतिजैविक औषधियों की बिना नियंत्रण उपलब्धता भी इस समस्या का एक गंभीर कारण है। अनेक क्षेत्रों में प्रतिजैविक आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं, जिससे मत्स्य पालक बिना उचित परामर्श के उनका उपयोग करने लगते हैं। कई बार स्थानीय विक्रेताओं द्वारा वैज्ञानिक जानकारी के अभाव में अनुचित औषधियों की सिफारिश की जाती है। इससे प्रतिरोधी जीवाणुओं के विकास की संभावना और अधिक बढ़ जाती है। वर्तमान समय में प्रतिजैविक प्रतिरोध केवल जलीय कृषि तक सीमित समस्या नहीं रह गया है, बल्कि यह मानव स्वास्थ्य, पर्यावरणीय संतुलन एवं खाद्य सुरक्षा के लिए भी गंभीर चुनौती बन चुका है। अतः प्रतिजैविकों के विवेकपूर्ण उपयोग, बेहतर प्रबंधन पद्धतियों तथा वैज्ञानिक जागरूकता के माध्यम से ही इस समस्या को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है।

जलीय कृषि में प्रतिजैविक प्रतिरोध से संबंधित प्रमुख जीवाणु

जलीय कृषि प्रणालियों में अनेक रोगजनक जीवाणुओं ने प्रतिजैविक औषधियों के प्रति प्रतिरोध विकसित कर लिया है, जो वर्तमान समय में मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन के लिए गंभीर चुनौती बन चुका है। प्रमुख प्रतिरोधी जीवाणुओं में एरोमोनास, विब्रियो, स्यूडोमोनास, एडवर्डसिएला टार्डा तथा फ्लैवोबैक्टीरियम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये जीवाणु मछलियों एवं अन्य जलीय जीवों में विभिन्न प्रकार के संक्रमण उत्पन्न करते हैं, जिनसे अत्यधिक मृत्यु दर एवं उत्पादन हानि होती है। जलीय कृषि में प्रतिजैविकों के लगातार एवं अनियंत्रित उपयोग के कारण इन जीवाणुओं में बहुऔषधि प्रतिरोध विकसित हो गया है। परिणामस्वरूप सामान्य उपचार पद्धतियाँ प्रभावहीन होती जा रही हैं तथा रोग नियंत्रण अधिक जटिल एवं महंगा बनता जा रहा है।

ये प्रतिरोधी जीवाणु टेट्रासाइक्लिन, एम्पिसिलिन, सल्फोनामाइड्स तथा क्विनोलोन्स जैसे महत्वपूर्ण प्रतिजैविकों के प्रति प्रतिरोध प्रदर्शित करते हैं। प्रतिरोधी जीनों का प्रसार जल माध्यम द्वारा अन्य सूक्ष्मजीवों में भी हो सकता है, जिससे पर्यावरणीय एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी जोखिम बढ़ जाते हैं। विशेष रूप से विब्रियो एवं एरोमोनास जैसे जीवाणु मानव स्वास्थ्य के लिए भी संभावित खतरा उत्पन्न कर सकते हैं, क्योंकि ये खाद्य श्रृंखला के माध्यम से मनुष्यों तक पहुँच सकते हैं। अतः प्रतिरोधी जीवाणुओं की नियमित निगरानी, वैज्ञानिक रोग निदान, प्रतिजैविकों का विवेकपूर्ण उपयोग तथा वैकल्पिक रोग नियंत्रण उपायों को अपनाना सतत् एवं सुरक्षित जलीय कृषि के लिए अत्यंत आवश्यक है।

प्रतिजैविक प्रतिरोध प्रबंधन एवं नियंत्रण उपाय

जलीय कृषि में प्रतिजैविक प्रतिरोध की समस्या को नियंत्रित करने के लिए प्रतिजैविकों का जिम्मेदार एवं वैज्ञानिक उपयोग अत्यंत आवश्यक है। प्रतिजैविक औषधियों का प्रयोग केवल आवश्यकता पड़ने पर तथा रोग की पुष्टि के बाद ही किया जाना चाहिए। बिना विशेषज्ञ अथवा मत्स्य चिकित्सक की सलाह के औषधियों का उपयोग प्रतिरोधी जीवाणुओं के विकास को बढ़ावा देता है। निर्धारित मात्रा एवं उपचार अवधि का पूर्ण पालन करने से रोगजनक जीवाणुओं का प्रभावी नियंत्रण संभव होता है तथा प्रतिरोध विकसित होने की संभावना कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त, बार-बार एक ही प्रकार के प्रतिजैविकों के उपयोग से बचना भी आवश्यक है, जिससे जलीय वातावरण में प्रतिरोधी सूक्ष्मजीवों का प्रसार नियंत्रित किया जा सके।

प्रतिजैविक प्रतिरोध की रोकथाम में प्रभावी जैवसुरक्षा एवं जल गुणवत्ता प्रबंधन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। तालाबों, टैंकों एवं उपकरणों की नियमित सफाई तथा विसंक्रमण से रोगजनकों के प्रसार को रोका जा सकता है। संक्रमित जीवों को स्वस्थ जीवों से पृथक रखना तथा गुणवत्तायुक्त एवं रोगमुक्त बीज का उपयोग करना भी अत्यंत आवश्यक है। इसके साथ- साथ घुलित ऑक्सीजन, pH, अमोनिया एवं अन्य जल गुणवत्ता मापदण्डों की नियमित जांच जलीय जीवों को स्वस्थ बनाए रखने में सहायक होती है। उचित जल विनिमय एवं एरेशन से तनाव कम होता है, जिससे रोगों की संभावना घटती है तथा प्रतिजैविकों की आवश्यकता भी कम पड़ती है।

वर्तमान समय में प्रतिजैविकों के विकल्प के रूप में अनेक जैविक एवं पर्यावरण-अनुकूल उपायों को अपनाया जा रहा है।

प्रोबायोटिक्स एवं प्रीबायोटिक्स जलीय जीवों की आंतों में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को प्रोत्साहित कर रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं। हर्बल प्रतिरक्षोत्तेजक प्राकृतिक रूप से रोगों के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करते हैं, जबकि टीकाकरण विशिष्ट रोगजनकों के संक्रमण को रोकने में प्रभावी सिद्ध होता है। इसके अतिरिक्त, फेज थेरेपी जैसी आधुनिक तकनीकें रोगजनक जीवाणुओं को लक्षित कर उनके नियंत्रण में सहायक हो रही हैं। प्रतिरोधी जीवाणुओं की नियमित निगरानी एवं आणविक तकनीकों द्वारा प्रतिरोधी जीनों की पहचान से प्रतिजैविक प्रतिरोध के प्रसार को प्रारम्भिक स्तर पर नियंत्रित किया जा सकता है।

प्रतिजैविक प्रतिरोध की समस्या के प्रभावी नियंत्रण हेतु मत्स्य पालकों में वैज्ञानिक जागरूकता एवं प्रशिक्षण का प्रसार अत्यंत आवश्यक है। मत्स्य पालकों को प्रतिजैविकों के सुरक्षित उपयोग, जैवसुरक्षा उपायों एवं प्रतिरोध के दुष्प्रभावों के विषय में नियमित प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। "एक स्वास्थ्य" की अवधारणा के अंतर्गत मानव, पशु एवं पर्यावरणीय स्वास्थ्य को समन्वित दृष्टिकोण से समझते हुए सतत् प्रबंधन नीतियों का निर्माण आवश्यक है। उचित प्रबंधन पद्धतियों, वैज्ञानिक अनुसंधान एवं जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से ही प्रतिजैविक प्रतिरोध की समस्या को नियंत्रित कर सुरक्षित एवं सतत् जलीय कृषि को बढ़ावा दिया जा सकता है।

निष्कर्ष

जलीय कृषि में प्रतिजैविक प्रतिरोध वर्तमान समय की एक गंभीर एवं उभरती हुई वैश्विक समस्या है, जो मत्स्य उत्पादन, पर्यावरणीय संतुलन, खाद्य सुरक्षा तथा मानव स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण चुनौती बन चुकी है। प्रतिजैविकों के अत्यधिक एवं अविवेकपूर्ण उपयोग, खराब जल गुणवत्ता, अपर्याप्त जैवसुरक्षा तथा अनियंत्रित औषधि प्रयोग के कारण अनेक रोगजनक जीवाणुओं में प्रतिरोध विकसित हो रहा है, जिससे रोग नियंत्रण कठिन एवं महंगा होता जा रहा है। प्रतिरोधी जीवाणुओं एवं प्रतिरोधी जीनों का प्रसार जलीय पारितंत्र के साथ-साथ मानव स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। अतः प्रतिजैविकों का विवेकपूर्ण उपयोग, प्रभावी जैवसुरक्षा उपाय, जल गुणवत्ता प्रबंधन, वैकल्पिक रोग नियंत्रण तकनीकों जैसे प्रोबायोटिक्स, टीकाकरण एवं फेज थेरेपी का उपयोग तथा वैज्ञानिक निगरानी एवं जागरूकता कार्यक्रमों को बढ़ावा देना अत्यंत आवश्यक है। "एक स्वास्थ्य" दृष्टिकोण के अंतर्गत मानव, पशु एवं पर्यावरणीय स्वास्थ्य के समन्वित प्रबंधन द्वारा ही प्रतिजैविक प्रतिरोध की समस्या को प्रभावी रूप से नियंत्रित कर सतत् एवं सुरक्षित जलीय कृषि को सुनिश्चित किया जा सकता है।

*

संस्थान में 01 जनवरी 2025 से 30 जून 2025 के दौरान आयोजित राजभाषा गतिविधियों का विवरण निम्नलिखित है:

I) राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकें

· संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 110 और 111वीं बैठकें क्रमशः दिनांक 06 फरवरी 2025 और दिनांक 25 अप्रैल 2025 को आयोजित की गईं।

II) हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन

- दिनांक 25 मार्च, 2025 को संस्थान मुख्यालय एवं क्षेत्रीय केंद्रों के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए भौतिक एवं ऑनलाईन माध्यम से " मानक वर्तनी एवं पारिभाषिक शब्दावली" विषय पर एक कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें राजभाषा विभाग के उपनिदेशक (कार्यान्वयन) श्रीमती गार्गी गाडगिल ने उक्त विषय पर व्याख्यान दिया।
- दिनांक 26 जून 2025 को संस्थान के निदेशक/कुलपति डॉ. एन.पी. साहू की अध्यक्षता में संस्थान के वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों हेतु "राजभाषा कार्यान्वयन : समस्या एवं समाधान" विषय पर भौतिक एवं ऑनलाईन माध्यम से एक हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें डॉ. विश्वनाथ झा, पूर्व उपनिदेशक (कार्यान्वयन), राजभाषा विभाग ने उक्त विषय पर व्याख्यान दिया।

III) राष्ट्रीय राजभाषा संगोष्ठी का आयोजन

भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई द्वारा अपने कोलकाता केंद्र में दिनांक 21-22 अप्रैल 2025 के दौरान "विकसित भारत की संकल्पना में राजभाषा प्रबंधन की भूमिका" विषय पर राष्ट्रीय राजभाषा संगोष्ठी आयोजित की गई। दिनांक 21.04.2025 इस दो दिवसीय राष्ट्रीय राजभाषा संगोष्ठी का उद्घाटन समारोह आयोजित किया गया, जिसमें भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता के निदेशक डॉ. बी.के. दास मुख्य अतिथि थे। संस्थान के निदेशक एवं कुलपति डॉ. रविशंकर सी.एन. ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। इस कार्यक्रम में केंद्र के प्रमुख डॉ. तापस कुमार घोषाल और संस्थान के संयुक्त निदेशक (राजभाषा) जगदीशन ए.के. भी उपस्थित थे।

मुख्य अतिथि ने कहा कि किसी देश के त्वरित विकास के लिए मातृभाषा का विकास भी ज़रूरी है। उन्होंने कहा कि मातृभाषा को महत्व देकर ही चीन और जापान जैसे दुनिया के कई देशों ने विकसित देश की श्रेणी में आयी है। उन्होंने यह भी कहा कि मातृभाषा के माध्यम अर्जित ज्ञान हमेशा के लिए दिमाग में बना रहता है। उन्होंने उपस्थित वैज्ञानिकों और अन्य प्रतिभागियों से आग्रह किया कि शोध पत्र हिंदी में लिखें, सरल हिंदी में वैज्ञानिक विषयों पर किताबें लिखें, जो आम किसान भी समझ सकें। हिंदी में काम छोटे-छोटे रूप में शुरु करें। अंग्रेज़ी के लिए हम ज़्यादा समय देते हैं, हिंदी के लिए भी कुछ समय देकर देखिए। आजकल कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग करते हुए भी आसानी से हिंदी में काम किया जा सकता है। हिंदी राष्ट्रीय एकता के लिए और लोगों के बीच अपनापन लाने के लिए ज़रूरी है। मन में भ्रम होता है कि हम अंग्रेज़ी ज़्यादा अच्छी तरह जानते हैं, लेकिन वास्तविकता इससे कोसों दूर है। हिंदी में काम करने के लिए प्रशिक्षण और क्षमता-निर्माण पर अधिक ध्यान देना चाहिए। एक भारत, श्रेष्ठ भारत की संकल्पना को साकार करने के लिए हिंदी की भी महत्वपूर्ण भूमिका है।

- अपने अध्यक्षीय संबोधन में संस्थान के निदेशक एवं कुलपति डॉ. रविशंकर, सी.एन. ने कहा कि भरत में बहुत-सी भाषाएँ हैं, लेकिन देश की एकता को बनाए रखने में हिंदी की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके अलावा देश की संपर्क भाषा के रूप में भी हिंदी ने अपनी पहचान बनाई है। उन्होंने उपस्थित सभी प्रतिभागियों से आग्रह किया कि हिंदी को दिल से अपनाए। उन्होंने आगे कहा कि राजभाषा के रूप में हिंदी विकास तो हुआ है, लेकिन और भी बहुत अधिक गुंजाइश है। यह संगोष्ठी इसी उद्देश्य से आयोजित की गई है। कुछ क्षेत्र में हुए विकास के संदर्भ में देखा जाए तो भारत किसी भी देश से कम नहीं है। मात्स्यिकी क्षेत्र को लें तो भारत सबसे आगे है। ऐसे ही हिंदी का भी विकास होना चाहिए। मछुआरों तक मात्स्यिकी की नवीन तकनीकियाँ पहुँचनी चाहिए। इसके लिए विभिन्न तकनीकी जानकारी हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में उपलब्ध होनी चाहिए। भारत को विकसित देश के रूप में देखना है तो इसमें हिंदी की भी महत्वपूर्ण भूमिका है।
- कार्यक्रम के प्रारंभ में भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा

संस्थान, कोलकाता केंद्र के प्रमुख डॉ. तापस कुमार घोषाल ने प्रतिभागियों का स्वागत किया और संयुक्त निदेशक (राजभाषा) श्री ए.के. जगदीशन ने दो दिवसीय संगोष्ठी की रूपरेखा प्रस्तुत की। केंद्र के वैज्ञानिक डॉ. दिलीप कुमार सिंह ने आभार प्रकट किया तथा मुख्य तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) श्री प्रताप कुमार दास ने कार्यक्रम का संचालन किया।

इस अवसर पर निम्नलिखित प्रकाशनों का विमोचन भी किया गया :

1) प्रशिक्षण मैनुअल

- मीठे पानी में मछली पालन

2) पुस्तिकाएँ

- मूल्यवर्धित मछली उत्पाद : मत्स्य उद्यमियों के लिए एक अवसर
- पश्चिम बंगाल के कार्प मछली में जीवाणु रोग का क्षेत्रीय अवलोकन
- उच्च मूल्यवाली द्विरंगी/त्रिरंगी लायनहेड गोल्डफिश के उत्पादन के लिए एक व्यवहार्य गृहस्थी मॉडल
- मिश्रित मछली पालन के लिए आहार रणनीतियाँ

उद्घाटन समारोह के बाद राजभाषा का प्रभावी कार्यान्वयन विषय पर आयोजित तकनीकी सत्र-1 के अंतर्गत कोलकाता विश्वविद्यालय के प्रोफेसर राम आह्लाद चौधरी ने "हिंदी का वैश्विक संदर्भ : विकसित भारत के परिप्रेक्ष्य में" विषय पर व्याख्यान दिया; क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, भारत सरकार, कोलकाता के उप निदेशक डॉ. विचित्रसेन गुप्त ने "राजभाषा प्रबंधन एवं कुशल कार्यान्वयन" विषय पर तथा सी.एस.आई.आर.-केंद्रीय काँच एवं सेरामिक अनुसंधान संस्थान, कोलकाता के हिंदी अधिकारी श्री संजीव कुमार सिंह ने "राजभाषा एवं इसकी संप्रेषणीयता" विषय पर व्याख्यान दिया। व्याख्यानों के बाद सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित किया गया।

दिनांक 22 अप्रैल 2025 को दूसरे और तीसरे सत्र आयोजित किए गए। "राजभाषा और अनुवाद" विषय पर आयोजित दूसरे सत्र के अंतर्गत केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, कोलकाता के पूर्व प्रभारी डॉ. नवीन प्रजापति ने "वैज्ञानिक सामग्रियों का अनुवाद एवं अनुवाद में पारिभाषिक शब्दावली का चयन" विषय पर तथा राष्ट्रीय पुस्तकालय, कोलकाता के अनुवाद अधिकारी श्री विनोद कुमार यादव ने "अनुवाद के विभिन्न साधन और कंठस्थ 2.0" विषय पर व्याख्यान दिया। "राजभाषा और प्रौद्योगिकी" विषय पर आयोजित तीसरे सत्र के अंतर्गत कोलकाता विश्वविद्यालय के प्रोफसर राम प्रवेश रजक ने "प्रौद्योगिकियों का विकास और भाषा का बदलता स्वरूप" विषय पर तथा माइक्रोसॉफ्ट भारत के निदेशक श्री बालेंदु शर्मा दाधीच ने "भाषा प्रौद्योगिकी एवं राजभाषा हिंदी तथा राजभाषा प्रबंधन में कृत्रिम बुद्धिमत्ता" विषय पर व्याख्यान दिया। डॉ. जी.एच. पैलान, डॉ. परिमल सरदार, डॉ. गौरांग बिश्वास, डॉ. तापस कुमार घोषाल, डॉ. सुजाता साहू, डॉ. हंजाबाम मन्दाकिनी देवी और श्री ए.के. जगदीशन ने विभिन्न सत्रों के अध्यक्ष रहे तथा डॉ. सुमन मन्ना, श्रीमती स्वेता प्रधान, डॉ. दिलीप कुमार सिंह, डॉ. लीसा प्रियदर्शिनी, श्री प्रताप कुमार दास, श्रीमती रेखा नायर और श्री संजीवन कुमार विभिन्न सत्रों के प्रतिवेदक रहे।

इस दो दिवसीय राष्ट्रीय राजभाषा संगोष्ठी का समापन समारोह दिनांक 22.04.2025 को कोलकाता केंद्र के प्रमुख डॉ. तापस कुमार घोषाल की अध्यक्षता में आयोजित किया गया, जिसमें कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान, कोलकाता के निदेशक डॉ. प्रदीप डे मुख्य अतिथि थे। मुख्य अतिथि ने कहा कि विकसित भारत की संकल्पना में राजभाषा प्रबंधन की भूमिका विषय पर आयोजित यह राष्ट्रीय संगोष्ठी वर्तमान समय में बहुत ही प्रासंगिक है। भारत के आर्थिक एवं सामाजिक विकास के साथ भाषा विकास भी महत्वपूर्ण है। इस संदर्भ में राजभाषा हिंदी के विकास की ओर ज़्यादा ध्यान देने की ज़रूरत है। हिंदी देश के करोड़ों लोगों की

मुख्य अतिथि द्वारा दीप प्रज्वलित करते हुए

निदेशक महोदय का संबोधन

प्रकाशनों का विमोचन

समापन समारोह के मुख्य अतिथि का संबोधन

मातृभाषा है। अपनी-अपनी मातृभाषा में ही प्रारंभिक पढ़ाई होनी चाहिए। इस दिशा में भारत सरकार द्वारा लाई गई नई शिक्षा नीति एक सफल कदम है। उन्होंने प्रतिभागियों से आग्रह किया कि राजभाषा हिंदी में ज़्यादा-ज़्यादा कार्य करें और विकसित राष्ट्र बनने की दिशा में भारत को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दें।

इससे पूर्व डॉ. दिलीप कुमार सिंह, वैज्ञानिक ने सभी का स्वागत किया और संस्थान के मुख्य तकनीकी अधिकारी श्री प्रताप कुमार दास ने संगोष्ठी की रिपोर्ट सभा के सामने रखी। डॉ. दिलीप कुमार सिंह, वैज्ञानिक ने अतिथियों व प्रतिभागियों का स्वागत किया तथा संयुक्त निदेशक (राजभाषा) श्री ए.के. जगदीशन ने आभार प्रकट किया। श्रीमती रेखा नायर, मुख्य तकनीकी अधिकारी ने आभार प्रकट किया।

IV) राजभाषा निरीक्षण

राजभाषा विभाग द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति के लिए संस्थान के रोहतक स्थित क्षेत्रीय केंद्र का राजभाषा निरीक्षण दिनांक 28 मई 2025 को संस्थान के वित्त नियंत्रक श्री रजनीश कुमार सिंह द्वारा किया गया।

V) हिंदी जलवाणी पाठ्यक्रम

इस संस्थान में छात्र-छात्राओं के लिए मात्स्यिकी विषय से संबंधित उच्च शिक्षा प्रदान की जाती है। इन छात्र-छात्राओं को हिन्दी का ज्ञान बढ़ाने हेतु इस संस्थान के एम.एफ.एससी. के प्रथम वर्ष के छात्र-छात्राओं के लिए वर्ष 2003 से नियमित रूप से हिन्दी जलवाणी नामक पाठयक्रम संचालित किया जा रहा है। पाठयक्रम की रचना इस प्रकार से की गई है कि हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखनेवाले और नहीं रखनेवाले छात्र-छात्रा अलग-अलग समूहों में इसका अध्ययन कर सकें। इसी क्रम में, सत्र 2024-26 का हिन्दी जलवाणी पाठयक्रम संचालित किया गया, जिसमें कुल 97 छात्रों का नामांकन किया गया।

*

लेखकों का विवरण

1. **जलवायु परिवर्तन का भारतीय मात्स्यिकी पर प्रभाव : क्षेत्रीय भिन्नताएँ और उत्पादकता चुनौतियाँ**
विनोद कुमार यादव, चांदनी प्रकाशभाई दवे, महेश शर्मा, विद्याश्री भारती और अर्पिता शर्मा
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

2. **मत्स्य पालन प्रौधोगिकी : विकास एवं अंगीकरण**
अंकुश कांबले, अंशु सुरीन, निशांत कुमार, शिवाजी अरगड़े
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

3. **जलकृषि में स्वास्थ्य प्रबंधन**
डॉ .अरुण शर्मा, डॉ. टी.आई .चानू
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

4. **जलवायु परिवर्तन और इसका वैश्विक मत्स्य पालन क्षेत्र पर व्यापक प्रभाव**
प्रगति पुष्प
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

5. **जलवायु परिवर्तन एवं खाद्य सुरक्षा : सामाजिक – आर्थिक सुमेद्रयता सूचकांक का महत्व एवं उपयोग**
चांदनी प्रकाशभाई दवे, महेश शर्मा, विनोद कुमार यादव, *विद्या श्री भारती* और अर्पिता शर्मा
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

6. **जैविक उपचार – जलकृषि में इसका अनुप्रयोग**
केन्युम लोलेन, सुखम मुनिलकुमार, कपिल सुखधाने, सत्य प्रकाश
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

7. **अलंकारी मछली के पोषक तत्वों की आवश्यकता और खाद्य सूत्रीकरण**
केदार नाथ मोहंता, सिकेन्दर कुमार, मनीष जयंत, शामना एन., साईप्रसाद भुसारे और समीक्षा मिश्रा
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

8. **भारत में कार्प मछलियों के आनुवांशिक सुधार के लिए चयनात्मक प्रजनन**
कृति कुमारी, किरण रसाल, अंगोम लेनिन सिंह, मुजाहिदखान ए पठान, हर्षावर्तिनी एम.
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

9. **ब्लू कार्बन क्रेडिटःजलवायु परिवर्तन के लिए एक प्रकृति-आधारित समाधान**
रंजना चैधरी एवं विनोद कुमार यादव
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

10. **शाहपुरा झील, भोपाल, मध्य प्रदेश में सीवेज-फेड-मत्स्य पालन की स्थिति**
नीलम नर्रे, सुमन मन्ना, पूजा रोड़गे, स्वेता प्रधान, हंजाबम मन्दाकिनी देवी
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

11. **पर्यावरणीय स्वास्थ्य और वैश्विक खाद्य सुरक्षा के लिए एक माइक्रोप्लास्टिक उभरता हुआ ख़तरा**
श्याम दत्ता वाघमारे
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

12. **आर्द्रभूमि संरक्षण और इसका महत्व**
भारती साहू, राजेश कुमार, विपुल सिंह बड़गुजर
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

13. **ट्रॉलिंग द्वारा मछली पकड़ना और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र पर इसका नकारात्मक प्रभाव**
शीतल कनुभाई भरड़ा, करणकुमार रामटेके, मुकेशकुमार भेंडारकर, राजेश कुमार, मुज़ाम्मल हक, और साहिना अख्तर
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

14. **पर्यावरणीय डीएनए : जैव विविधता की खोज का नया युग**
संजीव कुमार सिंह, मुकुंदा गोस्वामी, बी .के. दास, म.यशवंत बाबू, निदर्शन एन.सी.
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

15. **भारत में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ाने के लिए ब्लू इकोनॉमी (नीली अर्थव्यवस्था) की क्षमता**
मुजाम्मल हक, आशा लांडगे, करणकुमार रामटेके, केशम गेनिता और भरदा शीतल कनुभाई
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

16. **कॉमेट परीक्षण : पर्यावरणीय आनुवांशिक विषाक्त रसायन से जलीय जीवो में होने वाले कुप्रभाव की निगरानी हेतु उपयोगी तकनीक**
जयश्री एस. शेलके, कृतिकुमारी, हर्षवर्धिनी एम, नरेश एस. नागपुरे
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

17. **महाराष्ट्र का तटीय जल: एक अनूठी विरासत और जैव विविधता का केंद्र**
कैशम गीनिता, राजेशकुमार, मुज़म्मिल हक़ और करणकुमार रामटेके
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

18. **किसान क्रेडिट कार्ड: मत्स्यपालन और जलीय कृषि क्षेत्र में वित्तीय सशक्तिकरण की पहल**
अक्षता थवई, शिवाजी अरगडे एवं आर. परमशिवम
भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

19. **6PPD-वाहन टायर के घटकलिए बढ़ता खतरा जलीय कृषि और मत्स्य पालन के :**
साहिना अख्तर और करणकुमार रामटेके
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

20. **डोलजाल : मछली पकड़ने की परंपरा और चुनौतियाँ**
राजेश कुमार, करणकुमार रामटेके, अबुथागीर इबुराहीम, भारती साहू, विपुल सिंह बड़गुजर
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

21. **बिहार में मखाना की खेती: स्वास्थ्य और समृद्धि का अटूट सेतु**
रवि शंकर कुमार, सबा नबी , तेंजी पेम भूटिया
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

22. **महाराष्ट्र के उज्जनी जलाशय में भूमि उपयोग गतिकी का कार्बन पृथक्करण एवं मत्स्य प्रावधान सेवाओं पर प्रभाव का आकलन**
महेश शर्मा, विनोद कुमार यादव, चांदनी प्रकाशभाई दवे, लिटन पॉल,मोहम्मद मेहारूफ़ एवं विद्या श्री भारती
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

23. **मत्स्य पालन में वृद्धि एवं प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में न्यूट्रास्यूटिकल का उपयोग**
लीसा प्रियदर्शनी, दिलीप कुमार सिंह, मंदाकिनी देवी हंजाबम, सोनालिका साहू, धालोंगसाई रियांग, सुजाता साहू, सुमन मन्ना एवं तापस कुमार घोषाल
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

24. **हमारी मछलियाँ आहार क्यों नहीं खा रही हैं? इसके कारण एवं निदान**
दिलीप कुमार सिंह, सुजाता साहू, सुमन मन्ना, गौरांग बिस्वास, तापस कुमार घोषाल, एवं शिवाजी डी. अरगड़े.
भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

25. **राष्ट्रीय मत्स्य डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म: अंकीय नवाचार के माध्यम से भारत के मत्स्य क्षेत्र का रूपांतरण**
महेश शर्मा[1] एवं डॉ. स्वदेश प्रकाश[2]
[1] भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई
[2]भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

26. **जलीय परिस्थितिकी तंत्र में तापीय तनाव : कारण, परिणाम और नियंत्रण उपाय**
विद्याश्री भारती, अंकिता नामदेव, शामिका शांतारम सावंत, तावो कारा एवं विनोद कुमार यादव,
भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

27. **अपशिष्ट जल उपचार के लिए संशोधित बायोचार एक कदम :हरित भविष्य की ओर**
शमिका शांताराम सावंत,विद्या श्री भारती,सत्य प्रकाश शुक्ला, विनोद कुमार यादव एवं
दीपाली भण्डारी
भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

28. **इलेक्ट्रॉनिक्स अपशिष्ट एवं जलवायु परिवर्तन : भारतीय परिप्रेक्ष्य में चुनौतियां, प्रभाव एवं सतत समाधान**
ऋषिकेश कदम, सौरव कुमार, के. नागेन्द्रसाई एवं रानी सामलिन
भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

29. **जलीय कृषि में प्रतिजैविक प्रतिरोध : चुनौतियाँ, प्रभाव एवं प्रबंधन**
सत्येंद्र सिंह, मेघा बेडेकर एवं महेश शर्मा
भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

भाकृअनुप –के.मा.शि.सं मुख्यालय/केंद्र

कोलकाता केंद्र

32, जी एन ब्लॉक, सेक्टर-V,
साल्ट लेक सिटी, कोलकाता,
पश्चिम बंगाल - 700 091
kolkata@cife.edu.in
फोन: 033 - 2357 3893
फैक्स: +91 033-2357 5269

काकीनाडा केंद्र

ओल्ड बर्मा शेल के पास,
बीच रोड, काकीनाडा, आंध्र प्रदेश
पिन 533 007
kakinada@cife.edu.in
फोन: 0884-2376746
फैक्स: +91 0884-2373602

रोहतक केंद्र

लाहली, अनवल,
रोहतक - 124 411, हरियाणा
rohtak@cife.edu.in
फ़ोन: 01258 - 253595 / 253506
फैक्स: +91 01258-253506

पवारखेड़ा केंद्र

पवारखेड़ा, जिला। होशंगाबाद,
मध्य प्रदेश - 461 110
powarkheda@cife.edu.in
फोन: 07574-227280
फैक्स: +917574 227208

मोतीपुर केंद्र

गन्ना अनुसंधान केन्द्र का क्षेत्रीय केंद्र
मोतीपुर, जिला। मुजफ्फरपुर, बिहार
पिन 843 111,
motipur@cife.edu.edu.in
फोन: 9004864708

भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान

(समतुल्य विश्वविद्यालय)

पंच मार्ग, ऑफ यारी रोड, वरसोवा, अंधेरी (प.) मुंबई - 400061